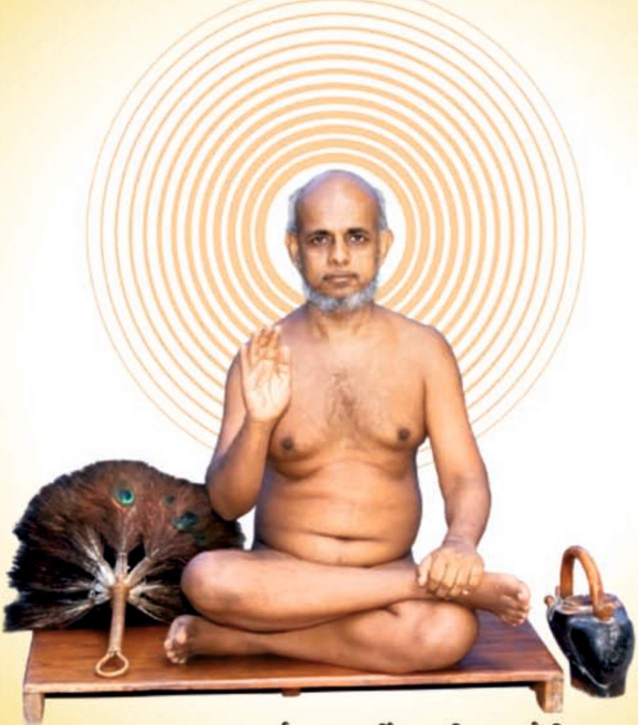

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971
* मुनिदीक्षा–11–05–1989
* आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

श्री भैरव पद्मावतीकल्प

ग्रन्थकर्त्ता

परम पूज्य आचार्यश्री मल्लिषेण जी महाराज

हिन्दी-टीकाकार

परम पूज्य आचार्यश्री कुन्थुसागर जी महाराज

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन कुन्थुविजय ग्रन्थमाला समिति

जयपुर (राजस्थान)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त-शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त-चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या-चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि-परिवार

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति

ग्यारहवाँ पुष्प

श्री भैरव पद्मावती कल्प:

श्री कवि शेखर मल्लिषेणाचार्य विरचित:

(हिन्दी विजया टीकाकर्त्ता)

परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुन्थुसागरजी महाराज

प्रकाशन संयोजक

शान्ति कुमार गंगवाल

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति

कार्यालय

1936, कसेरों की गली, घी वालों का रास्ता, जौहरी बाजार,

जयपुर–302 003 (राजस्थान)

सावधान !   खतरा !   सावधान !

सर्वप्रथम मेरे विचार पढ़िये फिर आगे बढ़िये

ग्रंथ के टीकाकर्त्ता परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य वात्सल्य रत्नाकर, श्रमणरत्न, स्याद्वाद केशरी कुंथुसागरजी महाराज के विचार एवं आशीर्वादात्मक मंगल वचन।

इस अनादिनिधन जिनधर्म में द्वादशांग रूप श्रुतागम श्री भगवान आदिनाथ से लेकर महावीर पर्यन्त तीर्थङ्करों ने अपनी दिव्यध्वनि द्वारा प्रतिपादित किया, और उस वाणी को गणधरों ने ग्रंथित कर जन-जन तक पहुंचाया। उसी जिनागम को ही श्रुत केवली और आचार्यों ने भी लिखित रूप से प्रतिपादित किया। वह जिनागम ११ अंग और १४ पूर्व में वर्णित है। वर्तमान में जितना भी आगम मिलता है वह सब दृष्टिवाद अंग का ही सार है। यह जिनागम अभी तक आचार्य परम्परा से सुरक्षित यहां तक आया है, इसकी सुरक्षा करने की जिम्मेदारी हम लोगों की है।

वर्तमान में जीवों का परिणाम बहुत निकृष्ट हो गया है। आगम की बातों को मान्य नहीं करना चाहते। मेरा है वही ठीक है। मेरा मंतव्य ही सच्चा है। अपनी मान्यता को ही पुष्ट करना चाहते हैं। चारित्र संयम से दूर होते जा रहे हैं। आगम के ऊपर विश्वास नहीं है। सब तरफ संशय ही का बोलबाला है। संशय मिथ्यात्व का ही ज्यादा जोर हो गया है। वर्तमान में कोई किसी की सही बात मानने को तैयार नहीं। लोगों ने जिनागम को ही तोड़-मरोड़कर रख दिया। और फिर वैसा ही अर्थ लगाते हैं। द्वादशांग तो नष्ट हो चुका। जो भी है वह भी नष्ट होता जा रहा है उपेक्षा बुद्धि से। मैंने अनेक

जगह विहार किया। अनेक शास्त्र भण्डार देखे, और उन शास्त्र भण्डारों में पाये जाने वाले अनेक प्रकार के आगम हैं, जिनकी अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण अवस्था हो रही है और कीड़ों का आहार बन रहे हैं। और जिसमें सबसे अधिक दयनीय दशा मंत्र शास्त्रों की हो रही है। मैंने देखा, मंत्र शास्त्रों की हालत खराब हो रही है इसलिये इनको एक जगह संकलित कर दिया जाये। इस भावना से यह कार्य प्रारम्भ किया, और थोड़े ही दिनों में पूर्ति करके लघुविद्यानुवाद ग्रंथ के रूप में प्रकाशित करवा दिया। मेरा यह अभिप्राय कभी भी नहीं था कि दि. जैन समाज का इससे अहित हो। यह बात तो परम सत्य है कि द्वादशांग में १० नं. विद्यानुवाद पूर्व है जो जिनागम में चूलिका के ५ भेद हैं। उनमें जलगता, आकाशगता भूमिगता, मायागता तथा स्थलगता है। इन सब जिनागमों में यंत्र, मंत्र, तंत्र हैं जिससे कि जीव भूमि में प्रवेश कर सके। नाना प्रकार के रूप धारण कर सके। आकाश में गमन कर सके। जल पर चल सके। आदि विद्यानुवाद पूर्व में ५०० महाविद्या और ७०० क्षुद्र विद्या का वर्णन है ही, इसको कोई भी विद्वान नकार नहीं सकता।

मनुष्यों के दो भेदो में विजयार्द्ध पर रहने वाले विद्याधर मनुष्य हैं और वे लोग जिनागम में वर्णित मंत्र की साधना करते हैं। इसलिए विद्याधर कहलाये। तो क्या यह सब झूठ है? कुछ नास्तिकवादी विद्वानों का कहना है कि यह सब झूठ है। हमारे यहां कोई मंत्र शास्त्र नहीं है। मैं भी कहूंगा कि ये सब विद्वान भी झूठे हैं। हमसे संकलित लघुविद्यानुवाद पूर्व को लेकर बहुत ही अफवाहें मचायी जा रही हैं, जिसमें कि अफवाह का कोई कारण नहीं है। मैं तो मात्र संकलनकर्त्ता हूं न कि रचयिता।

जहां मंत्र शास्त्र का विषय है, वहां शुद्धाशुद्ध पदार्थों का वर्णन आता ही है उसमें मेरा कोई अपराध नहीं, न ही मैंने दि० परम्परा को क्षति पहुंचाने सरीका कार्य ही किया है। किसी भी विद्वान की दृष्टि इधर नहीं थी, सो मैंने लिखा। अभी भी मेरा समाज के विद्वानों को कहना है कि लघुविद्यानुवाद आपको ठीक नहीं जंचता है तो शास्त्र भण्डारों में पड़ा रहने दो। यह तो मंत्र शास्त्र है इसमें तो सब प्रकार का वर्णन आएगा ही। इसमें कमी बेसी करना हमारे बस की बात नहीं थी। फिर भी मैंने तो मेरे आशीर्वादात्मक वचन में सब कुछ स्पष्ट कर दिया। मैंने अकेले ने तो कोई नया कार्य नहीं किया पूर्वाचार्यों ने भी मंत्र शास्त्र लिखे हैं, उसमें हस्तलिखित विद्यानुवाद भैरव पद्मावति कल्प, ज्वालामालिनि कल्पः, सरस्वती कल्पः, काम चांडालिनि कल्पः, अंबिका कल्प, घंटाकर्ण, महावीर कल्पः आदि अनेक मंत्र शास्त्र, शास्त्र भण्डारों में विराजमान हैं। कुछ सूरत से, कुछ श्वेताम्बरों के यहां से प्रकाशित भी हो गये हैं। विद्वानों को मुझ से ही इतना द्वेष

क्यों? मैंने तो साहित्योद्धार का ही कार्य किया है। विद्वानों की दृष्टि अवगुणों के प्रति ही क्यों ? गुण ग्राहक बनना चाहिए। पत्थर की मूर्त्ति भी बना सकते हो और किसी का सिर भी फोड़ सकते हो। कुंआ खुदवाने वाला इसलिए नहीं खुदवाता कि कोई उसमें पड़कर मर जावे। कोई अविवेकी पानी पीने को छोड़कर, उसमें पड़कर मरे तो कुंआ खोदने वाले का क्या अपराध? इसी प्रकार मेरे द्वारा संकलित किया हुआ मंत्र शास्त्र लघुविद्यानुवाद है कोई अविवेकी इस मंत्र शास्त्र का दुरुपयोग करे तो मेरा क्या अपराध ? मैंने तो सब लिख दिया। विद्वानों को सोचना चाहिए। मंत्र शास्त्र का अवर्णवाद को ठीक करना चाहिए। क्या उसमें सब ही मंत्रादि लोगों का अहित करने वाले हैं? मेरी तो समझ से करीब १ प्रतिशत को छोड़कर ६६ प्रतिशत मंत्र अच्छा है और लोकोपकारी है। जहां अच्छाई है वहां बुराई भी होती है। बुराई की ओर दृष्टि तो दुर्जनों की ही होती है, सज्जन साधु संत तो अच्छाई को ही देखता है। ग्राम शूकर को मिठाई भी डालो, तो भी विष्टा की ओर ही दृष्टि रहती है। वैसे ही दुर्जनों की दृष्टि होती है। दुर्जनों को शूकर बुद्धि का त्याग करना चाहिए।

विभिन्न मंत्र शास्त्रों में से भैरव पद्मावती कल्पः भी एक मंत्र ग्रंथ है। यह पहले सूरत से छप चुका है तो भी मैंने नई टीका संस्कृत के ऊपर तैयार किया है। यह दिखाने के लिये कि आचार्य कृत मंत्र शास्त्र में भी अशुद्ध द्रव्यों का वर्णन है। मैंने अपने मन से कुछ नहीं लिखा। विद्वान देखकर समीक्षा करें। नहीं तो मंत्र शास्त्र जो कि जिनागम का अंग है वही नष्ट हो जाएगा। या तो आप विद्वान कुछ करके दिखायें अथवा मैंने जो संकलित किया है उसको स्वीकार करिये। मैं और भी मंत्र शास्त्रों पर लिखने वाला हूं। दुर्जन लोग कितनी भी हमारी बुराई करें, पेड़ को पत्थर मारने से वह पेड़ फल ही देता है। मुझे किसी का भय नहीं। अपनी अपनी रुचि। मैं कोई पाप कार्य नहीं कर रहा हूं। ऐसा वर्णन क्यों है ? यह तो पूर्वाचार्यों को पूछो, मंत्र वेधक शास्त्रों में वर्णन मिलता ही है। अब मंत्र शास्त्रज्ञों के लिये यह ग्रंथ तैयार है। देखिये साधना कर जिनागम की तथा जिनधर्म की रक्षा कीजिये। केवल चिल्लाने, बुराई करने, किसी को बदनाम करने से काम नहीं चलेगा। पहले भी मंत्र शास्त्रों के बल से विद्या सिद्ध कर जिन धर्म की रक्षा महापुरुषों ने की है, तब ही आज हम लोग जीवित हैं। इतिहास उठाकर देखिये, मैंने इस ग्रंथ की टीका को सूरत से छपने वाला पद्मावती कल्पः, अहमदाबाद से छपने वाला पद्मावती उपासना हस्त लिखित दोनों प्रतियों से किया है। मैंने उनकी बहुत सहायता ली है इसलिये उन ग्रंथों का उपकार मानता हूं। मंत्र शास्त्रों की शुद्धि करना बड़ा कठिन कार्य है और जितने ग्रंथ उतने ही अलग-२ पाठ भेद होने के

बावजूद भी पूर्ण शुद्ध करने का प्रयत्न किया है। फिर भी अवश्य ही अशुद्धि छद्मस्तता के कारण रह गई होगी, उसको मंत्र शास्त्रज्ञ शुद्ध कर अवश्य ही पढ़ेंगे। मुझे तो क्षमा करें। मैं तो अभी भी इस बात को कह रहा हूं कि जो मंत्र शास्त्रज्ञ नहीं हैं जिनको इस विषय में थोड़ा भी ज्ञान नहीं है वे मेरे मंत्र शास्त्रों को हाथ नहीं लगावें। क्योंकि श्रद्धा रहित व्यक्ति का बिगाड़ ही होगा, इस मंत्र शास्त्र में भी, मारण, उच्चाटन, स्तम्भन, वशीकरण आदि प्रकरण हैं। साधक सावधानी से रहे, योग्यता है तो करे नहीं तो दूसरे को हानि पहुंचाने का कार्य कभी नहीं करे। करेगा तो उसकी जिम्मेदारी उसी के ऊपर रहेगी, हमारी कोई जिम्मेदारी नहीं।

हम टीकाकर्ता दूसरे को हानि पहुंचाने हेतु कार्य की आज्ञा नहीं देते हैं। प्रकरण वश लिखना पड़ा है। हमारा स्वतन्त्र कोई ऐसा विचार नहीं है। मंत्रशास्त्र विषय ही ऐसा है। आचार्य मल्लिषेण, आचार्य इन्द्रनन्दी, ऐलाचार्य आदि लोगों ने मंत्र शास्त्रों की रचना की है। उन्हीं के आधार पर हमने लिखा है। पढ़े और समझे, मेरा कार्य तो सिर्फ मंत्र शास्त्रों का उद्धार करना मात्र है। अज्ञानी मिथ्यादृष्टि, संशयी आदि व्यक्तियों को इस शास्त्र के मंत्र का दान नहीं करे, करेगा तो बाल हत्या, मुनि हत्या का पाप लगेगा। पूरा विषय मंत्रों के लक्षण में देख लेवे।

इस शास्त्र के छपने में जिन-२ दातारों ने सहायता की है उनको मेरा पूर्ण आशीर्वाद है। ग्रंथ की टीका लिखने आदि कार्य में मेरे शिष्य प्रवर्तक मुनि श्री १०८ पद्मनन्दी जी ने बहुत परिश्रम किया है उनको भी मेरा आशीर्वाद है। हमारी ग्रंथमाला के कर्मठ कार्य-कर्त्ता गुरुभक्त श्री शान्तिकुमार जी गंगवाल व उनके सुपुत्र प्रदीपकुमारजी तथा अन्य सहयोगी कार्यकर्त्ताओं को मेरा पूर्ण आशीर्वाद है, कि वे इसी प्रकार कार्य करते रहें।

अन्त में पुनः मेरा आदेश है कि इस मंत्र शास्त्र से पूर्ण सावधान रहे, नहीं तो बहुत ही खतरा पैदा हो जाएगा। नहीं पसन्द तो मध्यस्थ रहे। अयोग्य व्यक्ति को मंत्राराधना नहीं करनी चाहिये। जो दूसरे को हानि पहुंचायेगा, उसको ही हानि हो जाएगी।

सावधान ! सावधान ! सावधान !

गणधराचार्य कुन्थुसागर

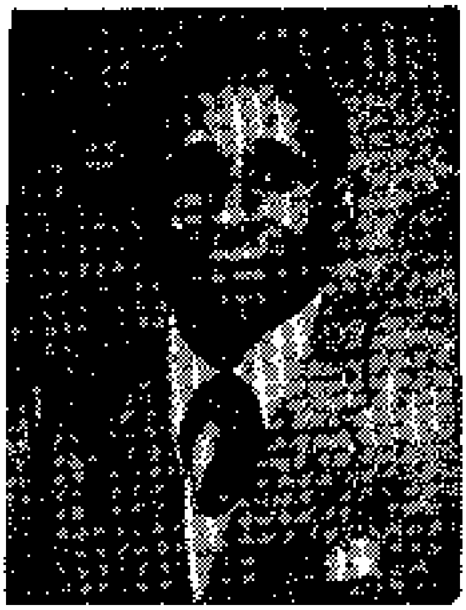

* प्रस्तावना *

अनंत आकाश में ध्वनित–गुंजित–निनादित प्रवहमान ध्वनि (भः रव) भैरव ही है। दिव्य अलौकिक ॐकार स्वरूपा ध्वनि-रव को जैनागम में दिव्य ध्वनि कहा गया है। वैदिक विचार में ध्वनि आकाश का गुण है एवं जैन दृष्टि में वह पुद्गल पर्याय है। दिव्य ध्वनि का पर्याय ही भैरव है।

पद्म नाम कमलवाची है और मानव शरीर में इनकी स्थिति–कोषों, पिंडों एवं चक्रों के स्वरूप में प्रदर्शित है–जिसकी पुष्टि-योग-ध्यान-तंत्रागम के शास्त्र एवं षट्चक्र–अष्टदल–विद्या, आत्मविद्यादि शास्त्रों में वर्णित है। कुंडलिनी योग और योग दर्शन में इनका विस्तृत–सूक्ष्म विवेचन मिलता ही है।

पद्मावती–कमलावती–कमलाकर–आकारों के ये कोष शरीर स्थित हैं। इन पर देव-देवांगनाओं के भवन–विमान–आयु–आकार–रंग–रूप एवं नामकरण का जैन शास्त्रों में विस्तृत विवेचन है। मोक्षशास्त्र तत्वार्थसूत्र में उमास्वामी ने "तन्त्रोवासि-श्री-ह्री धृति कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्मी-पल्योपमा स्थितियाँ–।" सूत्र संकेत द्वारा इनकी पुष्टि की ही है सो प्रत्येक जैन को जो सामान्य ज्ञान ही रखता है, ज्ञातव्य है।

आधुनिक विज्ञान की सामान्य दृष्टि में मानव-शरीर-मन-आत्मा अर्थात् Body+Mind+Soul की त्रिकुटि है। तंत्रागम-शैवशास्त्र, शाक्तमत पुरा-

विद्या में इन्हें तंत्र-मंत्र-यंत्रादि शब्दों से निरूपित किया है। सामान्य अशिक्षित जनता दैनिक व्यवहार में इन्हें तन्तर, मन्तर, जन्तर कहती है बालबोध की दृष्टि से समझा जा सकता है कि तन्तर = (तंत्र) वह है। जो तनु-शरीर को-तरा-वट, पुष्टि-सुख-वृद्धि-ओज-शक्ति-वृद्धि दायक हो वह ही तंत्र है, इसी प्रकार मन्तर=(मंत्र) वह शक्ति-विद्या-ध्वनि, वाणी, बीज अक्षर-शब्दवर्गणा है जो मन को प्रसन्न मस्त, आल्हादित करें एवं मस्ती में—मौज में डुबो दे तदनुसार ही जन्तर -जंत्र-(यंत्र) वह है जो यन्त्र या वाहन, यथासमय, हमें अपने निर्दिष्ट गंतव्य स्थल लक्ष्य, उद्देश्य अथवा मंजिल-मुकाम पर पहुँचा देवे। इस प्रकार ये तीनों ही (तंत्र-मंत्र-यंत्र) शरीर और मन को यथास्थिति आत्ममय कोष में अर्थात्—शुद्ध सच्चिदा नंद—आत्मस्वरूप में स्थित करते हैं, एवं मानव की मुक्ति के कारण हैं। जीवन-जगत की समस्याओं से जीवमात्र को त्राण देना एवं मानव की लौकिक-दैविक, दैहिक आधिभौतिक समस्याओं को हल करके उसे आत्मस्वरूप में स्थित करना ही कल्प एवं तंत्र-मंत्र-यंत्रागम शास्त्रों का उद्देश्य है।

एतद्विषयक जैन शास्त्रागारों में विपुल सामग्री अप्रकाशित बिखरी पड़ी है। विद्यानुवादपूर्व लघुविद्यानुवाद पूर्व, चक्रेश्वरी कल्प, ज्वालामालिनी कल्प, भक्तामर-मंत्र-तंत्र-यंत्र कल्याणमंदिर, विषापहारादि के अनेक कल्प श्वेताम्बर दिगम्बर दोनों आम्नायों में तो हैं ही; यति, भट्टारक एवं तारण पंथी साहित्य में भी हैं। इसी कड़ी में सर्वाधिक-प्रभावशाली-प्रसिद्ध-भैरव पद्मावती कल्प है जो प्रस्तुत कृति आपके सम्मुख है।

जिस प्रकार परमाणु परागों के आकर्षण, विकर्षण, मिलन विघटन एवं सम्मेलन से जगत के नाना नवीन पदार्थों रूपों शरीरों की उत्पत्ति एवं सृष्टि होती है एवं उनकी शक्ति—प्रभाव और स्वरूप भी भिन्न भिन्न होता है, उसी प्रकार रसों, गंधों, वर्णों, जड़ी बूटियों, वनस्पतियों के 'पारस्परिक' मिलन से अनेक औषधियाँ-रस-मात्राएँ एवं आसव, अरिष्ट, अवलेह, बनाते हैं एवं समय विशेष तथा किरणों के प्रभाव सूर्य-चंद्र-राहु-केतु-ग्रहण-पर्व-योग के समय ये ही—औषधियाँ, रस एवं जड़ी बूटियाँ एवं इनके तिलक, लेप, प्रयोग अनेक प्रकार की अद्भुत शक्ति सम्पन्नता प्राप्त करके सम्मोहक, विद्वेषक, उच्चाटक, मारक, वशीकर्त्ता बन जाते हैं।

पूर्णिमा-अमावस्या को चंद्र रश्मियों के प्रभाव से ज्वार-भाटा से उत्पन्न विक्षोभ-पागलपन, हिस्टीरिया, मूर्च्छा, प्रेतबाधादि रोगों के साथ-साथ, कवित्व, कला, मंत्र-तंत्रादि शक्तियों का प्रादुर्भाव आधुनिक-भौतिक विज्ञान-वेत्ताओं ने तो सिद्ध ही कर दिया है, किंतु प्रतिमाह कृष्ण पक्ष एवं शुक्ल पक्ष की तिथियों में विलोम प्रतिलोम वृद्धि-ह्रास रूप नख से शिखा तक तथा शिखा से नख तक के विविध अंगों पर प्रभावों का प्राचीन-योग सिद्ध विवेचन विचारने को भी बाध्य कर दिया है ।

त्रेसठ शलाका पुरुष सोलह कलाधारी श्री कृष्ण की अद्भुत चमत्कारिक सिद्धियों, ऋद्धियों, वशीकरण रूप परिवर्तन एवं नृत्य-गायन-हरण आदि लीलाओं के कारणों पर भी विदेशी मूर्धन्य चिंतकों ने विचार कर तंत्र मंत्र शक्ति की अलौकिक क्षमता और शक्ति पर प्रकाश डाला है । ये शक्तियाँ मनोविज्ञान परामनोविज्ञान, अलौकिक विद्या-विज्ञान, अदृश्य विज्ञान, अव्याख्येय विज्ञान (UNEXPLAINED) नामक ग्रंथों के अध्ययन से समझी जा सकती है ।

अंग्रेजी, चीनी, तिब्बती, यूनानी, अरबी, फारसी के अनेक ग्रंथों के अध्ययन, मनन, चिंतन के आधार पर एवं विश्वविख्यात तिब्बती योगी—लेखक टी. लॉग साम राम्पा के Third eye you, FOR EVER, Touch Stone एवं मिश्र के पिरामिडो एवं रहस्य ग्रंथों CHARMS & TALISMAN आदि ग्रंथों के सूक्ष्म आलोड़न, बिलोड़न के बाद यह मानने को बाध्य होना पड़ता है कि तिब्बती तंत्र ओझा विद्या कामाक्षा तंत्र सूर्य रश्मि विज्ञान, क्रोमोपैथी तथा होम्योपैथी के (HAIR Trans) बालों पर औषधि प्रयोग एवं पुष्पों द्वारा चिकित्सा के सर्वसम्मत प्रयोग राशिया के चिकित्सा शास्त्री एवं विज्ञान साधकों ने अंतरिक्ष यात्रियों पर प्रयोग करके हमारी भारतीय—तंत्र-विद्या को ही जीवित और सिद्ध कर दिया है । एवं मल्लिषेण की प्रस्तुत कृति को पुष्टि और बल भी प्रदान किया है ।

कुछ विद्वान आलोचक शुद्धि-अशुद्धि के नाम पर छिद्रान्वेषण आलोचना करके तंत्र साहित्य और लघुविद्यानुवाद के प्रयोगों पर आक्षेप करते हैं, किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि आत्मतत्व और अनात्मतत्व के द्विविध इस संसार में शुद्धि-स्वच्छता तथा सफाई-पवित्रता-मात्र देशकाल एवं भौगोलिक सीमा तथा

जलवायु और शीत-उष्ण कटिबंध की अपेक्षा से ही है। प्राचीन एवं आधुनिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विज्ञान ने कैंसर, दमा, श्वांस, हृदय, प्रदर, उन्माद, हिस्टीरिया आदि रोगों के लिए–गोमूत्र, स्वमूत्र, मानव मूत्र, गोबर, लेंडी के असंख्य सफल सिद्ध प्रयोग कर लिए हैं एवं मानव प्राणों की रक्षा की है। इस पर अद्भुत साहित्य इन दिनों प्रकाशित हो चुका है, जो तंत्र की सिद्धि का जीवित उदाहरण है।

ज्योतिष में पुष्यादि नक्षत्रों के विभिन्न तिथियों, योगों, वारों के जो शुभ अशुभ मुहूर्त–अमृतसिद्धि, राजयोग, यमघंट, विषयोग आदि बनते हैं–उनके औषधि निर्माण एवं औषधि प्रयोग के जो भिन्न-भिन्न फल मिलते हैं, उन्हें भी अमेरिका, रूस, जर्मनी के किरणरश्मि–विज्ञानवेत्ताओं ने सिद्ध कर दिया है एवं हमें स्मरण करा दिया है कि भारतीय ऋषि, चिकित्सक आचार्य, चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट, धनवंतरि, लुकमान, नागार्जुन द्वारा प्रयुक्त शरदऋतु की शरद पूर्णिमा के चद्रमा की अमृत किरणों में निर्मित घी, तैल, अवलेह, चूर्ण, रस, गुटिका–गोलियाँ अद्भुत रोगनाशक शक्तिदायक रसायन हैं। दूध, घी, जटामांसी, अर्जुन, पीपल, बड़, बेल, हरड़, आँवला, कालीमिर्च, खोपरा, गोखरू, मालकांगनी एवं आंधीभाड़ा आदि जड़ी बूटियों–वनस्पतियों के प्रभाव और फल विशेष बढ़ जाते हैं। यह अनुभव सिद्ध एवं वैज्ञानिकता पूर्ण सिद्ध हो चुका है। मानसिक रोगियों को केशर, जायपत्री, बच, मुलेठी, कस्तूरी, शंखपुष्पी के प्रयोग–लेप हमें प्रस्तुत ग्रंथ के वशीकरण, मोहन तिलक आदि की सिद्धि एवं वैज्ञानिकता पर सोचने को बाध्य करते हैं। अंगराग–चंदन–केशर–कपूर एवं सुगंधित लेप क्या आकर्षण–विकर्षण, सम्मोहन यथाशक्ति नहीं करते हैं? इसी प्रकार–नाखून, दांत, बाल, विष आदि के प्रयोग भी यदि मात्रानुकूल हैं तो ये ही विष–अमृतमय होकर असाध्य रोगों से मुक्ति दिलाते हैं। होम्योपैथी की सूक्ष्म चिकित्सा पद्धति क्या हमारी तांत्रिक एवं भैरव पद्मावती कल्पादि के अष्टांग विधानों के समान अत्यन्त सूक्ष्म, बुद्धिपूर्ण, वैज्ञानिक तथा उपयोगी नहीं है?

इसी प्रकार रश्मियों द्वारा–X किरण, सूर्य किरण एवं विद्युत किरणों से जो इलाज होता है, उसी प्रकार मनोविचारों से टेलीपैथी, दृष्टिपात, नेत्रक्षेपण, स्वदर्शन आदि के द्वारा भी चिकित्सा उपचार, लाभ सारा संसार ले रहा है।

धतूरा, नागविष आदि जैसे नक्स, आर्सेनिक, लेकेसिस बनकर असाध्य रोगों को नाश कर रहे हैं, उसी प्रकार इस ग्रंथ के प्रयोग भी समर्थ हैं। एवं आचार्य मल्लिसेन की यह कृति जिसके भाष्यकार श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज एवं प्रकाशन संयोजक संगीताचार्य शांति कुमारजी गंगवाल हैं–वे इस भारतीय तंत्र विद्या के इस अमूल्य भैरव पद्मावती कल्प–को भव्य आकर्षक सचित्र मोहक रूप में प्रस्तुत कर प्राच्य भारतीय जैन विद्याओं को विश्व के सम्मुख रख–अद्‌भुत साहस बुद्धि और सम्यकदर्शन के आठवें प्रभावना अंग का ही पालन कर रहे हैं। विघ्न संतोषी, ईर्ष्यालू वणिकवृत्ति संपादक–आलोचकों के छिन्द्रान्वेषण पूर्ण प्रहारों का निर्भीकतापूर्ण सामना करके जो आपने स्थितिकरण अंग का परिचय दिया है वह अभिनंदनीय है।

इस प्रकार के प्रयोगों की सिद्धि और सफलता के लिए अनुभवी, तपस्वी, विज्ञ, निर्लोभी, गुरु और मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है, उसके बिना यह कार्य सहज नहीं है। मेरे जीवन में अनेक इस प्रकार के अनुभव हुए हैं। देश-विदेश के अनेक राजनीतिज्ञों, श्रेष्ठियों, रोगियों, पुरुष एवं स्त्रियों को मैंने मंत्र–तंत्र–ज्योतिष एवं प्रस्तुत ग्रंथ के प्रयोगों से रोग–शोक–व्याधि अंतराय मुक्त करके–सान्त्वना–शांति–सुख एवं संतोष दिया है। गुरुचरणों में आस्था-पूर्वक–इसके सभी प्रयोग करें, सफलता आपको मिलेगी–इति शुभम्।

अक्षयकुमार जैन
हिन्दी विभाग–गुजराती कॉलेज

महाशिवरात्रि–१६/२/८८
भारती ज्योतिष विद्या संस्थान
५१/२ रावजी बाजार, इंदौर

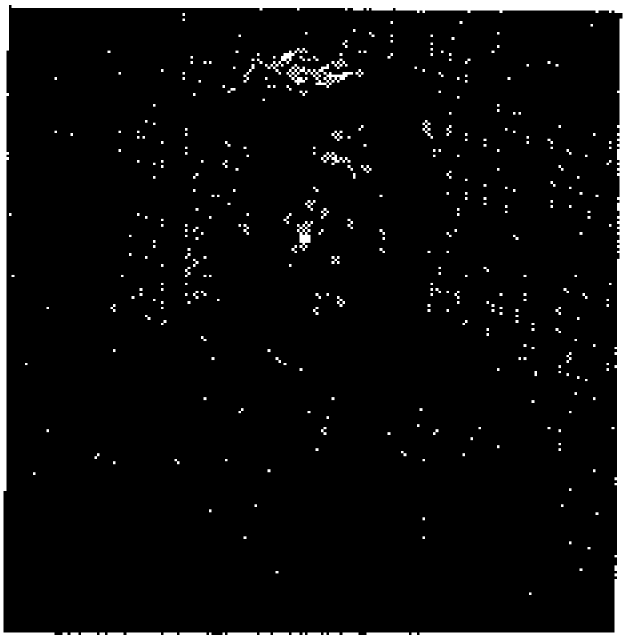

प्रकाशकीय

मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि हमारी ग्रंथमाला समिति ने दस महत्त्वपूर्ण पुष्पों लघुविद्यानुवाद, श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अनाहत यंत्र मंत्र विधि, तजो मान करो ध्यान, हुम्बुज श्रमण सिद्धान्त पाठावलि, पुनर्मिलन, श्री शीतलनाथ पूजा विधान (संस्कृत) वर्षायोग स्मारिका, श्री सम्मेद शिखर माहात्म्यम्, रात्रि भोजन त्याग कथा, श्री शीतलनाथ पूजा विधान (हिन्दी) का प्रकाशन करवाने के बाद ग्यारहवाँ महत्त्वपूर्ण पुष्प श्री भैरव पद्मावती कल्पः ग्रंथ के प्रकाशन को करवाने में सफलता प्राप्त की है।

इस ग्रंथ के प्रकाशन का कार्य वास्तव में मुझ जैसे अल्पज्ञानी के लिये बहुत ही जटिल एवं मुश्किल था, फिर भी पूज्य आचार्यों के मंगलमय शुभाशीर्वादों के साथ-साथ परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज के शुभाशीर्वाद से कार्य प्रारम्भ होकर निर्विघ्न पूर्ण हुआ। यह मैं श्री जिनेन्द्र प्रभु की कृपा व परमपूज्य आचार्यों के शुभाशीर्वाद का ही फल मानता हूं।

प्रस्तुत ग्रंथ की हिन्दी विजया टीका परमपूज्य वात्सल्य रत्नाकर, श्रमणरत्न, श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज ने बहुत ही कठिन परिश्रम से की है। इस का अन्दाज पाठकगण स्वयं इस ग्रंथ को पढ़कर लगा सकेंगे। इस ग्रंथ की टीका कर के प्रकाशन करवाने का गणधराचार्य महाराज का यही लक्ष्य रहा है कि मंत्र शास्त्र, जो कि जिनागम का एक अंग है वह भी सुरक्षित रहे। जिसके विषय में ग्रंथ के प्रारम्भ में महाराज ने अपने विचार आशीर्वादात्मक वचनों में स्पष्ट शब्दों में लिख ही दिये हैं। पाठकों से अनुरोध है कि ध्यान से पढ़कर गणधराचार्य महाराज की आज्ञानुसार ही अनुसरण करें।

परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागरजी महाराज का एक विशाल संघ है। वर्ष १९८७ का वर्षायोग अकलूज (महाराष्ट्र) में पूर्ण करके आपका संघ नगर-नगर और ग्राम-ग्राम में धर्म प्रभावना करता हुआ दिनांक १५/२/८८ को तीर्थराज श्री सम्मेद शिखरजी में पहुँचा। इस क्षेत्र की वंदना कर अष्टान्हिका पर्व के बाद चम्पापुर, राजगृही, पावापुर आदि क्षेत्रों की यात्रा करने हेतु दिनांक ५/३,८८ को संघ ने विहार कर दिया है।

गणधराचार्य महाराज के संघ में इस समय कुल ३९ पिच्छी है जिसमें उन्हीं के दीक्षित २७ मुनिराज, ५ आर्यिका माताजी, ४ क्षुल्लक महाराज व ३ क्षुल्लिका माताजी हैं। आपका संघ मात्र विशाल ही नही है बल्कि मुनियों की संख्या भारतवर्ष में विद्यमान सभी संघों से सर्वाधिक है जो वास्तव में बहुत ही गौरव व प्रसन्नता की बात है।

संघ संचालन हेतु कोई ब्रह्मचारिणी भी नियुक्त नहीं है। सभी व्यवस्था श्रावकों पर निर्भर है। यह बात भी विशेष उल्लेखनीय एवं प्रशंसनीय है जो अन्यत्र देखने में बहुत कम मिलती है। संघ पूर्ण आगम के अनुकूल विचरण कर धर्म प्रभावना कर रहा है। संघ में अधिकांश युवा मुनि हैं। सभी सदैव अध्ययन चिंतन मनन में लगे रहते हैं। मुनिगण कई भाषाओं के ज्ञाता हैं और विभिन्न भाषाओं में प्रवचन भी करते हैं।

इस प्रकार गणधराचार्य महाराज ने इतने विशाल संघ का संचालन करते हुये, त्याग तपस्या में सदैव लीन रहते हुये समय निकाल कर बहुत ही कठिन परिश्रम करके इस प्रकार के महत्वपूर्ण ग्रंथ की टीका कर प्रकाशन करवाया है। वास्तव में यह एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसके लिये हम उनके चरणों में कोटि-कोटि बार नमोस्तु अर्पित करते है।

गणधराचार्य महाराज आर्ष परम्परा के दृढ़ स्तम्भ हैं। समता वात्सल्य, निर्ग्रन्थता आपके विशेष गुण हैं। जो भी आपके एक बार दर्शन प्राप्त कर लेता है वही अपने आपको धन्य मानता है।

गणधराचार्य महाराज के गुणों के बारे में जितना लिखा जावे थोड़ा है। आगे कुछ लिखना मेरे लिये उसी प्रकार अनुपयुक्त होगा जैसे सूर्य को दीपक दिखाना। वास्तव में गणधराचार्य महाराज त्याग तपस्या की साक्षात् मूर्ति हैं।

आदरणीय प्रोफेसर अक्षयकुमारजी जैन इन्दौर का भी आभार व्यक्त करते हुये बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं कि आपने बहुत ही सुन्दर एवं विद्वत्ता पूर्ण शब्दों में ग्रंथराज की प्रस्तावना लिखने की कृपा की है। आप बहुत ही उच्च कोटि के विद्वान हैं जिसका अन्दाज आप स्वयं ही ग्रंथ में प्रकाशित प्रस्तावना को पढ़कर लगा सकते हैं। आशा है भविष्य में भी आपका आशीर्वाद, सहयोग, मार्ग दर्शन हमें प्राप्त होता रहेगा। आप वाणी सिद्ध की उपाधि से विभूषित हैं।

ग्रंथ में प्रकाशित सभी यंत्रों के डिजाइन एवं आवरण पृष्ठ का डिजाइन हमारे आर्टिस्ट मास्टर पुरुषोत्तम जी शर्मा ने बहुत ही कठिन परिश्रम से बनाकर हमें सहयोग

प्रदान किया है। वास्तव में यह कार्य बहुत मुश्किल था जो आपके सहयोग से हो सका है। ग्रंथमाला की ओर से आपको बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं।

मूनलाइट प्रेस के सभी कार्यकर्त्ताओं को भी धन्यवाद देता हूं कि समय पर कार्य पूरा कराने में हमें सहयोग प्रदान किया है।

ग्रंथमाला के प्रकाशन कार्यों में ग्रंथमाला के सभी सहयोगी कार्यकर्त्ताओं का बहुत-बहुत आभारी हूं क्योंकि आप सभी के सहयोग करने पर यह कार्य हो सका है।

ग्रंथ प्रकाशन खर्चों में जिन-जिन दातारों ने हमें आर्थिक सहयोग प्रदान किया है, मैं ग्रंथमाला की ओर से उन सभी का आभार प्रकट करते हुये बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं और आशा करता हूं कि भविष्य में भी आपका सहयोग हमें इसी प्रकार प्राप्त होता रहेगा। अन्य दातारों से भी मेरा निवेदन है कि इस ग्रंथमाला को अधिक से अधिक सहयोग प्रदान करें। जिससे आगे भी उन ग्रंथों का प्रकाशन हो सके जिनका अभी तक प्रकाशन नहीं हुआ है।

ग्रंथमाला समिति द्वारा प्रकाशन कार्यों को बहुत ही सावधानी पूर्वक देखा गया है फिर भी त्रुटियों का रहना स्वाभाविक है। मेरा स्वयं का अल्पज्ञान है। और ग्रंथ में प्रकाशित सामग्री मेरे सामान्य ज्ञान की परिधि के बाहर है। मैंने तो मात्र परम-पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज की आज्ञा को शिरोधार्य कर यह विकट कार्य करने का साहस किया है। अतः साधुजन विद्वज्जन व पाठकगण से निवेदन है कि त्रुटियों के लिए क्षमा करें।

ज्ञानी पण्डित हूं नहीं प्रकाशन का नहीं ज्ञान।
अशुद्धि त्रुटि होवे तो शोध पढ़ें श्रीमान॥

जैन मित्र, जैन गजट, अहिंसा, करुणादीप, पार्श्वज्योति आदि पत्रों के सम्पादक महोदयों को भी उनके द्वारा ग्रंथमाला के लिये दिये दिये सहयोग के लिये बड़ा आभारी हूं और उनके सहयोग के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूं। आशा है आप सभी का सहयोग ग्रंथमाला के प्रकाशनों के प्रचार-प्रसार में हमेशा प्राप्त होता रहेगा।

अंत में परमपूज्य श्री १०८ गणधराचार्य वात्सल्य रत्नाकर, श्रमणरत्न, स्याद्वाद केशरी कुंथुसागरजी महाराज की आज्ञा से यह ग्रंथ परमपूज्य श्री १०८ आचार्य विमलसागरजी महाराज के करकमलों में विमोचन करने हेतु सादर समर्पित करते हुए आज मैं अतीव प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूं।

पुनः आशीर्वाद की भावना के साथ
संगीताचार्य
परम गुरुभक्त प्रकाशन संयोजक
शान्ति कुमार गंगवाल
(बी० कॉम)

दिनाङ्क : १३-३-८८

विषयानुक्रमणिका

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
प्रथमः	: मंत्रि लक्षणाधिकारः	३
द्वितीयः	: सकलीकरण परिच्छेदः	६
	साध्य और साधक के अंश गणने की क्रिया	१७
तृतीयः	: देव्यर्चना क्रम परिच्छेदः	२३
	मुद्राकरण	२५
	आसन विधान	२६
	पलव विचार	२६
	जाप्य के लिये अंगुलि विधान	२७
	मंत्र जाप्य करने के लिये पल्लवादि विधान का कोष्टक	२६
	पंचोपचारी पूजा	३७
	होम विधि	४१
	धरणेन्द्र यक्ष की साधन विधि	४३
चतुर्थः	: द्वादश रञ्जिका मंत्रोद्धार परिच्छेदः	४७
पंचमः	: क्रोधादिस्तम्भन यंत्र परिच्छेदः	६६
षष्ठः	: अंगनाकर्षण परिच्छेदः	८६
सप्तमः	: वशीकरण यंत्र परिच्छेदः	१०६
	रंडायक्षिणी सिद्धि	१२३
	होम द्रव्य विधान	१३१
अष्टमः	: दर्पणादि निमित्त परिच्छेदः	१३४
नवमः	: स्त्र्यादि वश्यौषध परिच्छेदः	१५१
दशमः	: गारुड तंत्राधिकार परिच्छेदः	१६७
	ग्रंथकार की गुरु परम्परा	१६५
	टीकाकर्ता की प्रशस्ति	१६७

श्री कवि शेखर मल्लिषेणाचार्य विरचित:

भैरव पद्मावती कल्पः

हिन्दी टीकाकार का मंगलाचरण

पार्श्वनाथ जिनदेव को, गणधर सरस्वती माय ।
आचार्य महावीर कीर्ति को, वंदो बारं बार ।।
भैरव पद्मावती कल्प को, भाषा लिखुं हर्षाय ।
मंत्र यंत्र और तन्त्र की, सिद्धि मिले सुखकार ।।

संस्कृत टीकाकार का मंगलाचरण

श्रीमच्चातुर्णिकायामर खेचर वधू नृत्य सङ्गीतकीर्त्ति ।
व्याप्ताशामण्डलं मण्डितसुरपटहाद्यष्ट सत्प्रातिहार्यम् ।।
नत्वा श्रीपार्श्वनाथं जितकमठ कृतोद्दण्ड घोरोपसर्गं ।
पद्मावत्या हि कल्पप्रवर विवरणं वक्ष्यते बन्धुषेणैः ।।

ग्रन्थकार का मंगलाचरण

कमठोपसर्गदलनं त्रिभुवन नाथं प्रणम्य पार्श्वजिनम् ।
वक्ष्येऽभीष्ट फलप्रद भैरव पद्मावती कल्पम् ।।१।।

[संस्कृत टीका]—**कमठोपसर्गदलनं कमठेन कृतो य उपसर्गः, तं दलयतीति, कमठोपसर्गदलनं । पुनः कथम्भूतम् ? त्रिभुवननाथम् त्रिलोकाधीश्वरम् । कम् ? पार्श्वजिनम्, श्री पार्श्वजिनेश्वरम् ।**

[हिन्दी टीका]—कमठ के द्वारा किये हुए उपसर्ग को दलन (नष्ट) कर दिया है जिन्होंने ऐसे श्री त्रिलोकी नाथ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र को नमस्कार करके, जिससे इच्छित सुख की प्राप्ति होती है ऐसे भैरव पद्मावती कल्प को मैं (श्री मल्लिषेणाचार्य) कहूंगा ।

यहाँ मंगलाचरण में पार्श्वनाथ जिनेश्वर को नमस्कार किया गया है। क्योंकि पार्श्वनाथ भगवान की यक्षिणी देवी पद्मावती है और उसी देवी के अतिशय कल्प की रचना आचार्य श्री को करना है, जो कि अनेक प्रकार के अभीष्ट सुख रूप

फल को देनेवाली है और अनेक सिद्धियों को प्रदान करनेवाली है; इसिलिये कवि ने पार्श्वनाथ जिनेश्वर को नमस्कार किया है ।

पार्श्वनाथ भगवान, जिन्होंने अनेक प्रकार से किये गये कमठ के घोर उपसर्ग को जीत लिया है, ऐसे जिनेश्वर को मेरा (श्री गणधराचार्य कुन्थु सागर का) नमस्कार है ।।१।।

पाशफलवरदगजवशकरणकरा पद्मविष्टरा पद्मा ।
सा मां रक्षतु देवी त्रिलोचना रक्तपुष्पाभा[१] ।।२।।

[संस्कृत टीका]–'पाशफलवरदगजवशकरणकरा' पाशश्च फलं च वरदश्च गजवशकरणं च पाशफलवरदगजवशकरणानि तानि, वामोर्ध्वकरादि विद्यन्ते यस्याः सा पाशफलवरदगजवशकरणकरा । पुनः कथम्भूता ? 'पद्मविष्टरा' पद्ममेव विष्टरं–आसनं यस्याः सा पद्मविष्टरा । पुनः कथम्भूता ? 'त्रिलोचना' त्रीणि लोचनानि विद्यन्ते यस्याः सा त्रिलोचना । पुनः कथम्भूता ? 'रक्तपुष्पाभा' रक्त पुष्पवद् आभा–दीप्तिर्यस्याः सा रक्त पुष्पाभा । का सा ? 'पद्मा' पद्मावती नाम । 'देवी' देवता । 'मां' ग्रन्थकर्तारं श्री मल्लिषेणाचार्यं 'रक्षतु' पातु ।।२।।

[हिन्दी टीका]–हाथों में, पाश, फल, वरद, अंकुश को धारण करने वाली और कमल के आसन से सहित तीन लोचनवाली, लालपुष्प के समान शरीर की कान्ति को धारण करनेवाली महादेवी पद्मावती मेरी रक्षा करें ।

पद्मावती देवी को चौबीस भुजा सहित भी माना है और भुजाओं में चौबीस प्रकार के अलग-अलग आयुधों से सहित माना है। इसप्रकार की अनेक जगह प्राचीन क्षेत्रों पर प्राचीन मूर्तियां पाई जाती हैं । देवगढ़ सेरोनजी आदि क्षेत्रों पर देखिये प्राचीन पुरातत्व विभाग में हैं । अलग से भी और पार्श्वनाथ की मूर्ति के सहित भी पद्मावती देवी की मूर्तियां पाई जाती हैं । दक्षिण भारत में भी अनेक जगह मूर्तियां हैं ।।२।।

तोतला त्वरिता नित्या त्रिपुरा कामसाधिनी ।
देव्या नामानि पद्मायास्तथा त्रिपुर भैरवी ।।३।।

[संस्कृत टीका]--तोतलादीनि त्रिपुर भैरवी पर्यन्तानि पद्मावती देव्याः पर्यायनामानि भवन्ति--जायन्ते ।।३।।

---

१. 'रक्ताभा लोचन त्रितया' इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]—१ तोतला, २ त्वरिता, ३ नित्या, ४ त्रिपुरा, ५ कामसाधिनी और ६ त्रिपुर भैरवी, ये सब पद्मादेवी के ही नामान्तर हैं। पद्मावती देवी के रंग अलग-अलग, आयुध अलग-अलग और वाहन भी अलग-अलग हैं।

(१) **तोतला देवी** :—के हाथों में अनुक्रम से पाश, वज्र, फल और कमल हैं और ये कमलासन पर विराजमान हैं।

(२) **त्वरिता देवी** :—के हाथों में क्रम से शंख, कमल, अभय और वरदान हैं। शरीर का रंग सूर्य के समान है।

(३) **नित्या देवी** :—के हाथों में क्रम से पाश, अंकुश, कमल और अक्षमाला हैं। वाहन हंस का रंग सूर्य के समान है। जटा बालचंद्र से शोभित हैं।

(४) **त्रिपुरा देवी** :—के आठ हाथों में क्रम से शूल, चक्र, कलश, कमल, धनुष, बाण, फल, अंकुश हैं और शरीर का रंग कुंकुम समान लाल है।

(५) **कामसाधिनी देवी** :—के चारों हाथों में शंख, कमल, फल, कमल है। शरीर का रंग बंधुक पुष्प के रंग का है। कुक्कुट सर्प का वाहन है।

(६) **त्रिपुर भैरवी देवी** :—के आठों हाथों में क्रम से पाश, चक्र, धनुष, बाण, ढाल, तलवार, फल, कमल हैं, जिसके शरीर का रंग इन्द्रगोप के समान है और तीन नेत्रों से सहित हैं। जब देवी अलग-अलग विक्रिया करती हैं, तब अलग-अलग वाहन और अलग-अलग आयुध धारण करती हैं, इसीलिये स्वरूप अलग-अलग हो जाते हैं। ॥३॥

प्रथमो मंत्रिलक्षणाधिकारः

आदौ साधक लक्षणं सुसकलीं देव्यर्चनायाः क्रमं,
पश्चाद् द्वादश यन्त्रभेद कथनं स्तम्भोऽङ्गनाकर्षणम्।
यन्त्रं वश्यकरं निमित्तमपरं वश्यौषधं गारुडं,
वक्ष्येऽहं क्रमशो यथा निगदिताः कल्पेऽधिकारास्तथा ॥४॥

[संस्कृत टीका]--ग्रन्थस्यादौ 'साधक लक्षणं' मन्त्रसाधकानां लक्षणम्। 'सुसकलीम्' सम्यक् सकलीकरण क्रियाम्। 'देव्यर्चनायाः क्रमम्' देव्याराधनविधानम्। 'पश्चात्' देव्याराधनविधानानन्तरम्। 'द्वादशयन्त्रभेद कथनम्' द्वादश प्रकार यन्त्राणां भेदव्याख्यानम्। 'स्तम्भम्' क्रोधादिस्तम्भनयन्त्राधिकारम्। 'अङ्गनाकर्षणं' स्त्र्या-

कर्षणाधिकारम् । 'यन्त्रं वश्यकरं' वशीकरणयन्त्र निरूपणाधिकारम् । 'निमित्तम्' दर्पणादिनिमित्ताधिकारम् । 'अपरं' अन्यत् । 'वश्यौषधं' स्त्र्यादिवश्यौषधाधिकारम् । 'गारुडं' गारुडाधिकारम् । 'कल्पेऽधिकाराः' अस्मिन् कल्पे अधिकाराः । 'यथा' येन प्रकारेण । 'निगदिताः' प्रतिपादिताः । 'तथा' तेन प्रकारेण । 'अहं' श्री मल्लिषेणाचार्यः । 'क्रमशः' यथा परिपाट्या । 'वक्ष्ये' प्रतिपादयिष्ये ॥४॥

[हिन्दी टीका]—अब आचार्य मल्लिषेण इस भैरव पद्मावती कल्प में जिन-जिन विषयों का वर्णन करेंगे, उन-उन विषयों का अनुक्रमणिका के रूप में वर्णन करते हैं।

प्रथम साधक के लक्षण पश्चात् सकलीकरण क्रिया, महादेवी की पूजा का विधान, बारह प्रकार के यंत्रों के भेदों का उच्चाटन, स्तंभन क्रिया का वर्णन, स्त्री आकर्षण क्रिया का वर्णन, वश्य क्रिया के यंत्रादि, दर्पणादि निमित का वर्णन, वशीकरण करने के लिये औषधिरूप तन्त्र और गारुडाधिकार कहेंगे, जो पूर्वाचार्य कह गये हैं।

यहाँ आचार्य स्वयं अपने मन से कुछ नहीं लिख रहे हैं, जो उनको आचार्य परंपरा से मिलता है, उसी को कह रहे हैं ॥४॥

इति दशविधाधिकारैं र्ललितार्या श्लोक गीति सद्वृत्तैः ।
विरचयति मल्लिषेणः कल्पं पद्मावतीदेव्याः ॥५॥

[संस्कृत टीका]—'इति दशविधाधिकारैः' इति प्राक् कथित दश प्रकाराधिकारैः । कथम्भूतैः ? 'ललितार्या श्लोक गीति सद्वृत्तैः' ललिता च या आर्या ललितार्या, श्लोकः—द्वात्रिंशदक्षरनिबद्धः, गीतीति उपगीतिः, सद्वृत्तैः षड्विंशति जातिवृत्तैः । 'विरचयति' विशेषेण रचयति । कः कर्ता ? मल्लिषेणः । कम् ? कल्पम् । कस्याः ? 'पद्मावती देव्याः' भैरव पद्मावती देव्याः ॥५॥

[हिन्दी टीका]—सुन्दर आर्या, गीति और श्लोकरूप अच्छे-अच्छे छन्दों से सहित इस भैरव पद्मावती कल्प को दश अधिकारों में श्री मल्लिषेणाचार्य वर्णन करेंगे ॥५॥

मंत्र साधक का लक्षण

निर्जितमदनाटोपः प्रशमितकोपो विमुक्तविकथालापः ।
देव्यर्चनानुरक्तो जिनपदभक्तो भवेन्मन्त्री ॥६॥

[संस्कृत टीका]—'निर्जितमदनाटोपः' निःशेषेण जितो मदनस्य आटोपो-विजृम्भणं येन असौ निर्जितमदनाटोपः। 'प्रशमित कोपः' प्रकर्षेण शमितः कोप येनासौ प्रशमितकोपः। 'विमुक्तविकथालापः' विशेषेण मुक्तः त्यक्तः विकथाया आलापो विकथा-लापः मिथ्यालापो येनासौ विमुक्त विकथालापः। 'देव्यर्चनानुरक्तः' देवी-पद्मावती तस्या अर्चने-पूजने अनुरक्तः। 'जिनपदभक्तः' श्री जिनेश्वरपदकमलभक्तः असौ 'मन्त्री' मन्त्रवादी एवं गुणयुक्तो 'भवेत्' स्यात् ।।६।।

[हिन्दी टीका]—जिन्होंने कामदेव के उपद्रव को नष्ट कर दिया है और क्रोधादिक को जीत लिया हैं, कितना भी कारण मिलने पर, स्त्री आदिक का उपद्रव होने पर भी, विचलित नहीं होते और क्रोधाविष्ट नहीं होते हैं, संपूर्ण विकथाओं का त्याग कर दिया है और महादेवी के पूजन में अटूट श्रद्धा रखनेवालो, भगवान श्री जिनेन्द्र देव के चरणों के परम भक्त, इतने लक्षणों से जो सहित होते हैं उन्हिको मंत्रसाधन करने का अधिकार है अर्थात् वे ही मंत्री हो सकते हैं।

मन्त्राराधनशूरः पापविदूरो गुणेन गम्भीरः।
मौनी महाभिमानी मन्त्री स्यादीदृशः पुरुषः ।।७।।

[संस्कृत टीका]--मन्त्रस्याराधनं मन्त्राराधनं तस्मिन् शूरः-निर्भयः असौ मन्त्राराधनशूरः। पुनः कथम्भूतः? 'पाप विदूरः' दुष्कर्मकरणविदूरः। 'गुणेन गम्भीरः' सकलगुणैः कृत्वा गम्भीरः। मौनं विद्यते यस्यासौ मौनी। 'महाभिमानी' महांश्चासौ अभिमानश्च महाभिमानः स विद्यते यस्यासौ महाभिमानी। 'ईदृशः पुरुषः' एवं गुण विशिष्टः पुमान्। 'मन्त्री' मन्त्रवादी स्यात् ।।७।।

[हिन्दी टीका]—जो शूर वीरता के साथ मंत्रों को सिद्ध करनेवाला हो अर्थात् मंत्र सिद्ध करते समय आनेवाले उपसर्गादिक को वीरता के साथ जीतनेवाला हो और सम्पूर्ण पापों को करने से भयभीत हो, गुणों से गम्भीर हो, मौनी हो, शुद्ध मौन को धारण करनेवाला हो, अभिमानी हो, किसी भी हालत में अपने स्वाभिमान का रक्षण करनेवाला हो, स्वाभिमानी व्यक्ति किसी के सामने नहीं झुकता, ऐसा व्यक्ति ही मंत्राराधक होता है ।।७।।

गुरुजन हितोपदेशो गततन्द्रो निद्रया परित्यक्तः।
परिमित भोजन शीलः स स्यादाराधको देव्याः ।।८।।

[संस्कृत टीका]--'गुरुजनहितोपदेशः' गुरुजनेभ्यः सकाशाद् हितः अहितः उपदेशो येन असौ गुरुजनहितोपदेशः । 'गततन्द्रः' निरालस्यः । 'निद्रया परित्यक्तः' अतिनिद्रया रहितः । 'परिमित भोजनशीलः' परिमितं भोजनं शीलं यस्य असौ परिमितभोजनशीलः । 'सः' एवंगुणविशिष्टः पुरुषः । 'देव्याः' पद्मावत्याः । 'आराधकः' साधकः । 'स्यात्' भवेत् ॥८॥

[हिन्दी टीका]—गुरोपदेश से प्रभावित हो अर्थात् जिसने गुरु के चरणों में जाकर उपदेश को प्राप्त किया हो, तन्द्रा से रहित अर्थात् निद्रा विजयी हो, क्योंकि अतिनिद्रा मंत्र साधना में बाधक कारण है, निद्रालु व्यक्ति को कभी मंत्रसिद्ध नहीं हो सकता । अल्पाहारी हो, ज्यादा भोजन से आलस्य और आलस्य से कार्य असिद्ध होता है अतः परमित भोजन करनेवाला हो वही, देवी की आराधना कर सकता है ॥८॥

निर्जितविषयकषायो धर्मामृतजनित हर्षगतकायः ।
गुरुतरगुणसम्पूर्णः स भवेदाराधको देव्याः ॥९॥

[संस्कृत टीका]--'निर्जितविषयकषायः' विषयाः पञ्चेन्द्रियजादयः, कषाया क्रोधादयः, विषयाश्च कषायाश्च विषयकषायाः निर्जिता विषयकषाया येन असौ निर्जितविषयकषायः । पुनः कथम्भूतः ? 'धर्मामृतजनितहर्षगतकायः' धर्म एवामृतं धर्मामृतं, तेन जनितो हर्षः धर्मामृतजनितहर्षः, धर्मामृतजनितहर्षं गतः प्राप्तः कायः--शरीरं यस्यासौ धर्मामृतजनितहर्षगतकायः । 'गुरुतरगुण सम्पूर्णः' विशिष्टतरगुणैः सम्पूर्णः । 'स भवेदाराधको देव्याः' स एवं गुण विशिष्टः पुरुषः देव्याः पद्मावत्या आराधको भवेत स्यात् ॥९॥

[हिन्दी टीका]—जिसने सब विषय और कषायों को जीत लिया हो, क्योंकि विषय कषाय से किसी भी कार्य की सिद्धि नहीं हो सकती, फिर मंत्रसिद्धि का तो प्रश्न ही कहाँ ? जिसका शरीर धर्मामृत से हर्ष युक्त हो, धर्म ही जीव को संसार से पार करनेवाला है, क्योंकि धर्म के फलस्वरूप ही मंत्राराधक को मंत्रसिद्ध हो सकता है, इसीलिये आचार्य ने यहाँ पर, मंत्राराधक धर्मात्मा, सुन्दर गुणों से परिपूर्ण बताया है । वही पद्मावती देवी का आराधक हो सकता है ॥९॥

शुचिः प्रसन्नो गुरुदेवभक्तो दृढव्रतः सत्यदयासमेतः ।
दक्षः पटुर्बीज पदावधारी मन्त्री भवेदीदृश एव लोके ॥१०॥

[संस्कृत टीका]--'शुचिः' बाह्या भ्यन्तर शुचिः । 'प्रसन्नः' सौम्यचित्तः । 'गुरुदेवभक्तः' गुरुदेवेषु भक्तः । 'दृढव्रतः' गृहीतव्रतेष्वतिदृढः । 'सत्यदयासमेतः' अननृतवाक्यदयासमेतः । 'दक्षः' अतिचतुरः । 'पटुः' मेधावी । 'बीजपदावधारी' बीजाक्षरपदावधारणं विद्यते यस्यासौ बीजपदावधारी । 'ईदृशः' एवंविध एव पुरुषः । 'लोके' लोकमध्ये । 'मन्त्री' मन्त्रवादी 'भवेत्' स्यात् ॥१०॥

[हिन्दी टीका]--जो विशिष्ट गुणों से बाह्य और अंतरंग को पवित्र रखनेवाला हो, प्रसन्नचित्त का धारक हो, देव, गुरु का परम भक्त हो, लिये हुये व्रतों को दृढ़ता से पालन करनेवाला हो, सत्य का ही आश्रय लेनेवाला हो अर्थात् सत्य बोलने वाला हो, जिसकी अन्तरात्मा दया से भिगी हो, जो अत्यन्त बुद्धिमान हो, चतुराई से चतुर हो, मंत्र के बीजाक्षरों को जाननेवाला हो, ऐसा भव्य धर्मात्मा ही लोक में मंत्र साधक (मंत्री) हो सकता है ॥१०॥

एते गुणा यस्य न सन्ति पुंसः क्वचित् कदाचिन्न भवेत् स मन्त्री ।
करोति चेद्दर्पवशात् स जाप्यं प्राप्नोत्यनर्थं फणिशेखरायाः ॥११॥

[संस्कृत टीका]--'एते गुणा यस्य न सन्ति पुंसः' यस्य पुरुषस्य एते गुणा न सन्ति न विद्यन्ते । 'क्वचित्' यत्र क्वापि प्रदेशे । 'कदाचित्' कस्मिश्चित् काले । 'सः' एवं विशिष्टः पुमान् । 'मंत्री' मन्त्रवादी । 'न भवेत्' न स्यात् । 'सः' पुरुषः । 'दर्पवशात्' उद्धतवृत्त्या । 'जाप्यं' मन्त्रजाप्यं । 'करोति चेत्' यदि करोति । 'प्राप्नोत्यनर्थं फणिशेखरायाः' पद्मावती देव्याः सकाशाद् अनर्थं प्राप्नोति आपद्यते ॥११॥

[हिन्दी टीका]--उपरोक्त गुणों से युक्त अगर कोई व्यक्ति नहीं है, तो वह कभी भी मंत्रसाधक नहीं हो सकता है । यदि अहंकार में चूर होकर मंत्रसाधन करने लगे तो देवी पद्मावती के द्वारा हानि को प्राप्त होता है ।

जो ऊपर गुण कहे हैं, उन गुणों से सहित ही मंत्रसाधक हो सकता है, अगर उपरोक्त गुण नहीं हैं, तो कभी भी कोई भी मंत्र की साधना नहीं करनी चाहिये । अगर गुण रहित व्यक्ति अहंकार में आकर मंत्रसाधन करने लगे तो नियम से उसको मंत्र सिद्ध नहीं होगा और उल्टा नुकसान ही होगा, देवी उसका नुकसान करा देगी, मंत्र साधक सावधान रहें ॥११॥

इत्युभयभाषाकविशेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते भैरव पद्मावतीकल्पे मन्त्रिलक्षणाधिकारः प्रथमः ।

'इति' एवं 'श्रीमल्लिषेण सूरि विरचिते' श्रिया उपलक्षितो मल्लिषेणः श्रीमल्लिषेणः स चासौ सूरिश्च श्रीमल्लिषेण सूरिः तेन विरचितः कथितः तस्मिन् श्रीमल्लिषेण सूरि विरचिते। क्व ? भैरव पद्मावती कल्पे भैरवपद्मावतीदेव्याः मन्त्रिलक्षणाधिकारः प्रथमः ॥१॥

इसप्रकार उभय भाषा कवि शेखर श्रीमल्लिषेणाचार्य विरचित भैरव पद्मावती कल्प के मन्त्रि लक्षणाधिकार में हिन्दी भाषा की विजया टीका का प्रथम अध्याय पूर्ण हुआ।

द्वितीयः सकलीकरण परिच्छेदः

स्नात्वा पूर्वं मन्त्री प्रक्षालित रक्तवस्त्र परिधानः ।
सम्मार्जित प्रदेशे स्थित्वा सकली क्रियां कुर्यात् ॥१॥

[संस्कृत टीका]--'स्नात्वा' स्नानं कृत्वा । 'पूर्वं' प्राक् । 'मन्त्री' मन्त्रवादी । 'प्रक्षालित रक्तवस्त्र परिधानः' धौत लोहित वस्त्र परिधानः । 'सम्मार्जित प्रदेशे' गोमयलिप्त प्रदेशे । 'स्थित्वा' उषित्वा । 'सकली क्रियां' आत्मरक्षा विधानं कुर्यात् ॥१॥

[हिन्दी टीका]–मंत्र साधक को प्रथम स्नानकर स्वच्छ धुले हुये लाल वस्त्रों को पहनकर, गोबर से लिपी हुई भूमि पर बैठकर सकलीकरणरूप आत्मरक्षा करनी चाहिये; क्योंकि बहिरंग शुद्धि भी मंत्र साधन में कारण है, अगर बहिरंग शुद्धि नहीं है, तो साधक को कभी भी सिद्धि नहीं मिल सकती है । इसीलिये आचार्य ने यहाँ पर, शरीर शुद्धि, वस्त्र शुद्धि और भूमि शुद्धि का प्रतिपादन किया है ॥१॥

ह्रां वामकराङ्गुष्ठे तर्जन्यां ह्रीं च मध्यमायां ह्रूं ।
ह्रौं पुनरनामिकायां कनिष्ठिकायां च ह्रः सुस्यात्[१] ॥२॥

[संस्कृत टीका]—'ह्रां वामकराङ्गुष्ठे' वामकराङ्गुष्ठाग्रे ह्रामिति बीजं विन्यसेत् । 'तर्जन्यां ह्रीं' तर्जन्यङ्गुल्यग्रे ह्रीमिति बीजम् । 'मध्यमायां ह्रूं' मध्यमाङ्गुल्यग्रे ह्रूमिति बीजम् । 'ह्रौं पुनरनामिकायाम्' पुनः पश्चात् अनामिकाङ्गुल्यग्रे ह्रौमिति बीजम् । 'कनिष्ठिकायां च ह्रः' कनिष्ठिकाङ्गुल्यग्रे ह्रः इति बीजम्, चः समुच्चये । एवं यथानुक्रमेण पञ्चशून्य बीज स्थापना स्यात् भवेत् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अङ्गुल्यग्रेषु न्यासाक्षराणि ॥२॥

[हिन्दी टीका]–बांये हाथ के अंगूठे के अग्रभाग में 'ह्रां', तर्जनी अर्थात् अंगूठे के पासवाली अंगुली के अग्रभाग में 'ह्रीं' मध्यमा यानी तर्जनी के पास वाली अंगुली के अग्रभाग में 'ह्रूं', अनामिका अर्थात् उसके मध्यमा के पास वाली अंगुली के अग्रभाग में 'ह्रौं' और कनिष्ठिका यानी सबसे अन्तिम छोटी वाली अंगुली के अग्र भाग में 'ह्रः' इस प्रकार पांच शून्य अक्षर बीजों की स्थापना करें ॥२॥

---

१. 'कारः' इति ख पाठ ।

पञ्च नमस्कार पदैः प्रत्येकं प्रणवपूर्व होमान्त्यैः ।
पूर्वोक्त पञ्च शून्यैः परमेष्ठिपदाग्र विन्यस्तैः ।।३।।
शीर्षं वदनं हृदयं नाभिं पादौ च रक्ष रक्षेति ।
कुर्यादेतैर्मन्त्री प्रतिदिवसं स्वाङ्ग विन्यासम् ।।४।। कुलकम् ।।

[संस्कृत टीका]—'पञ्चनमस्कार पदैः' अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्व साधूनां नमस्कारपूर्वं पञ्चापदैः कथम्भूतैः ? 'प्रत्येकं प्रणवपूर्वहोमान्त्यैः' पृथक्-पृथक् ॐकार पूर्वस्वाहा शब्दान्तैः । कथम्भूतैः ? 'परमेष्ठिपदाग्रविन्यस्तैः' पञ्चपरमेष्ठिनां पदाग्रे यथाक्रमेण विशेषेण न्यस्तैः [कः 'पूर्वोक्त पञ्चशून्यैः' पूर्वोक्तैः ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः इति रूपैः पञ्चभिः शून्यैः हकारैः] ।।३।।

'शीर्षं' मस्तकम् । 'वदनं' आस्यम् । 'हृदयं' हृत्स्थानम् । 'नाभिं' नाभि-स्थानम् । 'पादौ' चरणद्वयम् । 'चः' समुच्चये । 'रक्ष रक्ष इति' पदद्वयं । अनेन प्रकारेण 'एतैः' कथित मन्त्रैः । 'मन्त्री' मन्त्रवादी । 'प्रतिदिवसं' दिनं दिनं प्रति । 'स्वाङ्ग विन्यासं' स्वकीयाङ्गन्यासम् । 'कुर्यात्' करोतु ।।४।।

[हिन्दी टीका]—पंच नमस्कार मंत्र पदों के आदि में ॐ और अंत में स्वाहा सहित पहले कहे हुये पंच शून्याक्षर बीजों को प्रत्येक पद के साथ लगाकर क्रम से शिर, मुख, हृदय, नाभि और पैरों से वाचक पदों को लगाकर 'रक्ष-रक्ष' कहता हुआ अपने अंगों का नित्य न्यास करें ।

ॐ णमो अरिहंताणं ह्रां पद्मावती देवी मम शीर्षं रक्ष-२ स्वाहा ।
ॐ णमो सिद्धाणं ह्रीं ,, ,, ,, वदनं रक्ष-२ स्वाहा ।
ॐ णमो आइरियाणं ह्रूं ,, ,, ,, हृदयं रक्ष-२ स्वाहा ।
ॐ णमो उवज्झायाणं ह्रौं ,, ,, ,, नाभिं रक्ष-२ स्वाहा ।
ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः ,, ,, ,, पादौ रक्ष-२ स्वाहा ।

इस प्रकार शून्य अक्षरों सहित नमस्कार मंत्रों से अपने अंगों का न्यास करने से मंत्री के अंगो की रक्षा होती है । मंत्री के अंगों को कोई भी उपद्रवकर्त्ता क्षति पहुँचा नहीं सकता है । इस प्रकार भी अंगन्यास कर सकते हैं ।

यहां पूर्ण अंगन्यास का क्रम देते हैं :—

ॐ णमो अरिहंताणं ह्रां मम हृदयं रक्ष-२ स्वाहा।
ॐ णमो सिद्धाण ह्रीं मम मुखं रक्ष-२ स्वाहा।
ॐ णमो आइरियाणं ह्रूं मम दक्षिणांगं रक्ष-२ स्वाहा।
ॐ णमो उवज्झायाणं ह्रौं मम पृष्ठाङ्गं रक्ष-२ स्वाहा।
ॐ णमो लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम वामांगं रक्ष-२ स्वाहा।
ॐ णमो अरिहंताणं ह्रां मम ललाट भागं ,, ,, ।
,, ,, सिद्धाणं ह्रीं मम उद्ध्व भागं ,, ,, ।
,, ,, आयरियाणं ह्रूं मम शिरोदक्षिण भागं ,, ,, ।
,, ,, उवज्झायाणं ह्रौं मम शिरोऽहर भागं ,, ,, ।
,, ,, लोए सव्वसाहूणं ह्रः मम शिरोवाम भागं ,, ,, ।
,, ,, अरिहंताणं ह्रां मम दक्षिण कुक्षं ,, ,, ।
,, ,, सिद्धाणं ह्रीं मम वामकुक्षं ,, ,, ।
,, ,, आयरियाणं ह्रूं मम नाभिप्रदेशं ,, ,, ।
,, ,, उवज्झायाणं ह्रौं मम दक्षिण पार्श्वं ,, ,, ।
,, ,, लोए सव्वसाहूणं मम वामपार्श्वं ,, ,, ।

ऊपर लिखे मंत्रों को क्रमशः हाथ जोडकर मंत्र बोलते जाय और जिस-जिस अंग का नाम आया है, उस-उस अंग का स्पर्श करते जाय। (इति अंगन्यास)

द्वि चतुः षष्ठ चतुर्दश कलाभिरन्त्यस्वरेण बिन्दुयुतैः[१] ।
कूटैदिग्विन्यस्तैर्दिशासु दिग्बन्धनं कुर्यात् ॥५॥

[संस्कृत टीका]—'द्वि चतुः षष्ठ चतुर्दश कलाभिः' द्विकलः—आकारः, चतुःकलः—ईकारः, षष्ठकलः—ऊकारः, चतुर्दशकलः—औकारः, एभिः द्विचतुः षष्ठ चतुर्दश कलादिभिः स्वरैः। कथम्भूतैः? 'अन्त्यस्वरेण बिन्दुयुतैः' अन्त्यस्वरः—अंकारः तेन अन्त्यस्वरेण बिन्दुः—अनुस्वारः तेन युतैः। कैः? कूटैः—क्षकारैः। कथम्भूतैः? 'दिग्विन्यस्तैः' दिशि न्यस्तैः। कासु? दिशासु। 'दिग्बन्धनं कुर्यात्' दिशां बन्धनं कुर्यात्। उद्धारः—क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः ॥५॥

---

१. 'युतः' इति ख पाठः।

[हिन्दी टीका]—अंगन्यास करने के बाद ॐ, आं, ईं, ॐ, औं, अः इन स्वरों सहित 'क्षकार' से दिशाबन्धन करे क्षां क्षीं क्षूं क्षौं क्षः ।

यहाँ दिशा बन्धक क्रम अन्य ग्रंथातरसे ।

बायें हाथ की तर्जनी पर केशरादि से 'असिआउसा' लिखकर तर्जनी को प्रसार कर नीचे लिखे मंत्रों को बोलते हुए, प्रत्येक दिशा में अंगुली को क्रमशः दिखावें ।

दिशाबन्धन मंत्र :—ॐ क्षां ह्रां पूर्वौ ।
ॐ क्षीं ह्रीं अग्नौ ।
ॐ क्षूं ह्रूं दक्षिण ।
ॐ क्षें ह्रें नैऋत्ये ।
ॐ क्षैं ह्रैं पश्चिमे ।
ॐ क्षों ह्रों वायव्ये ।
ॐ क्षौं ह्रौं उत्तरे ।
ॐ क्षं ह्रं ईशाने ।
ॐ क्षः ह्रः भूतले ।
ॐ क्षीं ह्रीं उद्‌र्ध्वे ।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते समस्त दिग्बंधनं करोमि स्वाहा ।

इस प्रकार सब दिशाओं में अंगुली घुमावे । फिर सफेद सरसों को लेकर नीचे लिखे मंत्रों को बोलता जाय और सरसों को सब दिशाओं में फेंक देवे । ताली बजावे, चुटकी बजावे ।

ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष-२ हूं फट् स्वाहा ।

हेममय प्राकारं चतुरस्त्रं चिन्तयेत् समुत्तुङ्गम् ।
विंशति हस्तं मन्त्री सर्व स्वर संयुतैः शून्यैः ।।६।।

[संस्कृत टीका]—'हेममयं' स्वर्णमयम्' । कम् ? 'प्राकारं' दुर्गम् । कथम्भूतम् ? 'चतुरस्त्रम्' चतुः कोणम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'समुत्तुङ्गम्' सम्यग् उन्नतम् । पुनः किंविशिष्टम् ? 'विंशतिहस्तं' विंशति हस्त प्रमाणम् । 'सर्वस्वरसंयुतैः शून्यैः' हकारैः । 'मन्त्री' मन्त्रवादी । 'चिन्तयेत्' एवं गुण विशिष्टं प्राकारं ध्यायेत्-ध्यानं कुर्यात् ।।६।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद सर्व स्वरों से सहित अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ, लॄ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। ह कार को सहित करे, जैसे ह, हा, हि, ही, हु, हू, हृ हॄ, ह्लृ, ह्लॄ, हे, है, हो, हौ, हं, हः इन बीजों से सहित स्वर्णमय ऊँचा बीस हाथ प्रमाण चौकोर प्राकार का ध्यान करे।

सवस्वर सम्पूर्णैः कूटैरपि खातिका कृति ध्यायेत्।

निर्मल जल परिपूर्णामति भीषण जलचराकीर्णाम् ॥७॥

[संस्कृत टीका]—'सर्वस्वर सम्पूर्णैः'। कैः? 'कूटैः' क्षकारैः। 'अपि' निश्चये। 'खातिका कृति' परिखाकारम्। 'ध्यायेत्' ध्यानं कुर्यात्। कथम्भूताम्? 'निर्मलजल परिपूर्णाम्'। पुनः कथम्भूताम्? 'अतिभीषणजल चराकीर्णाम्' अति भयानक मत्स्यमकरनक्रकच्छपादिजलचरपरिपूर्णाम् ॥७॥

[हिन्दी टीका]—उसके बाद मंत्रवादी आचार्य के कथनानुसार 'अ' से लेकर संपूर्ण स्वरों से सहित कूटाक्षर 'क्ष' को। क्ष् अ क्ष, क्ष् आ क्षा, क्ष् इ क्षि, क्ष् ई क्षी, क्ष् उ क्षु, क्ष् ऊ क्षू, क्ष् ऋ क्षृ, क्ष् ॠ क्षॄ, क्ष् लृ क्ष्लृ, क्ष् लॄ क्ष्लॄ, क्ष् ए क्षे, क्ष् ऐ क्षै, क्ष् ओ क्षो, क्ष्, अं क्षं, क्ष् अः क्षः यानी क्ष क्षा क्षि क्षी क्षु क्षू क्षृ क्षॄ क्ष्लृ क्ष्लॄ क्षे क्षै क्षो क्षौ क्षं क्षः को मिलाकर निर्मलजल से परिपूर्ण अत्यन्त भयानक जलचर प्राणियों से सहित एक खाई का चिन्तवन करें ॥७॥

ज्वलदोङ्काररकार ज्वालादग्धं स्वमग्निपुर संस्थम्।

ध्यात्वाऽमृत मन्त्रेण स्नानं पश्चात् करोत्वमुना ॥८॥

[संस्कृत टीका]—'ज्वलदोङ्काररकार' जाज्वल्यमान ॐकारः, रकाराक्षराणि, तेषां ज्वालानिर्दग्धः तं ज्वलदोङ्काररकार-ज्वालादग्धम्। कम्? 'स्वम्' आत्मानम्। कथम्भूतम्? 'अग्निपुर संस्थम्' अग्निमण्डल मध्यस्थम्। 'ध्यात्वा' ध्यानं कृत्वा। 'पश्चात्' ध्यानानन्तरम्। 'अमुना' अनेन। 'अमृत मन्त्रेण' वक्ष्यमाणमन्त्रेण। 'स्नानम्' मन्त्रस्नानम्। 'करोतु' कुर्यात् ॥८॥

नं० (१) मन्त्र :—ॐ अमृते[1]! अमृतोद्भवे! अमृतवर्षिणि! अमृतं[2] स्रावय स्रावय सं सं क्लीं स्नान मंत्र ह्लूँ ह्लूँ ह्रां ह्रां ह्रीं ह्रीं द्रावय ह्रौं स्वाहा ॥ अमृत मन्त्रोऽयम् ॥

---

१. "ज्लूँ ब्लूँ" इति ख पाठः।

२. ज्वौ क्ष्वोहं सः इति ख पाठः।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद अपने को अग्निमंडल में बैठे हुए 'ॐ' कार और तीव्र ज्वालाओं से जलता हुआ र कार से अपने को जलता हुआ ध्यान करके, अमृत मंत्र से स्नान करे। अमृतस्नानमुद्रा को बना कर अपने मस्तक पर मंत्र से सिंचित करे, पंचगुरु मुद्रा से ।।८।।

नं० (२) अमृत मंत्र :—ॐ अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणि अमृतं स्त्रावय २ सं १ क्लीं २ ब्लूं २ द्रां २ द्रीं २ द्रावय २ हं झं क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः असिआउसा सर्वांगशुद्धिं कुरु २ स्वाहा।

अग्नि मंडल का आकार

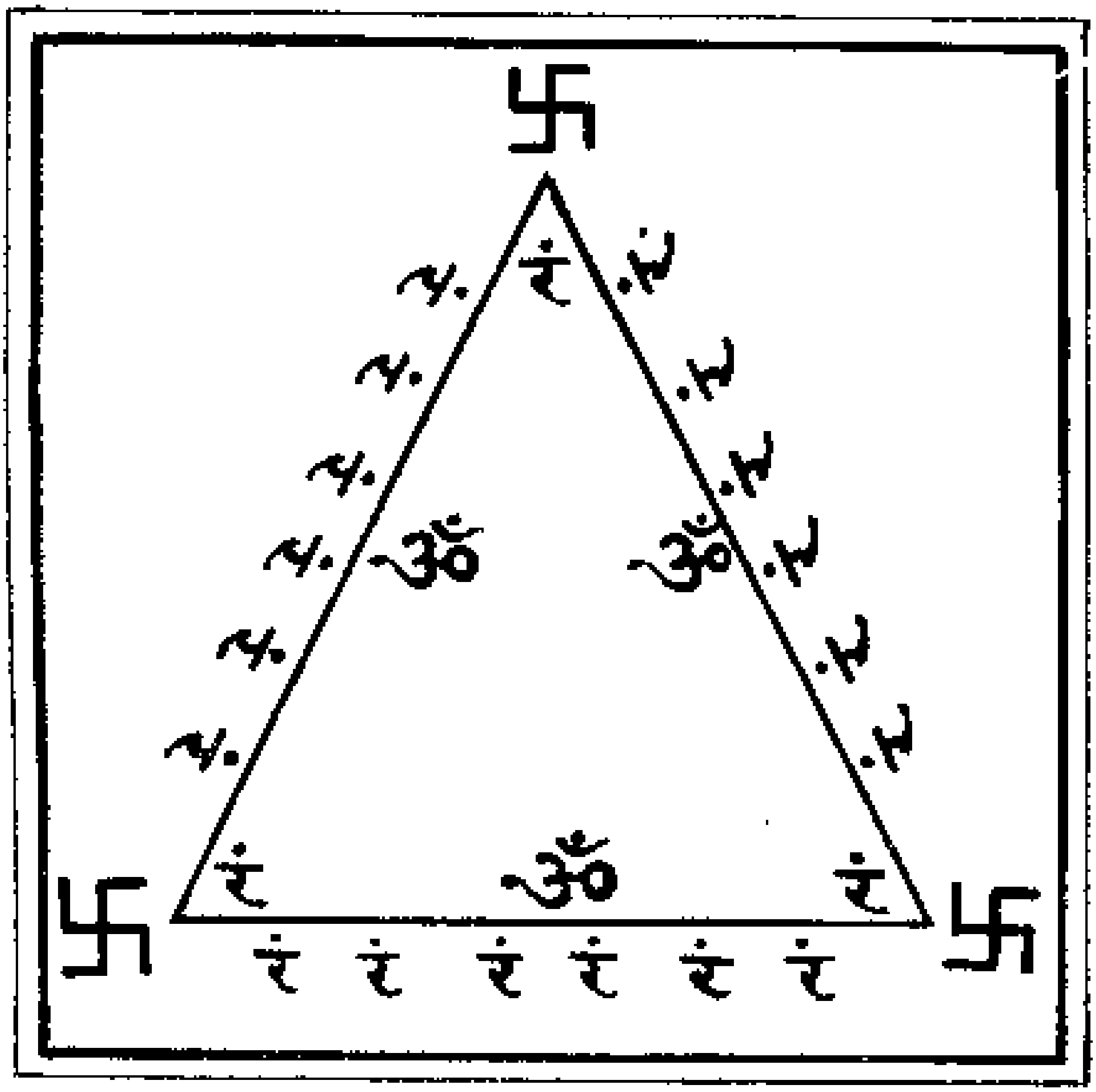

नोट :—१ नंबर का स्नान मंत्र श्वेताम्बर श्री मणिलाल साराभाई नवाब के यहाँ से छपा हुआ पद्मावती उपासना ग्रन्थसे लिखा है।

निजोत्तमाङ्गामर भूधराग्रे संस्नापितः पार्श्वजिनेन्द्र चन्द्रः।
क्षीराब्धि दुग्धेन सुरेन्द्रवृन्दैः स्वं चिन्तयेत् तज्जलशुद्ध[१] गात्रम् ॥९॥

[संस्कृत टीका]–'निजोत्तमाङ्गामर भूधराग्रे' स्वकीयोत्तमाङ्गमेव अमर भूधरः मेरुः तस्याग्रं शिखरं तस्मिन् निजोत्तमाङ्गामर भूधराग्रे। 'संस्नापितः' सम्यक् स्नापितः। कः? 'जिनेन्द्रचन्द्रः पार्श्वः'। केन? 'क्षीराब्धिदुग्धेन' क्षीरसमुद्रदुग्धेन। कैः? 'सुरेन्द्र वृन्दैः' देवेन्द्रवृन्दैः। 'स्वं चिन्तयेत्' आत्मानं ध्यायेत्। 'तज्जलशुद्धगात्रम्' तत्स्नानोदकेन शुद्धं शरीरं यथा भवति ॥९॥

[हिन्दी टीका]–उसके बाद मंत्रवादी स्वयं के मस्तकरूपी सुमेरुपर्वत के अग्रभाग में इन्द्रों के समुदाय से सहित क्षीर समुद्र के दूध रूप जल से स्नान कराये गये ऐसे श्री पार्श्वनाथ जिनेश्वर के स्नान जल से अपने को शुद्ध शरीर वाला चिन्तवन करे।

भावार्थ–पश्चात मंत्रवादी अपने मस्तक को सुमेरु पर्वत है और उस पर्वत पर पाण्डुकशिला है, चतुर्निकाय देवों के अधिपति इन्द्रों से क्षीरसागर का जल लाकर अभिषेक किया गया है, उस अभिषेक जल (गन्धोदक) से अपने को शुद्ध शरीरवाला कल्पना करें ॥९॥

भूतग्रह[२] शाकिन्यो ध्यानेनानेन नोपसर्पन्ति।
अपहरति पूर्वसञ्चितमपि दुरितं त्वरितमेवेह ॥१०॥

[संस्कृत टीका]–'भूतग्रहशाकिन्यः' भूतानि च ग्रहाश्च शाकिन्यश्च भूतग्रहशाकिन्यः। 'ध्यानेनानेन' अनेन कथितध्यानेन। 'नोपसर्पन्ति' उपसर्पणं कर्तुं न शक्नुवन्ति। 'पूर्वसञ्चितमपि' प्राग्जन्मोपार्जितमपि। किं तत्? 'दुरितम्' दुःकर्म। 'त्वरितमेव' शीघ्रमेव। 'अपहरति' नाशयति ॥१०॥

[हिन्दी टीका]–इस प्रकार उपरोक्त ध्यान करने से भूत, ग्रह, शाकिन्यादि कभी भी उपसर्ग नहीं कर सकते हैं और पहले किये हुये दुष्कर्मरूपी पाप शीघ्र ही नष्ट होते हैं। अर्थात् इस प्रकार के चिन्तवन से और ध्यान से ग्रह, भूत, प्रेत, शाकिनी डाकीनी आदि का उपसर्ग नहीं हो सकता और सर्व पाप 'तत्क्षण' नष्ट हो जाते हैं ॥१०॥

---

१. 'धौतः' इति ख पाठः।
२. "उरग" इति ख पाठः।

पर्यङ्कासनसंस्थः समीपतरवर्ति पूजन द्रव्यः ।
दिग्वनितानां तिलकं स्वस्य च कुर्यात् सुचन्दनतः ।।११।।

[संस्कृत टीका]—'पर्यङ्कासनसंस्थः' पल्यङ्कासने संस्थः । 'समीपतरवर्ति-पूजन द्रव्यः' स्वपार्श्वस्थापिताष्टविधपूजोपकरणद्रव्यः। 'दिग्वनितानां तिलकं' पूर्वाद्यष्ट-दिग्वधूनां तिलकं विशेषकम् । 'स्वस्य च' आत्मनश्चापि । 'सुचन्दनतः' शोभनेन चन्दनेन तिलकं 'कुर्यात्' करोतु ।।११।।

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी पर्यङ्कासन पर बैठकर, पास में पूजन के लिये आठों ही द्रव्यों का सामान रखकर, दिशारूपी अष्ट वधूओं को और अपने को सुगन्धित चन्दन से तिलक लगाकर, सुसज्जित करें । अर्थात् अपने को और दिग्वधुओं को चन्दन द्रव्य से तिलक करें और पूजन के लिये अष्ट द्रव्य पास में रखें ।।११।।

पन्नगाधिपशेखरां विपुलारुणाम्बुज विष्टरां ।
कुर्कुटोरगवाहनामरुणप्रभां कमलाननाम् ।
त्र्यम्बकां वरदाङ्कुशायतपाशदिव्य फलाङ्कितां ।
चिन्तयेत् कमलावतीं जपतां सतां फलदायिनीम् ।।१२।।

[संस्कृत टीका]—'पन्नगाधिपशेखरां' पन्नगानां अधिपः पन्नगाधिपः धरणेन्द्रः शेखरे मुकुटाग्रे विद्यते यस्याः सा पन्नगाधिपशेखरा, ताम् । किं विशिष्टाम् ? 'विपुलारुणाम्बुजविष्टराम्' विपुलं-विस्तीर्णं अरुणाम्बुजमेव विष्टरं आसनं यस्याः सा विपुलारुणाम्बुजविष्टरा ताम् । पुनः किं विशिष्टाम् ? 'कुर्कुटोरगवाहनाम्' कुर्कुट सर्पवाहनाम् । पुनः किं विशिष्टाम् ? 'अरुण प्रभां' सिन्दूरवत् प्रभा-दीप्तिर्विद्यते यस्याः सा ताम् । पुनः किं विशिष्टाम् ? 'कमलाननाम्' कमलवद् आननं मुखं यस्याः सा कमलाननां ताम् । 'त्र्यम्बकाम्' त्रीणि अम्बकानि लोचनानि विद्यन्ते यस्याः सा त्र्यम्बका ताम् । पुनः किं विशिष्टाम् ? 'वरदाङ्कुशायतपाशदिव्यफलाङ्कितम्' वरदश्च अङ्कुशश्च आयत पाशश्च दिव्य फलं च वरदाङ्कुशायतपाशदिव्य फलानि तैः अङ्किताः चिह्निताः करा यस्याः सा वरदाङ्कुशायतपाशदिव्यफलाङ्किता ताम् । 'चिन्तयेत्' ध्यानं कुर्यात् । काम् ? 'कमलावतीम्' पद्मावतीम् । किंविशिष्टाम् ? 'जपतां' जाप्यं कुर्वतां 'सतां' सत्पुरुषाणां 'फलदायिनीं' फलं ददातीति तां फलदायिनीम् ।।१२।।

[हिन्दी टीका]—जिसका मस्तक शेषनागरूप धरणेन्द्र से शोभित है, और जो लाल वर्ण के कमलासन से सहित है, कुर्कुट नाग जिसका वाहन है और उगते हुए

बाल सूर्य के समान जिसका वर्ण है, सिन्दूर वर्ण के समान जिसकी प्रभा है, मुख जिसका कमल के समान है, तीन नेत्रों से सहित है हाथों में जिसके क्रमशः, वरदान, अंकुश, नागपाश और दिव्य फलवाली अंकित है तथा जपने वाले मंत्री को नित्य ही फल को देने वाली महादेवी पद्मावती का ध्यान करे ।।१२।।

परिज्ञायांशकं पूर्वं साध्यसाधकयोरपि ।

मत्रं निवेदयेत् प्राज्ञो व्यर्थं तत्फलमन्यथा ।।१३।।

[संस्कृत टीका]—'परिज्ञाय' सम्यग् ज्ञात्वा । किम् ? 'अंशकं' मात्रांशकम् । 'पूर्वं' प्राक् । कयोः ? 'साध्यसाधकयोः' साध्यः-मन्त्रः, साधकः मन्त्री तयोः साध्यसाधकयोः । 'अपि' निश्चयेन । 'मन्त्रं निवेदयेत्' मन्त्रोपदेशं कुर्यात् । 'प्राज्ञो' श्रीमान् । 'अन्यथा' अंशकज्ञानाभावे । 'तत्फलं' तस्य मन्त्रस्य फलम् । 'व्यर्थं' निरर्थकं भवेत् ।।१३।।

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी सत्पुरुष को मंत्र और मंत्री के अंशों को जानकर अर्थात् साध्य और साधक के अंशों को जानकर मंत्र का दान करें, अथवा स्वयं प्रयोग में लावें । कारण कि अंश और अंशी के ज्ञान के शिवाय जपनेवाले मंत्र का फल निरर्थक होता है । यहाँ साध्य माने मंत्र और साधक माने जप करनेवाला (मंत्रसिद्ध करने वाला) है ।।१३।।

साध्य और साधक के अंशगणने की क्रिया

साध्यसाधकयोर्नामानुस्वारव्यञ्जनस्वरम् ।

पृथक् कृत्वा क्रमात् स्थाप्यमूर्ध्वाधः प्रविभागतः ।।१४।।

[संस्कृत टीका]—'साध्यसाधकयोर्नाम' साध्यो मन्त्रः साधको मन्त्री तयोर्नाम । 'अनुस्वार' 'व्यंञ्जनं' ककारादि वर्णान् 'स्वरं' अकारादि स्वरान् । ।पृथक् कृत्वा' पृथग् विश्लेष्य । 'क्रमात् स्थाप्यम्' साध्यसाधक परिपाट्या संस्थाप्यम् । कथम् ? 'ऊर्ध्वाधः प्रविभागतः' साध्यनाम ऊर्ध्वतः साधकनाम अधः कृत्वा अनेन प्रविभागक्रमेण स्थापयेत् ।।१४।।

[हिन्दी टीका]—मंत्रसाधन करने वाले के नामाक्षर और मंत्र के नामाक्षरों को पृथक्-पृथक् स्थापन करें । यानी नाम और मंत्र अक्षरों के अनुस्वार, व्यंजन और स्वरों को अलग-अलग करके ऊपर मंत्र के और नीचे मंत्री के नामाक्षरों को क्रम से रखें ।।१४।।

साध्यनामाक्षरं गण्यं साधकाह्वयवर्णतः ।
नपुंसकं परित्यज्य कुर्यात् तद् वेदभाजितम् ।।१५।।

[संस्कृत टीका]—'साध्यनामाक्षरं' साध्यनाम वर्णान् । 'साधकाह्वयवर्णतः' साधक नामाक्षरेभ्यः । 'गण्यं' गणयेत् । किं कृत्वा ? 'नपुंसकं परित्यज्य' ऋ ॠ लृ ॡ इति नपुंसकानि परित्यज्य । 'तद् वेद भाजितं' तत्-साध्यसाधकयोरनुस्वार व्यञ्जन-गण्यमानराशि 'वेद भाजितं' चतुर्भाजितं कुर्यात् ।।१५।।

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी के नामाक्षरों से मंत्र के नाम के अक्षरों को नपुंसक अक्षरों को ऋ ॠ लृ ॡ छोड़कर गणना करें, जो संख्या आवे उसको जोड़कर चार का भाग दें। उदाहरणार्थ :—

जैसे—"णमो सिद्धाणं" यह मंत्र है, इसमें से अक्षर, स्वर, व्यंजन, अनुस्वार आदि को अलग-अलग करें।

मंत्राक्षरों को अलग-अलग रखने का क्रम :—

ण् + अ + म् + ओ + स् + इ + द् + ध् + आ + ण् + अ + अनुस्वार

इसमें—व्यंजन संख्या = ६

स्वर संख्या = ५

अनुस्वार संख्या = १

अक्षर संख्या = ५

अब मंत्री के नामाक्षर में से स्वर, व्यंजन, अक्षर, अनुस्वार को अलग-अलग करते हैं।

नाम—देवदत्त

द् + ए + व् + अ + द् + अ + त् + त् + अ =

इसमें— व्यंजन संख्या = ५

स्वर संख्या = ४

अक्षर संख्या = ४

मंत्राक्षर संख्या = ५

मंत्री के नामाक्षर संख्या = ४ इन दोनों को जोड़ें

———

फिर ९ संख्या में चार का भाग दें— ४) ९ (२
८
————
१ शेष (आय/संख्या)

एक शेष रहने पर सिद्ध समझे, आदि आगे समझाते हैं।

आयो भागोद्धरितं तं चाद्यं स्थापयेत् क्रमाद् धीमान् ।
एक द्वित्रिचतुर्वर्णान् सिद्धं साध्यं सुसिद्धमरिः ॥१६॥

[संस्कृत टीका]–'आयो भागोद्धरितं' प्रकृतसाध्यसाधकराशौ चतुर्भिर्भागे हृते यद् उद्धरितं स आयः । 'तं च' उद्धरितं आयं च । 'आद्यं स्थापयेत्' विश्लेषित साध्यमात्रानुस्वार व्यञ्जनपङ्क्तौ आद्यौ स्थापयेत् । कथम् ? 'क्रमात्' पङ्क्तौ यथानुक्रमेण । कः ? धीमान् । 'एक द्वित्रिचतुर्वर्णान् सिद्धं साध्यं सुसिद्धं अरिः' एक उद्धरिते सिद्धम्, द्विरुद्धरिते साध्यम्, त्रिरुद्धरिते सुसिद्धम्, चतुरुद्धरिते शत्रुः इत्येवं ज्ञातव्यम् ॥१६॥

[हिन्दी टीका]–भाग करने के बाद जो शेष रहे उसको आय कहते हैं। उस आय को बुद्धिमान मंत्री एक, दो, तीन, चार को अनुक्रम से रखे, एक संख्या रहे तो वह सिद्ध २ रहे तो साध्य, तीन रहे तो सुसिद्ध और चार रहे तो शत्रु जानना चाहिये ॥१६॥

सिद्धसुसिद्धं ग्राह्यं साध्यं शत्रुं च वर्जयेद् धीमान्[1] ।
सिद्धसुसिद्धे फलदे[2] विफलं साध्ये रिपौ[3] वाऽऽये ॥१७॥

[संस्कृत टीका]–'सिद्धसुसिद्धं ग्राह्यं' चतुरायमध्ये सिद्धसुसिद्धं इत्यायद्वयं ग्राह्यम् । 'साध्यं शत्रुं च वर्जयेत्' तदायमध्ये साध्यं शत्रुं च इत्यायद्वयं वर्जयेत् । कः ? 'धीमान्' बुद्धिमान् । 'सिद्धसुसिद्धं फलदे' सिद्धसुसिद्धं इत्यायद्वते सफले मन्त्रस्य फलं भवति । 'विफलं साध्ये रिपौ वाऽऽये' साध्ये रिपौ वा आयद्वये मन्त्रं विफलं स्यात् ॥१७॥

[हिन्दी टीका]–इस प्रकार उपरोक्त आय में मंत्रवादी सिद्ध और सुसिद्ध मंत्र को ग्रहण करे, यानी जाप्य योग्यमंत्र है ऐसा समझे। इस प्रकार का जप फलदायक होता है। साध्य और शत्रु मंत्र का त्याग करें, क्योंकि इन मंत्रों के जपने से फल मिल

---

१. प्राज्ञः इति ख पाठः ।
२ सफले इति ख पाठः ।
३. रिपोरपि इति ख पाठः ।

नहीं सकता है। निष्फल होते हैं और हानि पहुँचाने वाले होते हैं। इसलिये मंत्रवादी साध्य और शत्रु मंत्रों को कभी भी जापने के लिये प्रयत्न न करें ॥१७॥

फलदं कतिपय दिवसैः सिद्धं चेत् साध्यमपि दिनैर्बहुभिः ।
झटिति फलदं सुसिद्धं प्राणार्थ विनाशनः शत्रुः ॥१८॥

[संस्कृत टीका]—'सिद्धं चेत्' सिद्धं मन्त्रं चेत् । 'कतिपय दिवसैः' कियद्भिर्वासरैः । 'फलदं' फलदायकं भवति । 'साध्यमपि दिनैर्बहुभिः' अपि पश्चात् साध्यं मन्त्रं बहुभिर्दिनैः फलदं भवति । 'झटिति फलदं सुसिद्धं' सुसिद्धं मन्त्रं झटिति शीघ्रं फलदायकं भवति । 'प्राणार्थविनाशनः शत्रुः' शत्रुर्मन्त्रं प्राणार्थविनाशकरो भवति ॥१८॥

[हिन्दी टीका]—अब यहाँ पर मल्लिषेणाचार्य कौनसा मंत्र कितने दिनों में और कब फल देता है सो कहते हैं। साध्य मंत्र कई दिनों के बाद फलदायक होते हैं। सुसिद्ध मंत्र शीघ्र ही फलदायक होते हैं। और शत्रुमंत्र के जप करने से प्राणों का विनाश होता है और प्रयोजन का भी नाश होता है ॥१८॥

आदावन्ते शत्रुर्यदि भवति तदा परित्यजेन्मन्त्रम् ।
स्थानत्रितये शत्रुर्मृत्युः स्यात् कार्यहानिर्वा ॥१९॥

[संस्कृत टीका]—'आदावन्ते शत्रुर्यदि भवति' मन्त्रस्यादौ मन्त्रान्ते यदि शत्रुर्भवति 'तदा परित्यजेन्मन्त्रम्' मन्त्रं परिवर्जयेत् । 'स्थानत्रितये शत्रुर्मृत्युः स्यात्' आदिमध्यावसाने यदि शत्रुर्भवति मन्त्रस्य तदा मृत्युर्भवति 'कार्यहानिर्वा' कार्यनाशो वा भवति ॥१९॥

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी को मंत्र के आदि में और अंत में शत्रु हो तो मंत्र का त्याग करना चाहिये। तीनों स्थानों में आदि, मध्य और अंत में शत्रु हो तो, वह मंत्र मंत्रवादी के शरीर को नष्ट करता है (प्राण हर लेता है) अथवा उसके कार्य का नाश करता है ॥१९॥

शत्रूर्भवति यदाऽऽदौ मध्ये सिद्धं तदन्तगं साध्यम् ।
कष्टेन भवति महता स्वल्प फलं चेति कथनीयम् ॥२०॥

[संस्कृत टीका]—'शत्रुः' इत्यादि । यदा आयगणने प्रथमतः शत्रुर्भवति, मन्त्रस्य मध्ये सिद्धं भवति । 'तदन्तगं साध्यं मन्त्रस्यान्तगं साध्यं चेत् । 'कष्टेन भवति महता' महता अत्यन्त क्लेशेन जायते स्वल्प फलम् । च समुच्चये । 'इति' अनेन प्रकारेण कथनीयम् ॥२०॥

[हिन्दी टीका]–आय की गणना करते समय यदि मंत्र के आदि में शत्रु हो मध्य में सिद्ध हो और अंत में साध्य हो, तो मंत्रवादी को बहुत कष्ट होता है, फल भी बहुत कम (अल्प) होता है। इस प्रकार वर्णन समझना चाहिये ।।२०।।

अन्ते यदि भवति रिपुः प्रथमे मध्ये च सिद्धयुगपतनम् ।
कार्यं यदादि जातं तन्नश्यति सर्वमेवान्ते ।।२१।।

[संस्कृत टीका]–'अन्ते यदि भवति रिपुः' मन्त्रस्यान्ते यदि शत्रुर्भवति । 'प्रथमे मध्ये च सिद्धयुगपतनम्' मन्त्रादौ मन्त्रमध्ये च सिद्धयुग्मपातो यदि भवति । 'कार्यं यदादिजातं' एवंविध मन्त्रे यत् पूर्वं जातं कार्यं अमितफलं 'तन्नश्यति सर्वमेवान्ते' तत् कार्य जनित फलं सर्वमेवान्ते अवसाने नाशं प्राप्नोति ।।२१।।

[हिन्दी टीका]–मंत्रवादी के मंत्र के अंत में शत्रु हो और आदि व मध्य में सिद्ध हो तो जो कार्य प्रथम में सिद्ध होगा, वह अन्त में अवश्य नष्ट होगा, ऐसा ऐसा जानना चाहिये ।।२१।।

सिद्धं सुसिद्धमथवा रिपुणाऽन्तरितं निरीक्ष्यते यत्र ।
दुःखापायप्रबलं भवतीति विवर्जयेत् कार्यम् ।।२२।।

[संस्कृत टीका]–'अथवा' अन्य प्रकारेण 'सिद्धं' सिद्धपदम् 'सुसिद्धं' सुसिद्धपदं 'रिपुणाऽन्तरितं' शत्रुपदान्तरितं यदि 'निरीक्ष्यते यत्र' यस्मिन् मन्त्रे निरीक्ष्यते दृश्यते तदा 'दुःखापाय प्रबलं' क्लेशानर्थप्रचुरं भवति 'इति' एवं ज्ञात्वा 'विवर्जयेन्मन्त्रं' साधनकार्यं परिवर्जयेत् ।।२२।।

[हिन्दी टीका]–जो मंत्र में सिद्ध, सुसिद्ध के मध्य में शत्रु दिखता हो तो मंत्रवादी ऐसे विघ्नकर्ता मंत्र को शीघ्र ही छोड़े। साधन कार्य को छोड़ देवे। जपने योग्य मंत्रों को देखकर ही जपे तब ही पूर्ण सफलता मिल सकती है ।।२२।।

इत्युभयभाषाकविशेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते भैरव पद्मावती कल्पे सकलीकरणं नाम द्वितीयः परिच्छेदः ।।२।।

इस प्रकार भैरव पद्मावती कल्प की हिन्दी भाषा विजया टीका में सकली करण, नामक द्वितीय अधिकार समाप्त हुआ।

इसके लिये अकड़म चक्र देखें।

अकडम चक्र नं॰ १

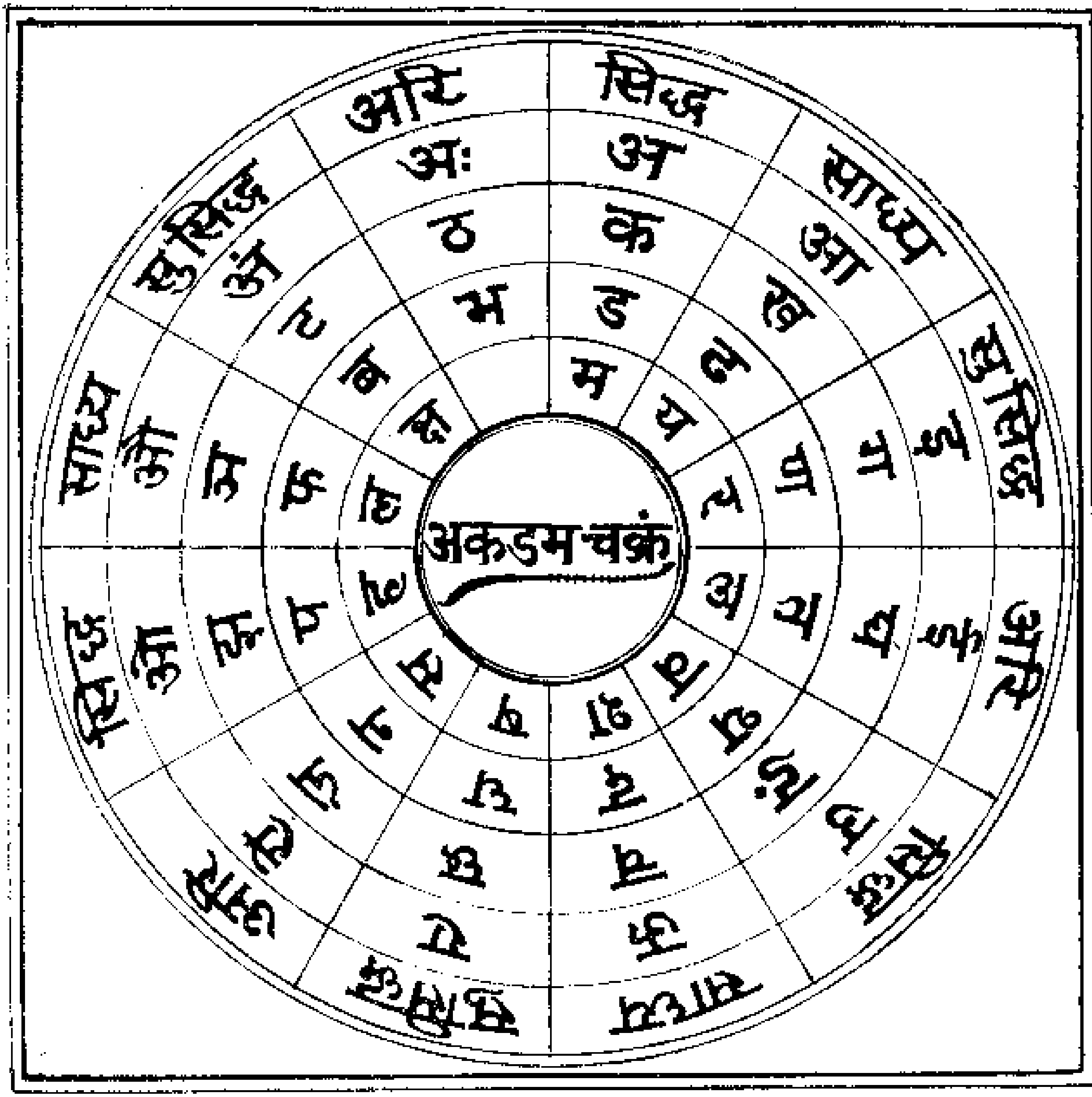

तृतीयो देव्यर्चनाक्रम परिच्छेदः

दीपनसुपल्लव–सम्पुट-रोध-ग्रथना–विदर्भणैः कुर्यात् ।
शान्ति–द्वेष-वशीकृत–बन्ध–स्त्र्याकृष्टि–संस्तम्भम् ॥१॥

[संस्कृत टीका]–'दीपन' दीपनेन शान्तिकं कुर्यात्, 'पल्लव' पल्लवेन विद्वेषणं कुर्यात्, 'सम्पुट' सम्पुटेन वश्यं कुर्यात्, 'रोधन' रोधनेन बन्धं कुर्यात्, 'ग्रथना' ग्रथनया स्त्र्याकृष्टि कुर्यात्, विदर्भणैः 'विदर्भणेन क्रोधादि स्तम्भं कुर्यात् ॥१॥

[हिन्दी टीका]–दीपन कर्म से शांति करे, पल्लव कर्म से विद्वेषण करे, सम्पुट कर्म से वशीकरण करे, रोधन कर्म से मारण करे, ग्रंथन कर्म से स्त्री आकर्षण करे और विदर्भण कर्म से क्रोधादि स्तम्भन करे ॥१॥

अथदीपनादीनां व्याख्या–
आदौ नामनिवेशो दीपनमन्ते च पल्लवो ज्ञेयः ।
तन्मध्यगतं सम्पुटमथादिमध्यान्तगो रोधः ॥२॥
ग्रथनं वर्णान्तरितं द्व्यक्षरमध्यस्थितो विदर्भः स्यात् ।
षट्कर्मकरणमेतज् ज्ञात्वाऽनुष्ठानमाचरेन्मन्त्री ॥३॥

[संस्कृत टीका]–'आदौ नामनिवेशो दीपनम्' मन्त्रस्यादौ यन्नामनिवेशनं तद् दीपनं स्यात् । 'अन्ते च पल्लवो ज्ञेयः' मन्त्रस्यान्ते यन्नामनिवेशनं स पल्लवो 'ज्ञेयः' ज्ञातव्यः । 'तन्मध्यगतं सम्पुटं' तन्मन्त्रमध्ये निवेशितं नाम सम्पुटमिति स्यात् । 'अथादि-मध्यान्तगो रोधः' अथ पश्चात् मन्त्रस्यादौ मध्ये अन्ते च यन्नामनिवेशनं स रोधः स्यात् । 'ग्रथनं वर्णान्तरितम्' मन्त्रस्याक्षरमेकं नामाक्षरमेकं एवं वर्णग्रथनं तद् ग्रथनमिति स्यात् । 'द्व्यक्षरमध्ये स्थितो विदर्भः स्यात्' मन्त्रस्याक्षरद्वय प्रति पश्चाद् यन्नामनिवेशः स विदर्भः स्यात् । 'षट्कर्मकरणमेतत्' एतत् शास्त्रादि षट्कर्म क्रिया विधानं 'ज्ञात्वा' बुद्ध्वा अनुष्ठानं मन्त्रवादी आचरेत् ॥२॥३॥

[हिन्दी टीका]–मंत्र के आदि में नाम लिखना 'दीपन' कहलाता है, अंत में नाम लिखने से 'पल्लव' कहलाता है, मध्य में नाम लिखने से 'संपुट' कहलाता है । आदि में, मध्य में और अन्त में साध्य का नाम लिखने से 'रोधन' कहलाता है, मंत्र के एक अक्षर के बाद नाम लिखने से 'ग्रंथन' होता है, मंत्र के दो-दो अक्षरों के बाद नाम लिखने से 'विदर्भ' कहलाता है । इसी को षट्कर्म कहते हैं, मंत्रवादी इन षट्कर्मों को जानकर ही अनुष्ठान (मंत्राराधना आदि) प्रारंभ करे ॥२॥३॥

दिक्कालमुद्रासन पल्लवानां भेदं परिज्ञाय जपेत् स मन्त्री ।
न चान्यथा सिध्यति तस्य मन्त्रं कुर्वन् सदा तिष्ठतु जाप्यहोमम् ।।४।।

[संस्कृत टीका]–'दिक्काल मुद्रासनपल्लवानां' दिक् च कालश्च मुद्रा च आसनं च पल्लवश्च दिक्कालमुद्रासनपल्लवाः तेषां दिक्कालमुद्रासन पल्लवानां, भेदं विवरणं, 'परिज्ञाय' सम्यग् ज्ञात्वा, स 'मन्त्री' मन्त्रवादी जपेत् 'जापं' कुर्यात् । 'न चान्यथा सिध्यति तस्य मन्त्रम्' अन्यथा दिक्कालादि भेद परिज्ञानाभावे तस्य मन्त्रिणः 'मन्त्रं न सिध्यति' सिद्धि न प्राप्नोति । 'कुर्वन् सदा तिष्ठतु जाप्यहोमं' जाप्यहोमं कुर्वन् सन् सदा तिष्ठतु परं न सिध्यति ।।४।।

[हिन्दी टीका]–मंत्रवादी दिशा, काल, मुद्रा, आसन और पल्लवों के भेदों को जानकर ही जपादि प्रारंभ करे, अगर इनका ज्ञान प्राप्त नहीं किया तो कितनी भी मंत्राराधना करे और होमादिक क्रिया करे फिर भी मंत्रवादी को मंत्रों की सिद्धि नहीं हो सकती है, इसलिये प्रथम इनका ज्ञान करना परम आवश्यक है ।।४।।

वश्याकृष्टि स्तम्भननिषेध विद्वेष चलनशान्तिकं पुष्टिम् ।
कुर्यात् सोमय मामरहराग्निमरुदब्धिनिर्ऋति दिग्वदनः ।।५।।

[संस्कृत टीका]–'वश्याकृष्टिस्तम्भननिषेध विद्वेषचलन शान्तिकं पुष्टिम्' एतानि कर्माणि । 'सोमयमामरहराग्नि मरुदब्धिनिर्ऋतिदिग्वदनः' । 'सोम' उत्तराभि मुखेन वश्यकर्म । 'यम' दक्षिणाभिमुखेन 'आकृष्टि' आकर्षण कर्म । 'अमर' पूर्वा भिमुखेन स्तम्भन कर्म । 'हर' ईशानाभिमुखेन निषेध कर्म । 'अग्नि' अग्निदिङ्मुखेन विद्वेषकर्म । 'मरुत्' वायव्यदिङ्मुखेन 'चलन' उच्चाटन कर्म । 'अब्धि' पश्चिमाभिमुखेन 'शान्तिकं' शान्ति कर्म। नैर्ऋति दिग्वदनः' नैर्ऋत्याभिमुखेन पौष्टिक कर्म । इति दिग्व-दनो भूत्वा वश्यादि कर्माणि कुर्यात् ।।५।।

[हिन्दी टीका]–वशीकरण करने के लिये उत्तराभिमुख होकर मंत्र कर्म करे । दक्षिण दिशा में मुंह करके आकर्षण कर्म करें । स्तम्भन कर्म करने के लिये पूर्व दिशा में मुंह करके मंत्रजाप्य करे । ईशान दिशा में मुंह करके निषेधकर्म के लिये जाप्य करें । आग्नेय दिशा में विद्वेषण कर्म करना चाहिये । उच्चाटन कर्म करने के लिये वायव्य कोण में मुंह करना चाहिये । पश्चिम दिशा में मुंह करके शांतिकर्म करे । पौष्टिक कर्म करने के लिये नैऋत्य दिशा में मुंह करके मंत्रजाप्य करे ।।५।।

पूर्वाह्ने वश्यकर्माणि मध्याह्ने प्रीतिनाशनम् ।
उच्चाटनं पराह्ने च सन्ध्यायां प्रतिषेधकृत[१] ।।६।।
शान्ति कर्मार्धरात्रे च प्रभाते पौष्टिकं तथा ।
वश्यं मुक्त्वाऽन्यकर्माणि सव्यहस्तेन योजयेत् ।।७।।

[संस्कृत टीका]–'पूर्वाह्ने' इत्यादि । पूर्वाह्नकाले वसन्ततौ वश्याकृष्टि स्तम्भन कर्माणि कुर्यात् । 'मध्याह्ने प्रीति नाशनम्' मध्याह्नकाले ग्रीष्मतौ विद्वेषणं कुर्यात् । 'उच्चाटनं पराह्ने' अपराह्ने वर्षतौ उच्चाटनं कुर्यात् । च सम्मुच्चये । 'प्रभाते पौष्टिकं तथा' प्रभात समये शिशिरतौ पौष्टिकं कर्म कुर्यात् । वश्यं मुक्त्वा' वश्य कर्म वर्जयित्वा । 'अन्य कर्माणि' इतराकृष्टि कर्माणि 'सव्यहस्तेन' दक्षिण हस्तेन 'योजयेत्' कुर्यात्, वश्यकर्मैव वामहस्तेन योजयेदित्यर्थः ।।६।।७।।

इति कर्मकालनिरूपणम् ।।

[हिन्दी टीका]–दिन के पूर्व भाग में, अर्थात् बारह बजे के पहले वशीकरण कर्म, आकर्षण कर्म और स्तंभन कर्म करना चाहिये । मध्याह्न काल में विद्वेषण कर्म करना चाहिये उच्चाटन कर्म दिन के पिछले भाग में करे अर्थात् अपराह्न काल में करे । सायंकाल में निषेध कर्म के लिये क्रिया करे । शांतिकर्म के लिये अर्द्धरात्रि में मंत्र जाप्य करे । प्रातःकाल में पौष्टिक क्रिया करे, वशीकरण क्रिया को छोड़कर अन्य कार्य को दाहिने हाथ से करे । यानी आकर्षणादि सब कर्मों को सीधे (दाहिने) हाथ से करे और वशीकर कर्म उल्टे (बांये) हाथ से करे ।।६।।७।।

मुद्राकरण

अङ्कुश–सरोज–बोध–प्रवाल–सच्छङ्ख–वज्रमुद्राः स्युः ।
आकृष्टि–वश्य–शान्तिक–विद्वेषण–रोध–वधसमये ।।८।।

[संस्कृत टीका]--'अङ्कुश' अङ्कुश मुद्रा 'आकृष्टि' आकर्षण कर्मणि । 'सरोज' सरोजमुद्रा 'वश्य' वश्य कर्मणि । 'बोध' ज्ञान मुद्रा 'शान्तिक' शान्तिक-पौष्टिकयोः । 'प्रवाल' पल्लवमुद्रा 'विद्वेषणे' फट् कर्मणि । 'सच्छङ्ख' सम्यक् शङ्खमुद्रा 'रोध' स्तम्भन कर्मणि । 'वज्र' वज्रमुद्रा 'वधसमये' प्रतिषेधसमये । इति षट्कर्मकरणे एता मुद्राः 'स्युः' भवेयुः ।।८।।

---

१. 'मारणं स्मृतम्' इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]—आकर्षण कर्म करने के लिये अंकुश मुद्रा से जाप्य करे, सरोज (कमल) मुद्रा करके वशीकरण का जाप्य करे, शांतिक पौष्टिक कर्म के लिये ज्ञान मुद्रा से जाप्य करे, विद्वेषण क्रिया के लिये और उच्चाटन के लिये प्रबाल (पल्लव) मुद्रा से करे, स्तंभन कर्म करने के लिये शंख मुद्रा करे और मारण (निषेध) कर्म के लिये वज्र मुद्रा से जाप्य करे ।।८।।

आसनविधान

दण्ड स्वस्तिक पङ्कजकुक्कुट कुलिशोच्च भद्रपीठानि ।
उदयार्क रक्त शशधर धूमहरिद्रासिता वर्णाः ।।९।।

[संस्कृत टीका]—'दण्ड' दण्डासनं आकर्षण कर्मणि। 'स्वस्तिक' स्वस्तिकासनं वश्यकर्मणि। 'पङ्कज' पङ्कजासनं शान्तिकपौष्टिकयोः। 'कुक्कुट' कुक्कुटासनं विद्वेषणोच्चाटनयोः। 'कुलिश' वज्रासनं स्तम्भककर्मणि। 'उच्चभद्रपीठानि' विस्तीर्ण भद्रपीठासनं निषेध कर्मणि। 'इत्येतान्यासनानि' षट्कर्मकरणे योजनीयानि ।

'उदयार्क' अरुणवर्णं आकृष्टि कर्मणि। 'रक्त जपाकुसुमवर्णं वश्यकर्मणि। 'शशधर' चन्द्रकान्तवर्णं शान्तिक पौष्टिकयोः। 'धूम' धूम्रवर्णं विद्वेषणोच्चाटनयोः। 'हरिद्रा' पीतवर्णं स्तम्भनकर्मणि। 'असित' कृष्णवर्णं निषेध कर्मणि। इत्येवंविधा वर्णाः षट्कर्मकरणे प्रयोक्तव्याः। इत्यासनवर्ण भेदाः कथिताः ।।९।।

[हिन्दी टीका]—दण्डासन से आकर्षण कर्म करे, स्वास्तिकासन स वशीकरण कर्म करे, शांतिक पौष्टिक कर्म करने के लिये कमलासन से बैठे, कुकुटासन स बैठ कर विद्वेषण, उच्चाटन क्रिया करे, वज्रासन से स्तंभन कर्म करे। भद्रासन से बैठ कर मंत्री (निषेध) मारण कर्म करे ।

आकर्षण कर्म के लिये बाल सूर्य के समान लाल रंग, वशीकरण कर्म के लिये एक दम लाल वर्ण, शांतिक और पौष्टिक कर्म के लिये चंद्रमा के समान वर्ण, विद्वेषण और उच्चाटन कर्म के लिये धूम्रवर्ण, स्तम्भन के लिये हल्दी के समान रंग और मारण कर्म के लिये कालावर्ण का विचार करे ।।९।।

पलव विचार

विद्वेषणाकर्षण चालनेषु हुं वौषडन्तं फडिति प्रयोज्यम् ।
वश्ये वषड् वैरिवधे च घे घे स्वाहा स्वधा शान्तिकपौष्टिके च ।।१०।।

[संस्कृत टीका]—'विद्वेषरणत्यादि' विद्वेषरणे हुं इति पल्लवं प्रयोज्यम् । आकर्षण वौषडन्तं प्रयोज्यम् । उच्चाटने फडिति पल्लवं प्रयोज्यम् । वश्ये कर्मणि वषड् इति पल्लवं योज्यम् । वैरिवधे च घे घे इति पल्लवं योज्यम् स्तम्भने ठः ठः इति पल्लवं योज्यम् । 'स्वाहा' स्वाहेति पल्लवं शान्तिके योज्यम् । 'स्वधा' इति पल्लवं पौष्टिके योज्यम् । इतिषट्कर्मकरणे एते पल्लवा योजनीयाः ।।१०।।

[हिन्दी टीका]—षट् कर्म करने के लिये इस प्रकार पल्लवों की योजना करना चाहिये, विद्वेषण करना हो तो हुं पल्लव लगाकर मंत्र जाप्य करे, आकर्षण कर्म के लिये 'संवौषट्', पल्लव लगावे अथवा 'वौषट्' लगावे, उच्चाटन कर्म में 'फट्' पल्लव का प्रयोग करें, वश्य कर्म के लिये 'वषट्' पल्लव की योजना करे बैरी के वध में 'घे घे' पल्लव लगाकर जाप्य करे, स्तम्भन क्रिया में 'ठः ठः' का प्रयोग करे, शांतिक के लिये, स्वाहा का और पौष्टिक कर्म के लिये, स्वधा पल्लव का प्रयोग करके मंत्री को मंत्र का जाप्य करना चाहिये ।।१०।।

स्फटिक प्रवाल मुक्ताफल चामोकरपुत्रजीव कृतमणिभिः ।
अष्टोत्तर शतजाप्यं शान्त्याद्यर्थं करोतु बुधः ।।११।।

[संस्कृत टीका]—स्फटिककृतमणिभिः शान्तिकर्मणि । प्रवाल कृतमणिभिः वश्याकर्षणयोः । मुक्ताफलकृतैः पौष्टिक कर्मणि । 'चामीकर' सुवर्णकृतमणिभिः स्तम्भन कर्मणि । पुत्रजीवकृतमणिभिः विद्वेषणोचाटन प्रतिषेधकर्मणि । एतेषां कृतमणिभिः । 'अष्टोत्तर शत जाप्यं' अष्टाधिक शतं जाप्यं 'शान्त्याद्यर्थं' शान्त्याद्यर्थं शान्तिकं आदि कृत्वा 'बुधः' प्राज्ञः 'करोतु' कुर्यात् ।।११।।

[हिन्दी टीका]—शांति कर्म के लिये, स्फटिक मणि की माला, वशीकरण कर्म और आकर्षण कर्म के लिये प्रवालमणि की (मुंगा) माला को प्रयोग में लावे, पौष्टिक कर्म के लिये, सच्चे मोती की माला से जाप्य करे। स्तंभन कर्म के लिये सोने की माला से, विद्वेषण व उच्चाटन और मारण कर्म के लिये पुत्र जीवक मणि की माला से बुद्धिमान मनुष्य १०८ बार जाप्य करे ।।११।।

जाप्य के लिये अंगुलिविधान

मोक्षाभिचार शान्तिकवश्याकर्षेषु योजयेत् क्रमशः ।
अङ्गुष्ठाद्यङ्गुलिका मध्योऽङ्गुष्ठेन चाल्यन्ते ।।१२।।

(संस्कृत टीका)—'अङ्गुष्ठाद्यङ्गुलिका' अङ्गुष्ठमादि कृत्वा अङ्गुलीः मोक्षादि कर्मसु योजयेत् । कथम्? 'क्रमशः' क्रम परिपाट्या । 'मणयः' प्राक्कथितमणयः

'अङ्गुष्ठेन चाल्यन्ते 'मोक्षार्थी अङ्गुष्ठेन चालयेत् । अभिचार कर्मणि तर्जन्या, शान्तिक पौष्टिकयोः मध्यमाङ्गुल्या, वश्य कर्मणि अनामिकाङ्गुल्या, आकर्षण कर्मणि कनिष्ठाङ्गुल्या चालयेत् ॥१२॥

इति ग्रन्थानुसारेण विश्वकलादि भेदेन षट् कर्मणि व्याख्यातानि ॥

[हिन्दी टीका]—मोक्ष प्राप्ति के लिये अंगुठे से जाप्य करे, मरण कर्म के लिये तर्जनी से, शांतिक और पौष्टिक कर्म के लिये मध्यमागुंलि से जाप्य करे, वश्य कर्म के लिये अनामिका को चलावे और आकर्षण क्रिया करने के उद्देश्य से कनिष्ठिका अंगुली से मंत्री जाप्य करे ॥१२॥

※पीतारूणासितैः पुष्पैः स्तम्भनाकृष्टि मारणे ।
शांतिक पौष्टिकयोः श्वेतैः जपेन्मंत्रं प्रयत्नतः ॥१३॥

अर्थः—स्तम्भन कर्म में पीले पुष्पों से, आकर्षण के लिये लाल पुष्प, मारण कर्म में काले पुष्पों से, शांतिक और पौष्टिक कर्म के लिये सफेद पुष्पों से जाप्य करे ॥१३॥

महा देवि पद्मावती की सिद्धि करने का यंत्र

इदानीं देव्याराधन गुह्य यन्त्रोद्धारो विधीयते—
चतुरस्रं विस्तीर्णं रेखात्रयसंयुतं चतुर्द्वारम् ।
विलिखेत् सुरभिद्रव्यैर्यन्त्रमिदं हेमलेखन्या ॥१३॥

[संस्कृत टीका]—'चतुरस्रं' समचतुरस्रम् । 'विस्तीर्णं' विपुलं 'रेखात्रय संयुतं' रेखात्रितय संयुक्तम् । 'चतुर्द्वारं' चतुर्द्वारान्वितम् । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । 'सुरभिद्रव्यैः' कुम-कुम कस्तूरिकादि सुगन्धि द्रव्यैः । 'यन्त्रमिदं' इदं देव्या गुह्यन्त्रम् । 'हेम लेखन्या' स्वर्णलेखन्या ॥१३॥

[हिन्दी टीका]—देवी आराधना के यंत्र को सुगन्धित द्रव्यों से सोने की कलम लेकर लिखे । चौकोर विस्तार सहित तीन रेखाओं से संयुक्त चार द्वारों से सहित यंत्र बनावे ॥१३॥

※यह तेरह नं० का श्लोक हस्तलिखित प्रति में नहीं है । इस श्लोक को सूरत से प्रकाशित भैरव पद्मावती कल्प से उद्धरित किया है ।

मंत्र जाप्य करने के लिये पल्लवादि विधान का कोष्टक

१	शान्ति कर्म	पौष्टिक कर्म	वश्य कर्म	आकर्षण कर्म
२	पश्चिम वरुण दिशा	नैऋत्य दिशा	कुबेर दिशा उत्तर	दक्षिण यम् दिशा
३	अर्द्ध रात्रि	प्रभात काल	पूर्वान्हि काल	पूर्वान्हि काल
४	ज्ञान मुद्रा	ज्ञान मुद्रा	सरोज मुद्रा	अंकुश मुद्रा
५	पर्यङ्कासन	पंकजासन	स्वस्तिकासन	दण्डासन
६	स्वाहा पल्लव	स्वधा पल्लव	वषट् पल्लव	वौषट् पल्लव
७	श्वेत वस्त्र	श्वेत वस्त्र	अरुण पुष्प	उदयार्क वस्त्र
८	श्वेत पुष्प	श्वेत पुष्प	रक्त वर्ण	अरुण पुष्प
९	श्वेत वर्ण	श्वेत वर्ण	रक्त वस्त्र	उदयार्क वर्ण
१०	पूरक योग	पूरक योग	पूरक योग	पूरक योग
११	दीपन आदि नाम	दीपन आदि नाम	संपुट आदि मध्य नाम	ग्रन्थन वर्णांतरित नाम
१२	स्फटिक मणि	मुक्ता मणि	प्रवाल मणि	प्रवाल मणि
१३	मध्यमांगुली	मध्यमांगुली	अनामिका	कनिष्ठका
१४	दक्षिण हस्त	दक्षिण हस्त	वाम हस्त	वाम हस्त
१५	वाम वायु	वाम वायु	वाम वायु	वाम वायु
१६	शरद ऋतु	हेमन्त ऋतु	वसन्त ऋतु	वसन्त ऋतु
१७	जल मण्डल मध्य	जल मण्डल	जल मण्डल	अग्नि मण्डल
१८	अर्द्ध रात्रि	प्रभात काल	पूर्वान्हि काल	पूर्वान्हि काल

नोटः—प्रत्येक दिन में २। घड़ी २।। घड़ी क्रमशः ६हों ऋतु समझना ।

सुगन्धित द्रव्य अर्थात् केशर, कस्तुरी, गोरोचल वा अष्टगंधादि से लिखे ।

धरणेन्द्राय नमोऽधच्छदनाय नमस्तथोर्ध्वछदनाय ।

पद्मच्छदनाय नमो मन्त्रान् वेदादिमायाद्यान् ।।१४।।

[संस्कृत टीका]—धरणेन्द्राय नमः इति पूर्वद्वारपदम् । अधच्छदनाय नमः इति दक्षिण द्वार पदम् । 'तथा' तेन प्रकारेण । ऊर्ध्वछदनाय नमः इति पश्चिमद्वार-पदम् । पद्मच्छदनाय नमः इति उत्तर द्वार पदम् । 'मन्त्रानेतान्' एतान् मन्त्रान् । कथम्भूतान्? 'वेदादिमायाद्यान्' उँकारादि ह्रीँ काराद्यान् ।।१४।।

मंत्र जाप्य करने के लिये पल्लवादि विधान का कोष्टक

स्तम्भन कर्म	मारण कर्म	विद्वेषण कर्म	उच्चाटन कर्म
पूर्वाभिमुख	उत्तर पूर्व के मध्य ईशान दिक्	पूर्व दक्षिण मध्य आग्नेय दिक्	पश्चिम उत्तर मध्य वायव्य दिक्
पूर्वान्हि काल	सन्ध्या काल	मध्यान्ह काल	अपरान्ह काल
शंख मुद्रा	वज्र मुद्रा	प्रवाल मुद्रा	प्रवाल मुद्रा
वज्रासन	भद्रासन	कुर्कुटासन	कुर्कुटासन
ठः ठः पल्लव	घे घे पल्लव	हूँ पल्लव	फट् पल्लव
पीत वस्त्र	कृष्ण वस्त्र	धूम्र वस्त्र	धूम्र वस्त्र
पीत पुष्प	कृष्ण पुष्प	धूम्र पुष्प	धूम्र पुष्प
पीत वर्ण	कृष्ण वर्ण	धूम्र वर्ण	धूम्र वर्ण
कुम्भक योग	रेचक योग	रेचक योग	रेचक योग
विदर्भाक्षर मध्य नाम	रोधन आदि मध्य नाम	पल्लवाँत नाम	पल्लवान्त नाम
स्वण मणि	पुत्र जीवा मणि	पुत्र जीवा मणि	पुत्र जीवा मणि
कनिष्ठका	तर्जन्यंगुली	तर्जन्यंगुली	तर्जन्यंगुली
दक्षिण हस्त	दक्षिण हस्त	दक्षिण हस्त	दक्षिण हस्त
दक्षिण वायु	दक्षिण वायु	दक्षिण वायु	दक्षिण वायु
वसन्त ऋतु	शिशिर ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	प्रावृट् ऋतु
पृथ्वी मण्डल	वायु मण्डल	वायु मण्डल	वायु मण्डल
पूर्वान्हि काल	संध्या काल	मध्यान्ह काल	अपरान्ह काल

[हिन्दी टीका]--ॐ ह्रीं सहित पूर्व द्वार पर धरणेन्द्राय नमः लिखे, इसी प्रकार दक्षिण द्वार पर प्रणव 'ॐ' और माया बीज 'ह्रीं' कार सहित अधोच्छदनाय नमः फिर पश्चिम दिशा के द्वार पर भी ॐ ह्रीं सहित उर्द्धच्छोदनाय नमः लिखे, प्रणव और माया बीज सहित पद्मोच्छदनायनमः उत्तर दिशा के द्वार पर लिखे। याने

पूर्व में ॐ ह्रीं धरणेन्द्रायनमः

दक्षिण में ॐ ह्रीं अधोच्छदनार नमः

पश्चिम में ॐ ह्रीं पर्द्धोच्छदनाय नमः

उत्तर में ॐ ह्रीं पद्मोच्छदनाय नमः

इन मंत्रों को क्रमशः प्रत्येक दिशा के द्वार पर लिखे ॥१४॥

प्रविलिख्यैतान् क्रमशः पूर्वादि द्वार पीठ रक्षार्थम् ।
दश दिक्पालान् विलिखेदिन्द्रादीन प्रथमरेखान्ते ॥१५॥

[संस्कृत टीका]–अस्मिन् श्लोके पूर्वार्धं पूर्वमेव सम्बन्धनीयम् । उत्तरार्धं उत्तरत्र सम्बन्धनीयम् । 'एतान्' प्राक्कथित-धरणेन्द्रादि द्वारपाल मन्त्रान् 'प्रविलिख्य' प्रकर्षेण लिखित्वा 'क्रमशः' पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरक्रमेण । किमर्थम् ? 'पूर्वादिद्वारपीठ रक्षार्थम्' प्राच्यादि द्वार पीठ रक्षार्थम् ।

ॐ ह्रीँ धरणेन्द्राय नमः इति प्राच्यां दिशि, ॐ ह्रीँ अधच्छदनाय नमः इति दक्षिणस्यां दिशि, ॐ ह्रीँ ऊर्ध्वच्छदनाय नमः इति पश्चिमायां दिशि, ॐ ह्रीँ पद्मच्छदनाय नमः इति उत्तरस्यां दिशि, इति चतुर्द्वारपीठेषु लिखेत् । अथोत्तरार्धं व्याख्या–'दश दिक्पालान् विलिखेत्' दश लोकपालान् सम्यग्लिखेत् । किमादीन्? 'इन्द्रादीन्' इन्द्रप्रभृतीन् । 'प्रथम रेखान्ते' प्राक् कथित रेखात्रयमध्ये आदि रेखान्ते ॥१५॥

[हिन्दी टीका]–पूर्वादि चारों दिशाओं के द्वारपीठ का रक्षण के लिये मंत्रों को लिख कर, पहले कही हुई तीन रेखाओं से सहित जो यंत्राकृति है, उसकी प्रथम रेखाओं में क्रमशः दशदिक् पालों को लिखे ॥१५॥

लरशषवयसहवर्णान् सबिन्दुकानष्टदिक्पतिसमेतान् ।
प्रणवादि नमोऽन्तगतानो ह्रीँ मधोर्ध्वच्छदनसंज्ञे च ॥१६

[संस्कृत टीका]–'लरशषवयसहवर्णान्' लश्च रश्च शश्च षश्च वश्च यश्च सश्च हश्च लरशषवयसहाः ते च ते वर्णाश्च लरशषवयसहवर्णाः तान्, सबिन्दुकान्' सह बिन्दुना वर्तन्ते इति सबिन्दुकाः तान् । पुनरपि कथम्भूतान्? 'अष्टदिक्पतिसमेतान्' अष्टलोकपालयुतान् । 'प्रणवादिनमोऽन्तगतान्' न केवलं लोकपालानेव, 'ॐ ह्रीँ मधोर्ध्वच्छदनसंज्ञे च' ॐ ह्रीँ अधच्छदनाय नमः, ॐ ह्रीँ ऊर्ध्वच्छदनाय नमः इति सञ्ज्ञे च ।

लोकपाल स्थापन क्रम :—

ॐ लं[१] इन्द्राय नमः इति प्राच्याम् । ॐ रं[२] अग्नये नमः इत्याग्नेय्याम् । ॐ शं[३] यमाय नमः इति दक्षिणस्यां दिशि, ॐ षं[४] नैर्ऋत्याय नमः इति नैर्ऋत्यां

---

१ लं लँ इति ख पाठः, २ रं रँ इति ख पाठः, ३ शं शँ इति ख पाठः, ४ षं षँ इति ख पाठः ।

दिशि । उँ वं[5] वरुणाय नमः इति पश्चिमायां दिशि । उँ यं[6] वायवे नमः इति वायव्यां दिशि, उँ सं[7] कुबेराय नमः इत्युत्तरस्यां दिशि । उँ हं[8] ईशानाय नमः इति ऐशान्यां दिशि । उँ ह्रीँ अधच्छदनाय नमः इत्यधः, उँ ह्रीँ ऊर्ध्वच्छदनाय नमः इत्यूर्ध्वं लिखेत्, एवं दशदिक्पाल स्थापनक्रमः ।।१६।।

[हिन्दी टीका]–जिसके प्रणव मंत्र (ॐ) आदि में और अन्त में 'नमः' इस प्रकार के अष्टदिक्पाल अनुस्वार सहित ल, र, श, ष, व, य, स और ह को लिखे। फिर साथ में ॐ ह्रीँ अधच्छदनाय नमः तथा ॐ ह्रीँ उर्ध्वच्छदनाय नमः भी लिखे ।

स्थापना क्रम इस प्रकार

ॐ ह्रीँ लं इन्द्राय नमः, पूर्व में, ॐ ह्रीँ रं अग्नेय नमः, आग्नेय कोण में ।
ॐ ह्रीँ शं यमाय नमः, दक्षिण में, ॐ ह्रीँ षं नैऋत्याय नमः, नैऋत्य दिशा में ।
ॐ ह्रीँ वं वरुणाय नमः, पश्चिम में, ॐ ह्रीँ यं वायव्ये नमः, वायव्यदिशा में ।
ॐ ह्रीँ सं कुबेराय नमः, उत्तर में, ॐ ह्रीँ हं ईशानाय नमः, ईशान दिशा में ।
ॐ ह्रीँ अधच्छदनाय नमः, नीचे की दिशा में । ॐ ह्रीँ ऊर्ध्वच्छदनाय नमः, ऊपर की दिशा में लिखे ।

इस प्रकार दश लोकपालों के स्थापना का क्रम जानना चाहिये ।।१६।।

दिक्षु विदिक्षु क्रमशो जयादि-जम्भादिदेवता विलिखेत् ।
प्रणवत्रिमूर्तिपूर्वा नमोऽन्तगा मध्यरेखान्ते ।।१७।।

[संस्कृत टीका]–'दिक्षु विदिक्षु' दिशासु विदिशासु, 'क्रमशः' दिशाविदिशा-क्रमेण 'जयादिजम्भादि-देवताः' चतुर्दिशि जयादिदेवताः चतुर्विदिक्षु च जम्भादिदेवताः, कथम्भूताः 'प्रणवत्रिमूर्तिपूर्वाः' उँ ह्रीँ पूर्वाः, पुनरपि किम्भूताः ? 'नमोऽन्तगाः' नमः शब्दावसानाः, क्व ? 'मध्य रेखान्ते' प्राग्लिखित मध्य रेखान्ते विलिखेत् ।।१७।।

[हिन्दी टीका]–उसके बाद माध्य की रेखाओं में और दिशा व विदिशाओं में क्रम से ॐ कार और ह्रीँ कार सहित नमः है जिसके अंत में ऐसी जयादि और जम्भादि देवियों के नाम लिखे ।।१७।।

---

५ वं वं इति ख पाठः ६ यं यं इति ख पाठः ७ सं सं इति ख पाठः ८ हं हं इति ख पाठः ।

आद्या जया च विजया तथाऽजिता चापराजिता देव्यः ।
जम्भा मोहा स्तम्भा स्तम्भिन्यो देवता एताः ॥१८॥

[संस्कृत टीका]–'आद्या' प्रथमा, 'जया च' जया नामा 'विजया' विजयानामा, 'तथा' तेन प्रकारेण, अजित नामा, 'चः' समुच्चये, 'अपराजिता देव्यः' अपराजितेति दिग्देव्यः । 'जम्भा' जम्भानाम, 'मोहा' मोहानाम, 'स्तम्भा' स्तम्भानाम 'स्तम्भिनी' स्तम्भिनीति विदिग्देवताः एता अष्ट देव्यः ।

ॐ ह्रीँ जये ! नमः इति प्राच्यां दिशि, ॐ ह्रीँ विजये ! नमः इति दक्षिणस्यां दिशि । ॐ ह्रीँ अजिते ! नमः इति पश्चिमायां दिशि । ॐ ह्रीँ अपराजिते ! नम : इत्युत्तरस्यां दिशि । ॐ ह्रीँ जम्भे ! नमः इत्याग्नेय्यां दिशि । ॐ ह्रीँ मोहे ! नमः इति नैऋर्त्यां दिशि । ॐ ह्रीँ स्तम्भे ! नमः इति वायव्यां दिशि । ॐ ह्रीँ स्तम्भिनि ! नमः इत्यैशान्यां दिशि लिखेत् । एवमष्टदेवीनां मध्यरेखा स्थापन क्रमः ॥१८॥

[हिन्दी टीका]–उसमें प्रथम जया उसके बाद विजया, अजिता और अपराजिता ये चार देवियाँ चार दिशाओं से लिखे और विदिशाओं में जंभा, मोहा, स्तंभा और स्तंभिनी देवियों के नामोल्लेख करे–इस प्रकार अष्ट देवियों के नाम लिखें ।

लिखने का क्रम इस प्रकार से समझें :–

ॐ ह्रीं जयायै नमः पूर्व में । ॐ ह्रीं विजयायै नमः दक्षिणदिशा में ।
ॐ ह्रीं जम्भायै नमः आग्नेयमें । ॐ ह्रीं मोहायै नमः नैऋत्य में ।
ॐ ह्रीं अजितायै नमः पश्चिम में । ॐ ह्रीं स्तंभायै नमः वायव्य में ।
ॐ ह्रीं अपराजितायै नमः उत्तर में । ॐ ह्रीं स्तम्भिन्यै नमः ईशान में ।
यथावत् लिखे ॥१८॥

तन्मध्येऽष्टदलम्भोजमनङ्ग कमलाभिधाम् ।
विलिखेच्च पद्मगन्धां पद्मास्यां पद्ममालिकाम् ॥१९॥

[संस्कृत टीका]–'तन्मध्ये' प्राग्लिखितरेखात्रयमण्डलमध्ये, 'अष्टदलाम्भोजं' अष्टदल कमलं, 'अनङ्गकमलाभिधाम्' तत्पत्रदले अनङ्ग कमलानामां, 'विलिखेच्च' विशेषेण लिखेत्, 'पद्मगन्धां' पद्मगन्धानामाम्, 'पद्मास्याम्' पद्मास्यानामाम् 'पद्ममालिकाम्' पद्ममालानामधेयाम् ॥१९॥

[हिन्दी टीका]–तीन रेखा रूप मंडल के मध्य में एक अष्ट दल कमल

बनावे फिर उस कमल पत्र के दल में क्रमशः अनङ्ग कमला लिखे और विशेष रीति से पद्मगंधा, पद्मस्या और पद्ममालिका देवियों के नाम लिखे ॥१९॥

मदनोन्मादिनीं पश्चात् कामोद्दीपन संज्ञिकाम् ।
संलिखेत् पद्मवर्णाख्यां त्रैलोक्य क्षोभिणीं ततः ॥२०॥

[संस्कृत टीका]—**'मयनोन्मादिनीं' मदनोन्मादिनीनामां, 'पश्चात्' तदनन्तरम् 'कामोद्दीपनसंज्ञिकाम्' कामोद्दीपननाम्नीं 'संलिखेत्' सम्यग् लिखेत्, 'पद्मवर्णाख्याम्' पद्मवर्णानामधेयां, 'त्रैलोक्य क्षोभिणीं ततः' अतन्तरं त्रैलोक्यक्षोभिणी लिखेत् ॥२०॥**

[हिन्दी टीका]—उसके बाद मदनोन्मादिनी फिर कामोद्दीपन देवी का सम्यक् नाम लिखे तदनन्तर पद्मवर्णाख्या और त्रैलोक्यक्षोभिणी का लेखन करे ॥२०॥

तेजो ह्रीँकार पूर्वोक्ता नमः शब्दावसानगाः ।
अकारादिहकारान्तान् केशरेषु नियोजयेत् ॥२१॥

[संस्कृत टीका]--**अस्य श्लोकस्य पूर्वार्धं पूर्व मेव सम्बन्धनीयम्, उत्तरार्धं त्वत्र । 'तेजो ह्रीँकार' ऊँकार ह्रीँकार, 'पूर्वोक्ताः' पूर्वमुक्ता या दिशा अष्ट देव्यः ताः ऊँ ह्रीँकारपूर्वोक्ताः । किं विशिष्टाः? 'नमः शब्दावसानगाः' नमः शब्दान्त्वगताः । आसामुद्धारः-ऊँ ह्रीँ अनङ्ग कमलायै नमः, ऊँ ह्रीँ पद्मगन्धायै नमः, ऊँ ह्रीँ पद्मस्यायै नमः, ऊँ ह्रीँ पद्ममालायै नमः, ऊँ ह्रीँ मदनोन्मादिन्यै नमः, ऊँ ह्रीँ कामोद्दीपनायै नमः, ऊँ ह्रीँ पद्मवर्णायै नमः, ऊँ ह्रीँ त्रैलोक्य क्षोभिण्यै नमः, इति प्राच्याद्यष्टदलेषु स्थापनीयाः । इदानीमपरार्धं कथ्यते--'अकारादिहकारान्तान्' अकारमादिं कृत्वा हकार-पर्यन्तान्, 'केशरेषु' कर्णिकाया मध्ये, 'नियोजयेत्' नियुक्तं कुर्यात् ॥२१॥**

[हिन्दी टीका]—इस श्लोक का पूर्व भाग पूर्व में समझना चाहिए । पहले ॐ ह्रीं आदि में लिखे और अंत में नमः शब्द लगाकर क्रमशः अष्ट देवियों के अष्टदल कमल के प्रत्येकदल में नाम लिखे और फिर अंतदल में अकार से लेकर हकार पर्यंत पराग के स्थान में केशरादि द्रव्यों से लिखे । उनके लिखने का क्रम :—

१. ॐ ह्रीँ अनङ्ग कमलायै नमः
२. ॐ ह्रीँ पद्मगन्धायै नमः
३. ॐ ह्रीँ पद्मस्यायै नमः
४. ॐ ह्रीँ पद्ममालायै नमः
५. ॐ ह्रीँ मदनोन्मादिन्यै नमः

६. ॐ ह्रीं कामोद्दीपनायै नमः

७. ॐ ह्रीं पद्मवर्णायै नमः

८. ॐ ह्रीं त्रैलोक्य क्षोभिण्यै नमः

उसके बाद अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म य र ल व श ष स ह तक अंतः कर्णिका में लिखे ।।२१।।

भक्तियुतो भुवनेशः चतुः कलायुक्त कूटमथदेव्याः ।

वर्ण चतुष्क नमो तास्थाप्याः प्राच्यादि विक्षुपद्मवहिः।।२२।।

[संस्कृत टीका]—भक्तियुतः उँ कार युक्तः । कः भुवनेशः । ह्रीं कारः, चतुष्कला युक्तः । आं ई ऊ ऊ ऐ इति चतुष्कला युक्तः कः कूटः क्षकारः, अथक्षकारा नंतरं देव्या वर्णचतुष्कः । पद्मावतीति वर्ण चतुष्टयं, नमो तं नमः शब्दांत मंत्रः स्थाप्यः स्थापनीयाः । केषु प्राच्यादिक्षु, पूर्वादि चतुर्दिक्षुः, क्व पद्मावहिः अष्टदलकमलवहिः प्रदेशे, ॐ ह्रीं क्षां प नमः, इति प्राच्यां, ॐ ह्रीं क्षीं द्मा नमः इति याम्यां, ॐ ह्रीं क्षूं व नमः इति पश्चिमायां, ॐ ह्रीं क्षौं ती नमः, इत्युत्तरस्यां लिखेत् ।।२२।।

[हिन्दी टीका]—उस अष्टदल कमल के बाहर चारों दिशा में क्रमशः भक्ति माने ॐ से युक्त, भुवनेशः माने ह्रीं कार सहित तथा आ ई ऊ ऐ ये चार कला से सहित कुटाक्षर माने क्षकार और अंत में नमः लगाकर पद्मावती चार वर्णों की स्थापन करे, इनका लेखन क्रमः—

ॐ ह्रीं क्षां पद्मावती देव्यै नमः, पूर्व दिशा में ।

ॐ ह्रीं क्षीं पद्मावती देव्यै नमः, दक्षिण दिशा में ।

ॐ ह्रीं क्षूं पद्मावती देव्यै नमः, पश्चिम दिशा में ।

ॐ ह्रीं क्षैं पद्मावती देव्यै नमः, उत्तर दिशा में ।।२२।।

इसके लिए देखे यंत्र का चित्र नं० २

एतत्पद्मावती देव्या भवेद्वक्त्र चतुष्टयम् ।

पञ्चोपचारतः पूजां नित्यमस्याः करोत्विति ।।२३।।

[संस्कृत टीका]--एतत्पद्मावती देव्याः एतत्कथित पद्मावती देव्या इत्येवं करोतु ।।२३।।

[हिन्दी टीका]—इस प्रकार ये पद्मावती देवी के चार मुख समान है, इसलिये नित्य ही इनकी पञ्चोपचार पूजा करनी चाहिये ।।२३।।

ॐ मंत्राराधना के समय पास रखने का यंत्र ॐ
नं॰ ३

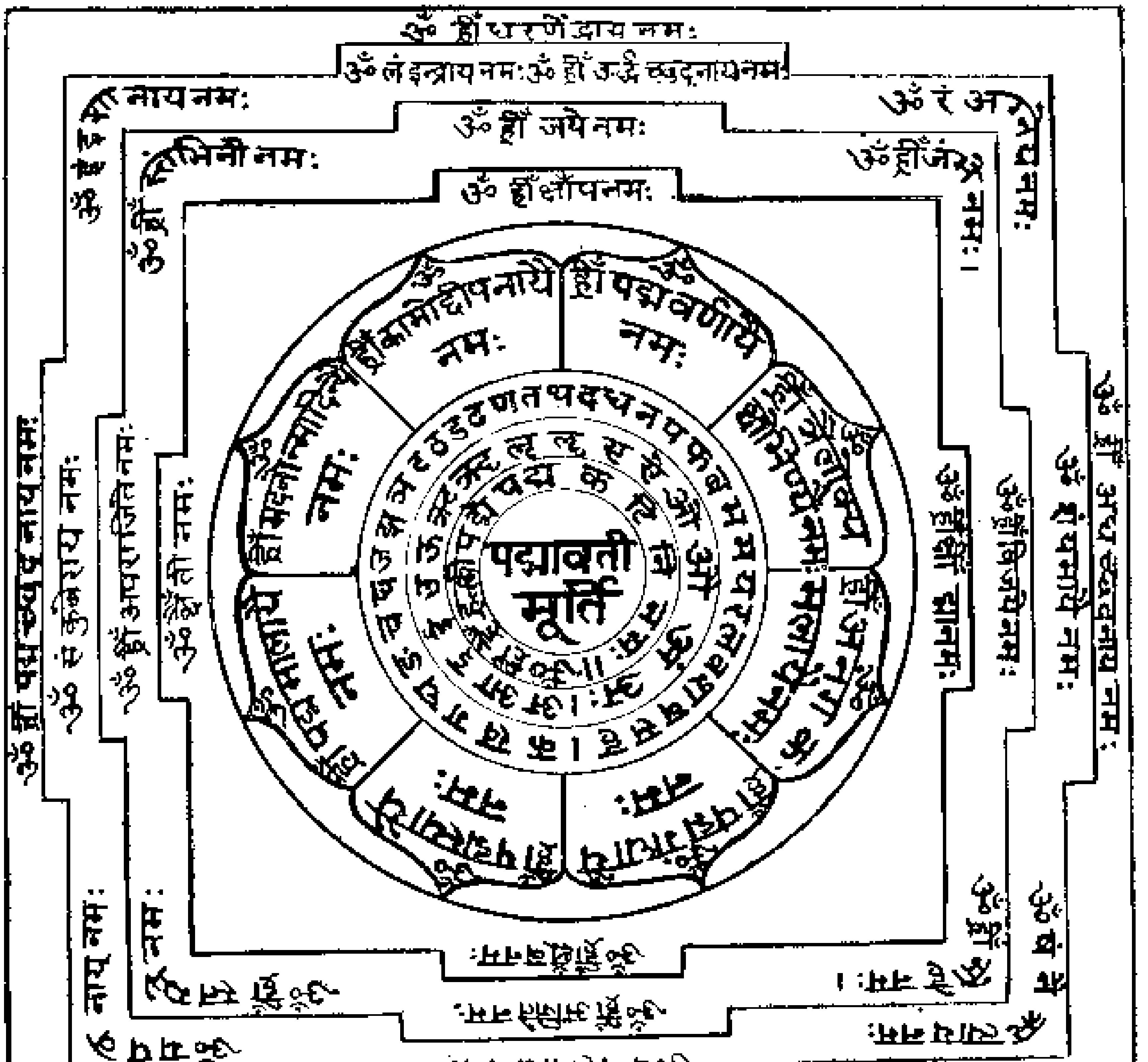

पंचोपचारी पूजा

आह्वानं स्नापनं देव्याः सन्निधीकरणं तथा ।
पूजां विसर्जनं प्राहुर्बुधाः पञ्चोपचारकम् ।।२४।।

[संस्कृत टीका]—आह्वानं, देव्याह्वानं, स्थापनं, सन्निधीकरणं, देव्याः सन्निधीकरणं, तथा तेनैव प्रकारेण पूजा, देव्यार्चनं, विसर्जनं, देव्याविसर्जनं । बुधाः पचोपचारकं, एतत्पंचोपकारकं, प्राहुः कथयंति ।।२४।।

[हिन्दी टीका]—महादेवी का आवाहन, स्थापना, सन्निधीकरण करना, पूजन करना और विसर्जन करना—इनको विद्वानों ने पञ्चोपचार पूजा कहा है ।।२४।।

ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति एह्येहि संवौषट् ।
कुर्यादमुना मंत्रेणाह्वानमनुस्मरन् देवीं ।।२५।।

[संस्कृत टीका]—ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवतिपद्मावति ऐह्येहि संवौषडिति अनेन मंत्रेण अनुस्मरन्देवीं, देवीं पद्मावतीं चिंतयन् देव्याह्वानं कुर्यात् ।।२५।।

[हिन्दी टीका]—ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति एहि-२ संवौषट्—इस प्रकार मंत्र का चिन्तवन करता हुआ देवी का आह्वानन करे ।।२५।।

तिष्टद्वितयं टांत द्वयं च संयोजयेत् स्थिती करणे ।
सन्निहिता भव शब्दं मम वषडिति सन्निधिकरणे ।।२६।।

[संस्कृत टीका]—तिष्टद्वितयं प्राक्कथित मंत्राग्रे तिष्ट तिष्टेति पद द्वयं न केवलं तिष्ट तिष्टेति पदद्वयं. ठं, त द्वयं च ठ कार द्वयं च, संयोजयेत्, सम्यक् योजयेत्, चव स्थिति करणे, देव्यास्थाने, सन्निहिता भव शब्दं, ममवषडिति प्राक्कथित मंत्रस्याग्रे मम् सन्निहिते भव वषडिति पदं योज्यं, सन्निधी करणे देव्याभि मुखी करणे ।।२६।।

[संस्कृत टीका]—पूर्वोक्त मंत्र के साथ तिष्ठ तिष्ठ पद को लिखे, उसके बाद ठः ठः दोनों को भी लिखे, स्थिति करण के लिये, फिर देवी की स्थापना में मम् सन्निहितो भव २ वषट् इसको भी पूर्वोक्त मंत्र के आगे लिखे देवी को अभिमुख करने के लिये ।।२६।।

गंधादीन् गृह्ण गृह्णेति नमः पूजा विधानके ।
स्वस्थानंगच्छगच्छेति जः त्रिस्वात्तद्विसर्जने ।।२७।।

[संस्कृत टीका]—गंधादीन् गृह्णेति नमः, प्राक्कथित मंत्रस्याग्रे गंधादीनं गृह्ण गृह्ण नमः । इति योज्यं, चवपूजाभिधानके, देव्यार्चन, विधाने स्व स्थानं गच्छ

गच्छेति जः स्त्रि स्यात्, प्राक्कथित मंत्रस्याग्रे स्व स्थानं गच्छ २ जः जः जः इति त्रिवारं योजयेत्, क्व विसर्जने, देव्याविसर्जने ।

मंत्रोद्धार—ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति एह्येहि संवौ षडित्या-ह्वानं ॥१॥ ॐ ह्री नमोस्तु भगवति पद्मावति तिष्ठ २ ठः ठः इति स्थितिकरणं ॥२॥ ॐ ह्रीं नमोस्तु भगवति पद्मावति मम् सन्निहिता भव भवषडिति सन्निधि करणं ॥३॥ ॐ ह्रीँ नमोस्तु भगवति पद्मावति गंधादीन् गृह्ण २ नमः। इति पूजाभिधानं। ॐ ह्रीँ नमोस्तु भगवति पद्मावति स्व स्थानं गच्छ २ जः जः जः, इति विसर्जनं ॥२७॥

[हिन्दी टीका]—आह्वानन स्थापन और संनिधिकरण करने के बाद पूर्वोक्त मंत्र का उच्चारण करता हुआ जल, गंध, अक्षत, पुष्प, चरू दीप, धूप, फल, अर्घ्य को समर्पण करता हुआ, गृह्ण २ बोलता हुआ, पूर्वोक्त मंत्र के साथ स्वस्थानं गच्छ २ जः ३ इस प्रकार तीन बार कहे, देवी का विसर्जन करने के लिये ॥२७॥

पूजा मंत्र के लिये मंत्र रचना :

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवति पद्मावति एहि एहि संवौषट्
ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवति पद्मावति तिष्ठ २ ठः ठः,
ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवति पद्मावति ममसन्निहिता भव २ वषट्
ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवति पद्मावति जलं, गृहाण २ गंध ग्रहाण २ अक्षतं गृहाण २
आदि बोलकर पूजा करे,
ॐ ह्रीँ नमोऽस्तु भगवति पद्मावति स्वस्थानं गच्छ २ जः ३

इन उपरोक्त मंत्रों को बोलकर आह्वानन, स्थापन, सनिधिकरण, पूजा फिर विसर्जन करे। इस प्रकार देवी की पूजा करे ॥२७॥

पूरक रेचक योगादाह्वान विसर्जनं करोतु बुधः ।
पूजाभिमुखी करणे स्थापन कर्माणि कुंभकतः ॥२८॥

[संस्कृत टीका]--पूरक रेचक योगाद् बुधः प्राज्ञः देव्याह्वानं करोतु, रेचक योगात् देव्याः विसर्जनं कुर्यात्, पूजाभिमुखी करणे, स्थापन कर्माणि कुंभकतः, देव्यार्चनं, देव्या सन्निधीकरणे, देव्या स्थापन एतानि कर्माणि कुंभ योगे कुर्यात् ॥२८॥

[हिन्दी टीका]—बुद्धिमान् मनुष्य पूरक योग से देवी का आह्वानन करे, रेचक योग से देवी का विसर्जन करे, कुंभक योग से पूजाविधि और सन्निधीकरण स्थापना करे ॥२८॥

ब्रह्मादि लोक नाथं ह्रूँ कारं व्योमषान्तमदनोपेतम् ।

पद्मे च पद्म कटिनि नमोऽन्तगो मूलमन्त्रोऽयम् ।।२६।।

[संस्कृत टीका]—**ब्रह्मादि ॐ कारादि लोक नाथं ह्रीँ कारं ह्रूँ कारं ह्रूँ इति बीजं, व्योम हकारं कथं भूतं, षांत मदनोपेतं, षांतः स्यांतः सकारः मदनः ल्कीँ कारः आभ्यायुतं, षांत मदनोपेतं, एवं ह्स्ल्कीँ मिति, पद्मापद्मेतिपदं, च समुच्चये, पद्म कटिनो, पद्म कटिनीति पदं नमोंतगतः, अंते नमः इति पदं, मूल मंत्रोयं, अयं पद्मावती देव्यामूलमंत्रो ज्ञातव्यः ।**

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ ह्रूँ ह्स्ल्कीँ पद्मेपद्म कटिनि नमः ।।२६।।

[हिन्दी टीका]—पहले ब्रह्म माने ॐ कार, लोक नाथ माने मायाबीज ह्रीँ कार, ह्रूँ आकाशबीज माने ह्रू कार, ष का अंत सकार कामबीज माने ल्कीँ कार मिलकर ह्स्ल्कीँ, पद्मे पद्मकटिनि और नमः शब्द है अंत में जिसके ऐसा यह मूल मंत्र है ।

मूलमंत्र :— ॐ ह्रीँ ह्रूँ ह्स्ल्कीँ पद्मे पद्म कटिनि नमः ।।२६।।

सिध्यति पद्मादेवी त्रिलक्ष जाप्येन पद्मपुष्पाणाम् ।

अथवारुण करवीरक संवृत पुष्प प्र जाप्येन् ।।३०।।

[संस्कृत टीका]—**सिध्यति सिध्दा भवति, का पद्मादेवी पद्मावती देवी, केन त्रिलक्ष त्रितय जाप्येन, एषां पद्मपुष्पाणां, शहस्त्र पत्राणां, अथवा रक्त करणवीर वृंतान्वित प्रसून जाप्येन् सिद्धा भवति ।।३०।।**

[हिन्दी टीका]—इस मंत्र का कमल के फूलों से तीन लाख जाप्य करने से मंत्र सिद्ध होता है, कमल फूलों के अभाव में लाल कनेर के डाली सहित फूलों से तीन लाख जाप्य करने से पद्मावती देवी सिद्ध होती है ।।३०।।

ब्रह्म माया च ह्रूँ कारं व्योम क्लीँकार मूर्धगम् ।

श्रीँ च पद्मे ! नमो मन्त्रं प्राहुर्विद्यां षडक्षरीम् ।।३१।।

[संस्कृत टीका]—**'ब्रह्म' ॐ कारः, 'माया' ह्रीँ कारः, 'चः' समुच्चये 'ह्रूँ कारं' ह्रूँ मिति बीजम 'व्योम' ह कारः, कथम्भूतं व्योम ? 'क्लीँकार मूर्धगम्' क्लीँकारोपरिस्थितम् एवं ह्क्लीँमिति, 'श्रीँ च' श्रीमिति बीजं च, 'पद्मे' पद्मे ! इति पदम्, 'नमः' नमः इतिपदम्, 'मन्त्र' इमं कथितं मन्त्रम् 'विद्या षडक्षरीम् षडक्षरीमिति विद्यां 'प्राहुः' प्रकर्षेण आहुः ।**

मन्त्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ हँ ह्स्क्लीँ श्रीँ पद्मे ! नमः । इतिषडक्षरमन्त्रः ॥३१॥

[हिन्दी टीका]—ब्रह्म ॐ कार माया ह्रीँ कार, हँ कार ह्स्क्लीँ और श्रीँ बीज पद्मे, यह पद और नमः इस पद से बना हुआ इस मंत्र को मंत्रवादी षडक्षरो मंत्र कहते हैं।

मंत्रोद्धार :—"ॐ ह्रीँ हँ ह्ूँ क्लीँ श्रीँ पद्मेनमः ।" ॥३१॥

वाग्भवं चित्तनाथं[1] च ह्रौँकारं षान्तमूर्धगम् ।

बिन्दुद्वययुतं प्राहुर्विबुधास्त्र्यक्षरीमिमाम् ॥३२॥

[संस्कृत टीका]'वाग्भवं' ऐकारम्, 'चित्तनाथं' ल्कीँकारम्, 'चः' समुच्चये, 'ह्रौँकारं' ह्रौमिति अक्षरम्, कथम्भूतम् ? 'षान्तमूर्धगम् षकारस्यान्तः सकारः तस्यमूर्धगं सकारोपरिस्थितम्, 'बिन्दुद्वययुतं' विसर्ग संयुतम्, एवं ह्सौः इति बीजम्, 'त्र्यक्षरीमिमाम्' इमां त्र्यक्षरीविद्यां, 'विबुधाः' प्राज्ञाः, 'प्राहुः' प्रकर्षेण आहुः ॥३२॥

[हिन्दी टीका]—वाग्भवं माने ऐँ कारं चित्तनाथं माने ल्कीँ कारम् ह्रौँ कारं, उसके बाद आये हुए सकार और विसर्ग सहित ह्सौ यह बीज इस मंत्र को विद्वानों ने तीन अक्षर का मंत्र है।

मंत्रोद्धार :— ॐ ऐँ क्लीँ ह्सौं नमः ॥३२॥

वर्णान्तः पार्श्वजिनो यो रेफस्तलगतः स धरणेन्द्रः ।

तुर्यस्वरः सबिन्दुः स भवेत् पद्मावतीसंज्ञः ॥३३॥

[संस्कृत टीका]—'वर्णान्तः' हकार, स हकारः 'पार्श्वजिनः' पार्श्वजिन संज्ञो भवति । 'यो रेफः तलगतः' यस्तलगतो रेफः 'स धरणेन्द्रः' धरणेन्द्र संज्ञो भवति । 'तुर्यस्वरः' चतुर्थस्वरः—ईकारः, 'सबिन्दुः' अनुस्वारयुतः 'स भवेत् पद्मावती संज्ञः' स पद्मावती देवी संज्ञा भवति । एवं ह्रीँ इत्येकाक्षरी विद्या ॥३३॥

[हिन्दी टीका]—वर्णों के अंत में का हकार, वह हकार पार्श्वनाथजिन संज्ञा का वाचक है, उस हकार के नीचे, रेफ वह रेफ धरणेन्द्र संज्ञा वाला होता है, चौथा नंबर का स्वर, याने ई कार वह बिन्दु अनुस्वार युक्त वह पद्मावती संज्ञा वाला है, इस प्रकार से बनने वाले मंत्र को एकाक्षरी मंत्र कहा है।

मंत्रोद्धार :—'ॐ ह्रीँ नमः ।' यह एकाक्षरी विद्या है ॥३३॥

---

१ कामरजं च इति ख पाठः ।

त्रिभुवनजनमोहकरी विद्येयं प्रणवपूर्वनमनान्ता ।
एकाक्षरीति संज्ञा जपतः फलदायिनी नित्यम् ।।३४।।

[संस्कृत टीका]—'त्रिभुवनजनमोहकरी' त्रैलोक्य जन मोहकरी भवति 'विद्येयम्' इयं कथिता विद्या । कथम्भूता ? 'प्रणव पूर्वनमनान्ता' ॐकार पूर्वं नमः शब्दान्ता । किं नामा ? 'एकाक्षरीति संज्ञा' एकाक्षरी नामधेया । 'जपतः फलदायिनी नित्यम्' सर्वकालं जाप्यं कुर्वतः फलदायिनी भवति ।।३४।।

[हिन्दी टीका]—यह एकाक्षरी मंत्र तीनों लोकों को मोहित करने वाला है और जाप्य करने वाले मंत्री को हमेशा (नित्य) फल देने वाली विद्या है ।।३४।।

होमविधि

इदानीं होमक्रम कथ्यते :—

तत्वावृत नाम विलिख्य पत्रे तद्धोमकुण्डे निखनेत् त्रिकोणे ।
स्मरेषुभिः पञ्चभिराभिवेष्ट्य बाह्ये पुनर्लोकपति प्रवेष्ट्यम् ।।३५।।

[संस्कृत टीका]'तत्वावृतम्' ह्रींकार वेष्टितम् । किंतत् ? 'नाम' देवदत्तनाम । 'विलिख्य' लिखित्वा । क्व? 'पत्रे' ताम्रपत्रे । किं कृत्वा ? 'स्मरेषुभिः' कामबाणैः । कतिङ्ख्यैः? 'पञ्चभिः'! एवं ह्रां ह्रीं क्लीं, ब्लूं सः एतैः। 'आऽभिवेष्ट्य' आ समन्ताद् वेष्टयित्वा । 'पुनः' पुनरपि । 'बाह्ये' नाम बाह्ये । लोकपतिप्रवेष्टयम् ह्रींकारवेष्टितं कृत्वा। 'तद्धोम कुण्डे' तत् ताम्र पत्र यन्त्र होम कुण्ड मध्ये । कथं भूते? त्रिकोणे' त्र्यस्रो । 'निखनेत्' पूरयेत् ।।३५।।

[हिन्दी टीका]—'ताम्रपत्र पर नाम लिख कर, उस नाम को ह्रीं से वेष्टित करें ! याने ह्रीं के मध्य में नाम लिखे, फिर चारों तरफ से कामबाण, द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ये पांच लिखे, उसके बाद ह्रीं से वेष्टित करे, इस यंत्र को त्रिकोण होम कुण्ड में गाड़ देवे ।।३५।।

मधुरत्रिक सम्मिश्रित गुग्गुलकृतचणकमात्र वटिकानाम् ।
त्रिशतसहस्त्रहोमात् सिध्यति पद्मावती देवी ।।३६।।

[संस्कृत टीका]—'मधुरत्रिकसम्मिश्रित--घृतदुग्धशर्करा संयुक्त, 'गुग्गुलकृत' दक्षधूपकृत, 'चणकमात्रवटिकानाम्' 'त्रिशत्सहस्रहोमात्' त्रिशत्सहस्त्रसङख्यवटिकानां हवनात् । 'सिध्यति' सिद्धा भवति । का? 'पद्मावती देवी' फणिशेखरा देवी ।।३६।।

होमकुण्ड में गाड़ने का यंत्र नं. ४

[हिन्दी टीका]—फिर घी, दुध, शकर से संयुक्त गुग्गुल की चने के बराबर ३०,००० तीस हजार गोली बनावे, इन गोलियों से होम करे, पद्मावती देवी सिद्ध होती है ॥३६॥ यंत्र चित्र नं ४ देखे।

मन्त्रस्यान्ते नमः शब्दं देवताराधना विधौ।
तदन्ते होमकाले तु स्वाहा शब्दं नियोजयेत् ॥३७॥

[संस्कृत टीका]—'मंत्रस्यान्ते' मन्त्रपरिसमाप्तौ। 'नामः शब्दं' नमः इति वाक्यम्। क्व? 'देवताराधनाविधौ देव्या मन्त्राराधनविधाने संयोजयेत्। 'तु' पुनः। 'तदन्ते' मन्त्राराधनान्ते। होमकाले' हवन समये। 'स्वाहा शब्दं' स्वाहेतिशब्दम्। 'नियोजयेत्' संयोजयेत् ॥३७॥

[हिन्दी टीका]—मंत्र के अन्त में नमः। शब्द लगाकर जाप्य करे, फिर होम करने के समय मंत्र के अन्त में स्वाहा शब्द लगाकर होम करे, तब सिद्धि हो जाती है ॥३७॥

धरणेन्द्र यक्ष की साधनविधि

दशलक्षजाप्य होमात् प्रत्यक्षो भवति पार्श्वयक्षोऽसौ।
न्यग्रोध मूलवासी श्यामाङ्गस्त्रिनयनो नूनम् ॥३८॥

[संस्कृत टीका]—'दशलक्ष जाप्यहोमात्' दशलक्ष जाप्य हवनात्। 'प्रत्यक्षो भवति' साक्षात् प्रत्यक्षो भवति। कः? 'पार्श्वयक्षोऽसौ' असौ पार्श्वनामधेयो यक्षः। कथंभूतः? 'न्यग्रोधमूलवासी' वटवृक्षमूलवासी। किंविशिष्टः? 'श्यामाङ्गः' पुनः कथंभूतः? 'त्रिनयनः' त्रिनेत्रः। 'नूनम्' निश्चितम् ॥३८॥
मन्त्र :—ॐ ह्रीँ पार्श्वयक्ष! दिव्य रुपे महर्षण एहि एहि ॐ क्रौँ ह्रीँ नमः॥
यक्षाराधनविधान मन्त्रोऽयम् ॥३८॥

[हिन्दी टीका]—धरणेन्द्र यक्ष के मंत्रो का दश लाख जाप्य करने से वट्वृक्ष के ऊपर रहने वाले पार्श्वयक्ष जो की काला रंग वाला, और त्रिनेत्र वाला है, उसयक्ष की सिद्धि होती है, होम १,००,००० एक लाख मंत्रों से करे। याने १०,००० दशलक्ष जाप्य से और एकलक्ष मंत्र होम से धरणेन्द्रयक्ष की सिद्धि होती है ॥३८॥

---

१. रुप इति ख पाठः।
२ दर्पण इति ख पाठः।

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ पार्श्वयक्ष दिव्य रूप महर्षेण एहि-2 ॐ क्रोँ ह्रीँ नमः। यह यक्षाराधना मंत्र है ।

निजसैन्यैर्मायामय समुच्छ्रितैर्वैरिलोकमग्रस्थम् ।
विमुखीकरोति यक्षः सङ्ग्रामे निमिषमात्रेण ।।३९।।

[संस्कृत टीका]—'निजसैन्यैः' स्वकीयसैन्यैः । कथम्भूतैः ? 'मायामय-समुच्छ्रितैः' ह्रीँकारकृतप्राकार सम्यगुच्छ्रितैः । 'वैरिलोकम्' शत्रुसेनासमूहम् । कथंम्भूत? 'अग्रस्थम्' स्वकीयसैन्यपुरः स्थितम् । 'विमुखीकरोति' पराङ्मुखी करोति । कोऽसौ ? 'यक्षः' पार्श्वयक्षः । क्व ? 'सङ्ग्रामे' रणाङ्गणभूमौ । कथम् ? 'निमिषमात्रेण' क्षणमात्रेण ।।३९।।

[हिन्दी टीका]—यह यक्ष अपनी मायामय सेना बनाकर, बड़ी भारी शत्रु सेना को भी क्षण मात्र में जीत लेता है । युद्ध भूमि में आये हुए बड़ी सेना भी क्षण भर में ही भाग जाती है । माया ह्रीँ कोट के प्रभाव से ।।३९।।

सान्तं बिन्दूर्ध्वरेफं बहिरपि विलिखेदायताष्टाब्जपत्रं ।
विक्ष्वैँ श्रीँ ह्रीँ स्मरेशो गजवशकरणं ह्रौँ तथा क्लें पुनर्यूँ ।
बाह्ये ह्रीमोँ नामोऽर्हँ विशि लिखित चतुर्बीजकं होमयुक्तं
मुक्ति श्री वल्लभोऽसौ भुवनमपि वशं जायते पूजयेद् यः ।।४०।।

[संस्कृत टीका]—'सान्तम्' सकारस्यान्तं हकारम् । कथंभूतम्? बिन्दूर्ध्वरेफम्' अनुस्वार-ऊर्ध्वरेफान्वितम् । एवं हँ इति बीजं विलिखेत् । 'बहिरपि' हंमक्षरबहिः प्रदेशे । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । किम्? 'आयताष्टाब्ज पत्रम्' विस्तीर्णाष्टाम्भोज पत्रम् । 'विक्षु' तत्पत्रप्राच्यादि चतुर्दिशासु । 'ऐँ श्रीँ ह्रीँ स्मरेशः' पूर्वदले ऐँ इति, दक्षिणदले श्रीँ इति, पश्चिमदले ह्रीँ इति, उत्तरदले क्लीँ इति एवं लिखेत् । 'गजवश-करणं ह्रौँ तथा क्लेँ पुनर्यूँ' इति विदिक् चतुर्दलेषु द्विपवशकरणं आग्नेयदले क्रौँ इति, नैऋत्यदले ह्रौँ इति । 'तथा' तेन प्रकारेण वायव्यदले क्लें इति । 'पुनर्यूँ' पश्चादीशा-नदले यूँ इति लिखेत् । 'बाह्ये ह्रीँ' तद्यन्त्रबहिः ह्रीँकरण वेष्टयेत् । ॐ नमोऽर्हँ विशि लिखित चतुर्बीजकम्' ॐ नमोऽर्हमिति पदे प्राच्यादिचतुर्दिशासु लिखितं ऐँ श्रीँ ह्रीँ क्लीँ इति चत्वारि बीजानि । 'होमयुक्तं' स्वाहाशब्दयुतम् । एवं ॐ नमोऽर्हँ ऐँ श्रीँ क्लीँ स्वाहेति मन्त्रः । 'मुक्त श्री वल्लभोऽसौ भुवनमपि वशं जायते पूजयेद् यः'

एतचिन्तामणिनाम यन्त्रं यः पूजयेद्, असौ पुमान् मुक्त्यङ्गनाप्रियो भवति । 'भुवनपि' लोकोऽपि । 'वशं जायते' वशीभवति ॥

इत्युभयभाषाकविशेखर श्री मल्लिषेण सूरिविरचिते भैरव पद्मावती कल्पे देव्याराधनविधिर्नाम तृतीयः परिच्छेदः ॥

[हिन्दी टीका]—बिन्दु और रेफसे सहित हकार यानी हूँ बीज को लिखकर उसके बाहर आठ पांखुड़ी का कमल बनावे उस कमल के चारों तरफ से चारों दिशाओं के दलों में ऐं श्रीं ह्रीं और क्लीं को लिखे, फिर विदिशाओं के दलो में क्रौं ह्रौं ब्लें और मूं श्रं को लिखकर, उस यंत्र के बाहर के भाग को ह्रीं कार से वेष्टित करे, फिर पूर्वादि चारों दिशाओं में ॐ नमोऽर्हं ऐं श्रीं ह्रीं क्लीं स्वाहा, मंत्र से वेष्टित करे। इस प्रकार चिन्तामणि यंत्र की जो कोई पूजन करता है उस मनुष्य के वश में संपूर्ण लोक रहता है और मोक्षलक्ष्मी भी वश में रहती है। यंत्रचित्र नं. ५

इस प्रकार दोनों भाषा के कवि शेखर श्री मल्लिषेण सूरिविरचित भैरव पद्मावती कल्प में देवी आराधनाविधि की हिन्दी विजया टीका समाप्त।

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान्विषवत्त्यज ।
क्षमार्जवदया-शौचं सत्यं पीयूषवत्पिब ॥

अर्थ :—हे भाई ! यदि मुक्ति चाहते हो तो विषयों को विष के समान छोड़ दो। और क्षमा, सरलता, दया, पवित्रता और सत्य को अमृत के समान पान करो।

श्री चिंतामणि यंत्र नं. ५,

चतुर्थो द्वादश रञ्जिका मन्त्रोद्धारपरिच्छेदः

द्वादश पत्राम्बुरुहं मलवर यूं कार संयुतं कूटम् ।
तन्मध्ये नामयुतं विलिखेत् क्लीँकार संरुद्धम् ।।१।।

[संस्कृत टीका]–'द्वादशपत्राम्बुरुहं' द्वादश पत्रान्वितं पद्मम् । कथम्भूतम् ? 'मलवरयूं कार संयुतम्' मश्च लश्च वश्च यूंकारश्च मलवरयूंकाराः तैः संयुतम् । किम् ? 'कूटम्' क्षकारम् । एवं क्ष्म्ल्व्र्यूं इति । 'तन्मध्ये नाम युतम्' क्ष्म्ल्व्र्यूं मध्ये देवदत्तनाम युतम् । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । कथम्भूतम् ? 'क्लीँकार संरुद्धम्' तत्पिण्डोभयपार्श्वं क्लीँकार निरुद्धं लिखेत् ।।१।।

[हिन्दी टीका]–एक बारह दल का कमल बनावे, बीच की कर्णिका में नाम सहित क्ष्म्ल्व्र्यूं क्लीँ कार से रुके हुये लिखे । यानी क्ष्म्ल्व्र्यूं के दोनों तरफ क्लीँ कार लिखे ।।१।।

विलिखेज्जयादि देवी स्वाहान्तोँकार पूर्विका दिक्षु ।
झभ महपिण्डोपेता विदिक्षु जम्भादि कास्तद्वत् ।।२।।

[संस्कृत टीका]–'विलिखेज्जयादि देवीः' जयादि चतुर्देवता विलिखेत् । क्व ? 'दिक्षु' चतुर्दिशासु । 'स्वाहान्तोँकारपूर्विकाः' उँ जये ! स्वाहा इति पूर्व दले, उँ विजये ! स्वाहा इति दक्षिण दले, उँ अजिते ! स्वाहा इति पश्चिम दले, उँ अपराजिते ! स्वाहा इत्युत्तरदले विलिखेत् । 'झभ महपिण्डोपेताः' । झश्च भश्च मश्च हश्च झभमहाः ते च ते पिण्डास्तैरुपेताः झभमहपिण्डोपेताः । क्व ? 'विदिक्षु' विदिशासु । काः ? 'जम्भादिकाः' जम्भादी चतुर्देवीः । 'तद्वद्' यथापूर्वं स्वाहान्तोँकारपूर्विकाः । उँ झ्म्ल्व्र्यूं जम्भे ! स्वाहा इत्याग्नेय्यां दिशि, उँ भ्म्ल्व्र्यूं मोहे ! स्वाहा इति नैर्ऋत्यदले, उँ म्म्ल्व्र्यूं स्तम्भे ! स्वाहा इति वायव्यदले, उँ ह्म्ल्व्र्यूं स्तम्भिनि ! स्वाहा इति ईशानदले लिखेत् ।।२।।

[हिन्दी टीका]–आदि में ॐ और अंत में नमः शब्द लगाकर पूर्व आदि दिशाओं के दलों में जम्भादि देवियों का नाम लिखे और विदिशाओं में झ भ म ह के पिण्डों सहित लिखे । यानी पींडाक्षरों को जम्भादि देवियों को लिखे ।।२।।

मंत्रोद्धार :–कमल के बारह दलो में मंत्र सहित देवियों के नाम व पिण्डाक्षरों के नाम लिखने का क्रम ।

पूर्व दिशा की पांखुड़ी में, ॐ जयायै स्वाहा ।
अग्निदिशा की पांखुड़ी में, ॐ झ्म्ल्व्य्रूँ जम्भायै स्वाहा ।
दक्षिणदिशा के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ विजयायै स्वाहा ।
नैऋत्य के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ भ्म्ल्व्य्रूँ मोहायै स्वाहा ।
पश्चिम दिशा के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ अजितायै स्वाहा ।
वायव्य दिशा के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ म्म्स्ल्व्य्रूँ स्तम्भायै स्वाहा ।
उत्तर दिशा के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ अपराजितायै स्वाहा ।
ईशान दिशा के (दल में) पांखुड़ी में, ॐ ह्ल्व्य्रूँ स्तम्भिन्यै स्वाहा ।
इस प्रकार से लिखे ।

उद्धरितदलेषु ततो मकरध्वजबीजमालिखेच्चतुर्षु ।
गजवशकरण निरुद्धं कुर्यात् त्रिर्मायया वेष्टयम् ।।३।।

[संस्कृत टीका]--'उद्धरित दलेष ततः' तस्मादष्टपत्रलेखनान्तरं उद्धरितदलेषु । कति संख्योपेतेषु ? 'चतुर्षु' चतुः संख्येषु । 'मकरध्वज बीजमालिखेत्' क्लीँकार बीजमालिखेत् । 'गजवशकरणनिरुद्धं क्रौँकारनिरुद्धम् । 'त्रिर्मायया वेष्टयम्' पत्र बाह्यं ह्रीँकारेण त्रिधा वेष्टितम् । 'कुर्यात्' करोतु ।।३।।

[हिन्दी टीका]—दिशा विदिशाओं के दलों का मंत्रोद्धार कर लेने पर मकरध्वज बीज को लिखे, मकरध्वज बीज माने क्लीँ कार बीज को लिखे फिर अंकुश बीज, यानी क्रौँ कार बीज से निरुद्ध करे, फिर ह्रीँ कार रूप मायाबीज से तीनबार वेष्टित करे ।।३।।

भूर्ये सुरभिद्रव्यैर्विलिख्य परिवेष्टय रक्तसूत्रेण ।
निक्षिप्य सुल्वभाण्डे[१] मधुपूर्णे मोहयत्यबलाम् ।।४।।

[संस्कृत टीका]—'भूर्ये' भूर्यपत्रे । 'सुरभिद्रव्यैः' कुङ्कुमादिसुगन्धद्रव्यैः । 'विलिख्य' एतद् मन्त्रं लिखित्वा । 'परिवेष्टय रक्तसूत्रेण' रक्तसूत्रेण वेष्टयित्वा । 'निक्षिप्य' संस्थाप्य । क्व ? 'सुल्वभाण्डे' अपक्वभाण्डे । कथम्भूते ? मधुपूर्णे' माक्षिक पूर्णे । 'मोहयत्यबलाम्' अबला वनिता तां मोहयति ।।४।।

अस्य मूल मन्त्रोद्धारः :—

---

१ कनक इति ख पाठः ।

उँ क्ष्म्ल्व्यूँ क्लीँ जये ! विजये ! अजिते ! अपराजिते ! झ्म्ल्व्यूँ जम्भे ! भ्म्ल्व्यूँ मोहे ! म्म्ल्व्यूँ स्तम्भे ! ह्म्ल्व्यूँ स्तम्भिनि ! क्लीँ ह्रीँ क्रौँ वषट् ।। मोहन क्लीँरञ्जिकायन्त्रम् ।।

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को भोजपत्र पर सुगन्धित द्रव्यों से लिखकर लाल धागों से यंत्र को लपेटकर मधु से भरे हुये कुम्हार के कच्चे घड़े में रखने से स्त्री को मोहित करता है ।।४।।

(१) मंत्र का उद्धार :–ॐ क्ष्म्ल्व्य्रूँ क्लीँ जये विजये, अजिते, अपराजिते झ्म्ल्व्य्रूँ जम्भे भ्म्ल्व्य्रूँ मोहे म्म्ल्व्य्रूँ स्तम्भे ह्म्ल्व्य्रूँ स्तम्भिनि क्लीँ ह्रीँ क्रौँ वषट् । इस प्रकार मंत्र का श्वेताम्बर प्रति में भी मंत्र पाठ है ।

(२) दूसरे नं० का मंत्रपाठ इस प्रकार है, स्तम्भिनी के बाद अमुक मोहय २ मम् वश्यं कुरु २ स्वाहा । यह पाठ दिगम्बर हस्तलिखित प्रति में है ।

(३) तीसरे नं० मंत्रपाठ इस प्रकार है, स्तम्भिनि के बाद अमुकं मोहय २ मम वश्यं कुरु २ आं ह्रीँ क्रौँ वषट् । यह पाठ कापड़िया जी के यहाँ से प्रकाशित भैरव-पद्मावतीकल्प में है ।

इन तीनों में मेरे निर्णयानुसार यह मंत्र इस प्रकार बनेगा ।

ॐ क्ष्म्ल्व्य्रूँ क्लीँ जये विजये अजिते अपराजिते झ्म्ल्व्य्रूँ जम्भे भ्म्ल्व्य्रूँ मोहे म्म्ल्व्य्रूँ स्तम्भे ह्म्ल्व्य्रूँ स्तम्भिनि अमुकं मोहय २ मम वश्यं कुरु २ (आँ) क्लीँ ह्रीँ क्रौँ वषट् ।

इति मोहन क्लीँ रञ्जिका यंत्र ।

स्त्रीकपाले लिखेद् यन्त्रं क्लीँस्थाने भुवनाधिपम् ।
त्रिसन्ध्यं तापयेद् रामाकृष्टिः स्यात् खादिराग्निना ।।५।।

[संस्कृत टीका]–'स्त्रीकपाले' वनिताकपाले । 'लिखेद् यन्त्रं' प्राक्कथित-यन्त्रं लिखेत् । क्लीँ स्थाने' क्लीँकार स्थाने । कम् ? 'भुवनाधिपम्' ह्रीँकार लिखेत् । 'त्रिसन्ध्यं' त्रिकालम् । 'तापयेत्' तापनं कुर्यात् । 'रामाकृष्टिः स्यात्' वनिता कर्षणं भवेत् । केन ? 'खादिराग्निना' खदिरकाष्टाग्निना । स्त्र्याकर्षणे ह्रीँरञ्जिकायन्त्रम् ।।५।।

[हिन्दी टीका]–स्त्री के कपाल (खोपड़ी) पर, इस यंत्र को सुगन्धित द्रव्यों से लिखे, पहले लिखे यंत्रानुसार, मात्र क्लीँ के स्थान पर भुवनाधिप बीज लिखे, यानी ह्रीँ कार बीज लिखे, फिर खदिर (खेर) की अग्नि से त्रिकाल उस यंत्र को तपावे तो स्त्री का आकर्षण होता है ।।५।। स्त्री आकर्षण का यह ह्रीँ रंजिकायंत्र है चित्र नं० ७ देखे ।

मोहनक्लींरञ्जिका यंत्रचित्र नं· ६

ह्रौँ रञ्जिका यंत्र चित्र नं. ७

प्रतिषेध कर्ममेंहुँ रञ्जिका यंत्र नं.८

मायास्थाने च हुंकारं विलिखेन्नर चर्मणि ।
तापयेत् क्ष्वेडरक्ताभ्यां पक्षाहात् प्रतिषेधकृत ।।६।।

[संस्कृत टीका]–'माया स्थाने' ह्रीँकार स्थाने । 'च:' समुच्चये । कम् ? 'हुंकारम्' हुं इति बीजम् । 'विलिखेत्' लिखेत् । क्व ? 'नरचर्मणि' मनुष्यचर्मणि लिखेत् । काभ्याम् ? 'क्ष्वेडरक्ताभ्यां' विषगर्दभरुधिराभ्याम् । 'तापयेत्' पूर्ववत् तापयेत् । 'पक्षाहात्' पक्षमध्ये । 'प्रतिषेधकृत्' प्रतिषेधकारि भवति ।।

प्रतिषेधकर्मणि हुंरञ्जिकायन्त्रम् ।।६।।

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को मनुष्य चर्म पर विष और गधे के रक्त से लिखकर पंद्रह दिन तक तपावे तो प्रतिषेध होता है । मात्र पूर्वोक्त यंत्र में जो विधि लिखी है उसी समान लिखे किन्तु ह्रीँ के स्थान पर हुं लिखे । यंत्र चित्र नं० ८ प्रतिषेधकर्मकाहुं रञ्जिकायंत्रम् ।।६।।

हुंस्थाने मान्तमालिख्य सरेफं नामसंयुतम् ।
विभीतफलके यन्त्रं द्वयोरपि च मर्त्ययोः ।।७।।

[संस्कृत टीका]–'हुंस्थाने' प्राङ् निषिद्ध कर्मणि लिखित हुंकार स्थाने । 'मान्तं' यकारम् । 'आलिख्य' लेखयित्वा । कथम्भूतम् । 'सरेफम्' ऊर्ध्वरेफान्वितम् । 'नामसंयुतम्' नामयुक्तम् । कयो: ? 'द्वयोरपि च मर्त्ययोः' अपि निश्चयेन । क्व ? 'विभीतफलके' कलितरु फलके । 'यन्त्रं' एतत् यन्त्रं लेखनीयम् ।।७।।

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को बहेडे के दो पाटीयों पर हुं के स्थान पर यकार को रेफ सहित दोनों मनुष्यों का नाम लिखकर तैयार करे । यानी यँ लिखे और बाकी सब पूर्वोक्तयंत्र के समान ही आकृतिवाला यंत्र बनावे ।।७।।

वाजिमाहिषकेशैश्च विपरीतमुखस्थयोः ।
आवेष्टय स्थापयेद् भूम्यां विद्वेषं कुरुते तयोः ।।८।।

[संस्कृत टीका]–'वाजिमाहिषकेशैश्च' अश्वमहिषकेशै: । च: समुच्चये । 'आवेष्टय' केशै: आ समन्ताद् वेष्टयित्वा । 'विपरीत मुखस्थयोः' अधो मुखस्थयोः । 'स्थापयेत्' निक्षिपेत् । क्व ? 'भूम्याम्' प्रेतवन भूम्याम् । विद्वेषं कुरुते तयोः' द्वयोर्मर्त्ययोः विद्वेषणं करोति ।। विद्वेषण कर्मणि यंरञ्जिकायन्त्रम् ।।८।।

[संस्कृत टीका]–फिर उस यंत्र को घोड़े का और भैंसे का बाल लेकर लपेटे तदनन्तर स्मशान भूमि में दोनों यंत्रों का उलटा मुँह कर के गाड़ दे यंत्रों में लिखे दोनों

विद्वेषणकर्मकायह प्र.रक्षिका यंत्र
चित्र नं.९

पुरुषों में परस्पर द्वेष उत्पन्न हो जाता है याने द्वेष उत्पन्न कर देता है ।।८।।

विद्वेषणकर्म कार्य रञ्जिकायंत्र चित्र नं० ९ देखे ।

पूर्वोक्ताक्षर संस्थाने लेखिन्या काकपक्षया ।
मान्तं विसर्ग संयुक्तं प्रेताङ्गारविषारुणैः ।।९।।
धूकारिविष्ठासंयुक्तैः ध्वजयन्त्रं सनामकम् ।
लिखित्वोपरि वृक्षाणां बद्धमुच्चाटनं रिपोः ।।१०।।

द्वादशरञ्जिकामन्त्रोद्धाराधिकारः ।।४।।

[संस्कृत टीका]—'पूर्वोक्ताक्षर संस्थाने' विद्वेष कर्म लिखित-'यें'-इत्यक्षर-स्थाने । 'मान्त्रं' यकारम् । कथम्भूतम् ? 'विसर्ग संयुक्तम्' बिन्दुद्वययुतं लिखेत् । कया ? 'काक पक्षया लेखिन्या' काक पक्ष जनित लेखिन्या । कैः ? 'प्रेताङ्गार विषारुणैः' स्मशानाङ्गारविष काक रक्तैः । कथम्भूतैः धूकारिविष्ठा संयुक्तैः' धूकारिः काकः, तस्य विष्ठा धूकारिविष्ठा तथा संयुक्तैः । 'ध्वजयन्त्रं' सूती कर्पटं ध्वजयन्त्रं एतदुच्चाटन-यन्त्रम् । कथम्भूतम् ? 'सनामकम्' देवदत्तानामान्वितम् । 'लिखित्वा' विलिख्य । 'उपरि' अग्रे । केषाम् ? 'वृक्षाणां' कलितरूणाम् । 'बद्ध' निबद्धम् । 'रिपोः' शत्रोः । 'उच्चाटनं' उच्चाटनं स्यात् ।। उच्चाटन कर्म करणे यः-रंजिकायन्त्रम् ।।१०।।

[हिन्दी टीका]—पहले कहे अनुसार 'यें' इस अक्षर के स्थान में 'य' कार लिखे य, कार को विसर्ग सहित करे, यानी यः अक्षर को कौए के पंख की कलम से स्मशान का कोयला, कौए का रक्त, कौए की विष्टा, इन पदार्थों की स्याही बनाकर, प्रसूतास्त्री के कपड़े पर नाम सहित यंत्र लिखकर बिहेड़े के पेड़ पर यंत्रलिखित वस्त्र को ध्वजा की तरह बांधने से शत्रु का उच्चाटन होता ।।१०।।

उच्चाटन कर्म के लिये यः यह रंजिका यंत्र है चित्र नं ९ देखें ।

शृङ्गीगरलरक्ताभ्यां नृकपालपुटे लिखेत ।
प्रेतास्थिजातलेखिन्या यः स्थाने तु नभोऽक्षरम् ।।११।।

[संस्कृत टीका]—शृङ्गीगरलरक्ताभ्यां' शृङ्गीविषरासभरक्ताभ्याम् । 'नृक-पाल पुटे लिखेत्' मनुष्य कपाल सम्पुटे लिखेत् । कया ? 'प्रेतास्थिजातलेखिन्या' शवास्थिजनित लेखिन्या । 'यः स्थाने' पूर्व लिखितकद्यकारस्थाने । 'तु' पुनः किम् ? 'नभोऽक्षरम्' हकारं लिखेत् ।।११।।

~ यःरञ्जिक यंत्र नं॰ ९ उच्चाटनकेलिये ~

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को मनुष्य की खोपड़ी के ऊपर शृङ्गीविष और गधे के रक्त में मृतक मनुष्य की हड्डी की कलम बनाकर लिखे मात्र पहले कहे हुय यंत्रा कार में यः के स्थान पर ह्रुं बीज को लिखे ।।११।।

श्मशाने [1]निखनेद् रोषात् कृत्वा तद् भस्मपूरितम् ।
करोति तत्कुलोच्चाटं वैरिणां सप्तरात्रतः ।।१२।।

[संस्कृत टीका]--'श्मशाने' प्रेतवने । 'निक्षिपेत्' स्थापयेत् । कथम् ? 'रोषात्' 'कृत्वा तद् भस्मपूरितम्' तत् कपाल सम्पुटं श्मशानभस्म पूरितं कृत्वा । 'तद्' 'वैरिणां' शत्रूणाम् । :कुलोच्चाटं करोति' कुलोच्चाटनं करोति । कथम् ? 'सप्तरात्रतः' ।। उच्चाटन कर्मणि हरञ्जिका यन्त्रम् ।।१२।।

[हिन्दी टीका]—फिर उस यत्र को क्रोध में आकर श्मशान की राख से भरकर श्मशान में फेंक दे तो इस यत्र के प्रभाव से सात दिन में शत्रु के सम्पूर्ण परिवार का उच्चाटन कर देता है । उच्चाटन कर्म के लिये यह ह रंजिका यंत्र है, देखे चित्र यंत्र नं० १०

नोट :—सावधान साधक इन उच्चाटनादि क्रिया को नहीं करे, बहुत पाप-बंध होता है । वीतरागता से रहे, समता से रहे ।

इन यंत्रों की विधि में गधे के रक्त आदि का प्रयोग आया है । सो ऐसे पदार्थ कार्य में नहीं लेवे, ऐसा हमारा आदेश है ।।१२।।

फडक्षरं नमः स्थाने श्मशान स्थित कर्पटे ।
निम्बार्कजरसेनैतद् विलिखेत् क्रुद्धचेतसा ।।१३।।

[संस्कृत टीका]—'फडक्षरं' फडित्यक्षरम् । 'नभःस्थाने' 'प्राग्लिखित फड्हकार स्थाने । 'श्मशान स्थित कर्पटे' श्मशान गृहीत वसने । 'निम्बार्कजरसेन' किम्बरबिरसेन । 'एतत्' फडक्षरान्वितं यन्त्रं 'विलिखेत्' लिखेत् । कथम् ? 'क्रुद्धचेतसा' क्रुद्धभावेन ।।१३।।

[हिन्दी टीका]—पहले कहे अनुसार यंत्र के समान ह कार के स्थान पर फट् अक्षर श्मशान के कपड़े पर नीम का रस और अकौए का रस से क्रोध में आकर भरकर यंत्र को लिखे ।।१३।।

---

१. 'निक्षिपेद्रोषात्' इति ख पाठः ।

यंत्र नं.१० उच्चाटन कर्म के लिये ह रंजिका यंत्र

श्मशाने निक्षिपेद् यन्त्रं यावत् तद् भुवि तिष्ठति ।
परिभ्राम्यसौ तावद् वैरी काक ईव क्षितौ ।।१४।।

[संस्कृत टीका]–'श्मशाने' श्मशानभूमौ । निक्षिपेत् । किम् ? 'यन्त्रम्' 'यावत् तद् भुवि तिष्ठति' यावत्कालं तद् यन्त्रं भूम्यां तिष्ठति । 'परिभ्राम्यत्यसौ तावद् वैरी काक इव' असौ वैरी तावत्कालं काक इव भ्रमणं करोति । क्व ? 'क्षितौ' पृथिव्याम् ।। उच्चाटन कर्म करण फड्ञ्जिकायन्त्रम् १४।।

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को श्मशान भूमि में गाड देवे, जब तक यह यंत्र भूमि में गड़ा रहेगा, तब तक शत्रु कौए की तरह पृथ्वी में भ्रमण करता रहेगा ।।१४।।

उच्चाटन कर्म के लिये यह फट् रंजिका यंत्र नं. ११ है ।

फटस्थाने लिखेद् भान्तं भूर्ये तन्नामसंयुतम् ।
विषोपयुक्त रक्तेन नीलसूत्रेण वेष्टितम् ।।१५।।

[संस्कृत टीका]–'फटस्थाने' प्राग्लिखित फडक्षर स्थाने । 'लिखेत्' विलिखेत् । 'भान्त' मकारम् । 'भूर्ये' भूर्यपत्रे । कथम् ? 'तन्नामसंयुतम्' देवदत्तनामान्वितम् । केन ? 'विषोपयुक्तरक्तेन' शृङ्गीविषान्वितखररक्तेन । पुनः कथम्भूतम् ? नील सूत्रेण वेष्टितम्' ।।१५।।

[हिन्दी टीका]–पूर्वोक्त यंत्र के सामन फट् के स्थान में म कार को लिखे और यंत्र को भोजपत्र पर नाम सहित (देवदत्त) लिखे, किससे लिखे ? शृङ्गीविष और गधे के रक्त से लिखे फिर नीले रंग के सूत्र से यंत्र को वेष्टित करे (लपेटे), ।।१५।।

मृत्युत्रिकोदरे स्थाप्यं तच् श्मशाने निवेशयेत् ।
सप्ताहाज्जायते शत्रोश्छेदभेदादिनिग्रहः ।।१६।।

[संस्कृत टीका]–'मृत्पुत्रिकोदरे स्थाप्यं' एतद् यंत्रं श्मशानदग्धमृत्तिकाकृत पुत्तलिकोदर मध्ये स्थाप्यम् । स्थापयित्वा 'तच्श्मशाने निवेशयेत्' तद् मृत्पुत्रिकोदरे स्थापित यन्त्रं प्रेतवने स्थापयेत् । 'सप्ताहात्' सप्तदिन मध्ये । 'जायते' भवेत् । किं भवेत् ? 'छेद भेदादिनिग्रहः' छेदन भेदनानि ग्रहणं भवेत् । कस्य ? 'शत्रोः' रिपोः । रिपुच्छेदनभेदन निग्रह करण मरञ्जिकायन्त्रम् ।।१६।।

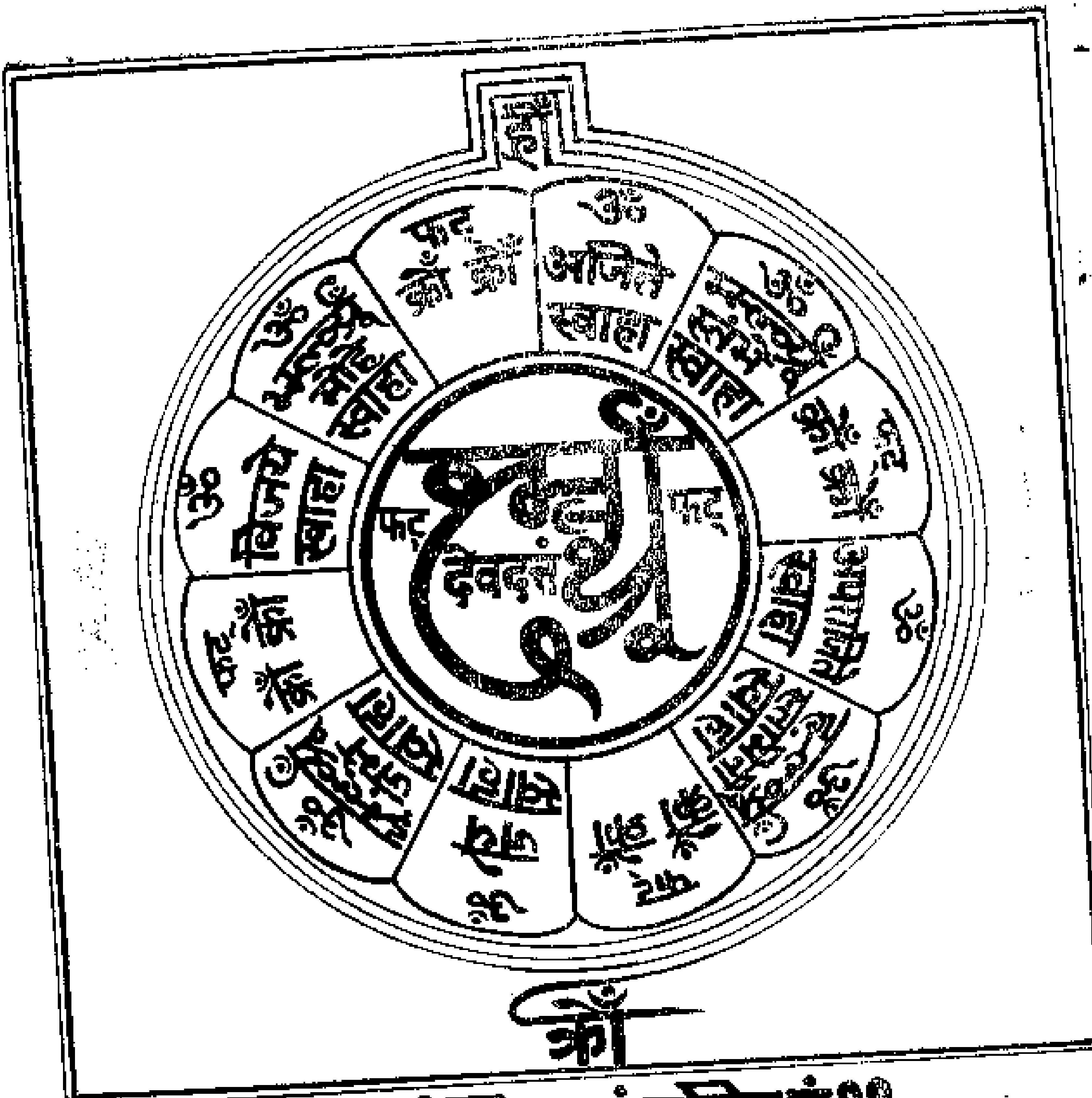

'फट्' रंजिका यंत्र चित्र नं० ११

'म' रंजीका यंत्र चित्र नं॰ १२

[हिन्दी टीका]–फिर इस यंत्र को स्मशान की जली मिट्टी की पुतली के पेट में स्थापन कर उस पुतली को स्मशान में गाड़ देवे, सात दिन के अन्दर शत्रु का छेदन भेदन निग्रह आदि होता है ॥१६॥

शत्रुच्छेदन भेदन, निग्रह करण म रंजिका यंत्र नं. १२।

तुर्यस्वरं लिखेद् विद्वान् मस्थाने नामसंयुतम् ।
कुङ्कुमागरुकर्पूरैर्भूर्ये रोचनयाऽन्वितैः ॥१७॥

[संस्कृत टीका]–'तुर्यस्वरं' चतुर्थस्वरं ईकारम् । 'लिखेत्' विलिखेत् । क्व ? 'मस्थाने' फणमकारस्थाने । कोऽसौ ? 'विद्वान्' । कथम् । नामसंयुतम् देवदत्त-नामान्वितम् कैः कृत्वा ? 'कुङ्कुमागरुकर्पूरैः' काश्मीरागरुचन्दनैः । कथम्भूतैः ? 'रोचनयाऽन्वितैः' गोरोचनायुक्तैः, क्व? 'भूर्ये' भूर्य पत्रे ॥१७॥

[हिन्दी टीका]–चतुर्थ स्वर याने ई कार को म के स्थान पर लिखे, भोजपत्र पर केशर, अगुरू, कपूं, गोरोचनादि सुगन्धित द्रव्यों से यंत्र को लिखे ॥१७॥

सुवर्णगठितं कृत्वा बाहौ वा धारयेद् गले ।
करोतीदं सदा यन्त्रं तरुणीजन मोहनम् ॥१८॥

[संस्कृत टीका]–'सुवर्णगठितं कृत्वा' सुवर्णेन वेष्टितं कृत्वा । 'बाहौ वा' दक्षिण भुजे वा । 'धारयेद् गले' कण्ठे वा धारयेत् । 'करोतीदं' एतत् करोति । 'सदा' सर्वकालम् । 'यन्त्रं' एतत्कथितयन्त्रम् । 'तरुणीजन मोहनम्' अबलाजन मोहकारी भवति । वशकर्मकरणे ईरञ्जिकायन्त्रम् ॥१८॥

[हिन्दी टीका]–यह यंत्र सोने के ताबीज में डाल कर हाथ में अथवा गले में बांधे तो सदा ही यंत्र तरूणी जन को मोहित करता है, वश करता है ॥१८॥

वशकर्म का ई रञ्जिका यंत्र चित्र नं. १३ देखो ।

वषड्वर्णयुतं कूटं लिखेदीकारधामनि ।
भूर्य पत्रे सितेऽत्यन्ते रोचनाकुङ्कुमादिभिः ॥१९॥

[संस्कृत टिका]–'वषड्वर्णयुतं' वषडित्यक्षरान्वितम् । कम् ? 'कूटम्' क्षकारं लिखेत् । कस्मिन् स्थाने ? 'ईकारधामनि' फडीकारस्थाने । क्व ? 'भूर्य पत्रे' । कथम्भूते ? सितेऽत्यन्ते' अत्यन्त शुभ्रे । कैः ? 'रोचनाकुङ्कुमादिभिः' गोरोचना काश्मीरादिभिः ॥१९॥

ईरंजिका यंत्र चित्र नं॰ १३

[हिन्दी टीका]–पूर्वोक्त यंत्रानुसार इ कार के स्थान पर क्ष व ष ट् को लिखे । किस पर लिखे ? अत्यन्त शुभ्रवर्ण वाले भोजपत्र पर लिखो, किस से लिखे ? केसर वगैरह सुगन्धित द्रव्यों से लिखे ।।१९।।

त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहौ कण्ठे च धारयेत् ।
स्त्रीसौभाग्यकरं यन्त्रं स्त्रीणां चेतोऽभिरञ्जकम् ।।२०।।

[संस्कृत टीका]–'त्रिलोहवेष्टितं कृत्वा बाहौ कण्ठे च धारयेत्' ताम्रतार-सुवर्णं त्रिलोहम्, तत्र ताम्रं द्वादशभागं, तारं षोडशभागं सुवर्णं त्रिभागं, एवं त्रिलोह भाग प्रमाणेन तद्यन्त्रवेष्टनं 'कृत्वा' कारयित्वा 'बाहौ कण्ठे च' दक्षिण भुजे ग्रीवायां च 'धारयेत्' ध्रियते । 'स्त्रीसौभाग्यकरं यन्त्रं' एतद् यन्त्रं दुर्भगस्त्रीणां सौभाग्यकरं भवति । 'स्त्रीणां चेतोऽभिरञ्जकम्' स्त्रीणां मनोऽभिरञ्जनं भवति ।। 'स्त्रीणां सौभाग्य करणे क्षवषड्रञ्जिकायन्त्रम् ।।२०।।

[हिन्दी टीका]–यंत्र को लिखकर त्रिलोह के ताबीज में डाले फिर सीधे हाथ में अथवा गले में बांधे तो दुर्भगा स्त्री को सौभाग्य की प्राप्ति होती है । स्त्रियों को प्रसन्न करने वाला यंत्र है ।

लोह माने ? १२ भाग तांबा, १ भाग लोहा, ३ भाग सोना मिलाकर त्रिलोह बनाया जाता है ।।२०।।

स्त्री सौभाग्य करण क्ष व ष ट् रंजिका यंत्र चित्र नं. १४ देखो ।

क्षाद्यक्षरपदे योज्यं लं शिलातलसम्पुटे ।
विलिख्योर्वीपुरं बाह्ये स्तम्भने तालकादिभिः ।।२१।।

[संस्कृत टीका]–'क्षाद्यक्षरपदे' क्षकारादिवषडक्षरफट्स्थाने । 'योज्यम्' योजनीयम् । किम् ? 'लं' लकारम् । क्व ? शिलातसम्पुटे । 'विलिख्य' लिखित्वा । किम् ? 'उर्वीपुरं' पृथ्वीपुरम् । क्व ? 'बाह्ये' त्रिपूर्तिवेष्टनबहिः प्रदेशे । कस्मिन् विषये ? 'स्तम्भने' क्रोधादिस्तम्भकरणे । कैः ? तालकादिभिः' हरिताला दिपतिद्रव्यैः । क्रोधादिस्तम्भनकरणे लरञ्जिका यन्त्रम् ।। इति द्वादशरञ्जिकोद्धार क्रमः ।।२१।।

[हिन्दी टीका]–पूर्वोक्त यंत्रनुसार (क्षवषट्) के स्थान पर लं कार को लिखे, कहां लिखे ? पृथ्वी में रहने वाले शिलातल संपुट पर लिखे । किस से लिखे?

'क्षवषट्' रंजिका यंत्र नं. १४

लं रंजिकायंत्र नं० १५

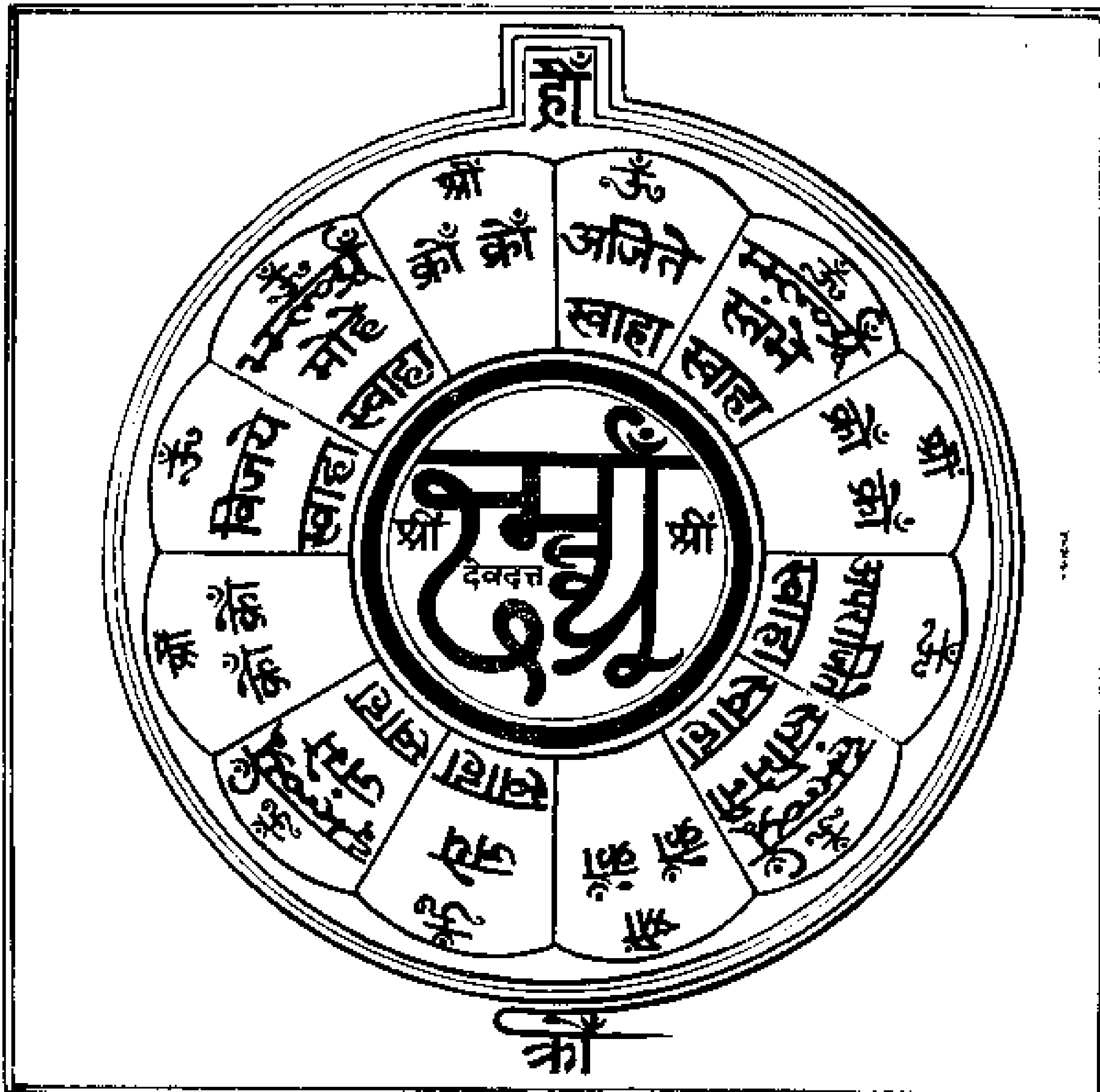

यह ग्रहादि रोग शांति 'श्री' रंजिका यंत्र चित्र नं॰ १६,

हरतालादि पीले द्रव्यों से लिखे और इन द्रव्यों से पृथ्वी मंडल बनाकर रखे, तो स्तंभन होता है ॥२१॥

यह क्रोधादि स्तंभन लं रंजिका यंत्र चित्र नं. १५ देखें

※स्तम्भने तु मैन्त्र निज बीजमन्त्रं (न्वं) श्री कुङ्कुमाद्योलिखितं सु भूर्ज्जे ।
त्रिलोहवेष्टयं विधृतं स्वबाहौ, करोति रक्षां ग्रह मारी रुग्भ्यः ॥२२॥

[हिन्दी टीका]—पूर्वोक्त यंत्र के अनुसार लं कार की जगह पर श्रीं कार को लिख कर स्थापन करे । इस यंत्र को भोजपत्र पर सुगन्धित द्रव्यों से लिखकर त्रिलोह के मादलीया में डालकर अपनी दाहिनी भुजा में धारण करे तो यह यन्त्र ग्रह मारी आदि रोगों से रक्षा करता हैं ।

ग्रहादि शांति कर्म का श्रीं रंजिका यंत्र चित्र नं. १६

इत्युभय भाषाकविशेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते
भैरव पद्मावती कल्पे द्वादशरञ्जिकायन्त्रोद्धाराधिकारश्चतुर्थः परिच्छेदः॥४॥

इस प्रकार उभय भाषा कवि श्री मल्लिषेणाचार्यविरचित भैरव पद्मावती कल्प का बारह रंजिका यंत्रोद्धार की हिन्दी विजया टीका

समाप्ता ।

(चौथा अध्याय समाप्त)

—o—

※इस चिन्ह से युक्त श्रीं कार रंजिका यंत्र व श्लोक, विधि हस्तलिखित संस्कृत टीका वाले ग्रंथ में नहीं है, हमने सूरत से कापड़िया जी द्वारा प्रकाशित प्रति से लिखा है ।

पञ्चमः क्रोधादिस्तम्भन यन्त्र परिच्छेदः

क्षमठ सहपलवर्णान् मलवर यूंकार संयुतान् विलिखेत् ।
अष्टदलेषु क्रमशो नाम ग्लौं कर्णिकामध्ये ॥१॥

(संस्कृत टीका]–'क्षमठ सह पलववर्णान् मलवर यूंकार संयुतान् विलिखेत् अष्टदलेषु' क्षश्च मश्च ठश्च सश्च लश्च क्षमठसहपलवाः ते च ते वर्णाश्च तान् क्षमठसहपलववर्णान् । कथम्भूतान् ? 'मलवरयूंकार संयुतान्' मश्च लश्च वश्च रश्च यूंकारश्च मलवरयूंकाराः तै संयुतान् मलवरयूंकार संयुतान् इति क्ष्म्ल्व्र्यूँ म्म्ल्व्र्यूँ ठ्म्ल्व्र्यूँ स्म्ल्व्र्यूँ ह्म्ल्व्र्यूँ इत्यष्टदलेषु । कथम् ? 'क्रमशः' प्राच्याविदिशां क्रम परिपाट्या । 'नाम ग्लौं कर्णिकामध्ये' तदष्टदलान्तः स्थितकर्णिकामध्ये देवदत्तनामाविन्तं ग्लौंकारं लिखेत् ॥१॥

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को क्रम परिपाटि से नाम सहित ग्लौं को प्रथम कर्णिका के मध्य में लिखो, उसके बाद क्रमशः यंत्र के आठों दलो में क्ष्म्ल्व्र्यूँ म्म्ल्व्र्यूँ ठ्म्ल्व्र्यूँ स्म्ल्व्र्यूँ ह्म्ल्व्र्यूँ प्म्ल्व्र्यूँ ल्म्ल्व्र्यूँ व्म्ल्व्र्यूँ ये पिंडाक्षर लिखे ॥१॥

मन्त्राभ्यामावेष्टय बाह्ये भूमण्डलेन संवेष्टय ।
कुङ्कुमहरितालाद्यं विलिखेदात्मेप्सित स्तम्भः ॥२॥

[संस्कृत टीका]–'मन्त्राभ्याम्' द्वाभ्यां मन्त्राभ्याम् । 'आवेष्ट्य' वेष्टयित्वा । 'बाह्ये' मन्त्रः बहिः प्रदेशे । 'भूमण्डलेन संवेष्टय' पृथ्वीमण्डलेन सम्यगावेष्टय लिखेत् । कैः? 'कुङ्कुमहरितालाद्यैः काश्मीर हरितालादिपीतद्रव्यैः । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । मन्त्रद्वयम्—

अग्निस्तम्भिनि ! पञ्चदिव्योत्तराणि ! श्रेयस्करि ! ज्वल प्रज्वल प्रज्वल सर्वकामार्थसाधिनि ! स्वाहा ॥

उँ अनलपिङ्गलोर्ध्वकेशिनि ! महादिव्याधिपतये स्वाहा ॥ अग्निस्तम्भनयन्त्रम् ॥

[हिन्दी टीका]–दोनों मंत्रों से यंत्र को वेष्टित करके भू मण्डल से वेष्टित करके लिखे ? किससे लिखे? केशर, हरताल आदि सुगन्धित द्रव्यों से लिखने से स्वयं को जो इष्ट है उसका स्तंभन हो जाता है । देखे यंत्र चित्र नं. १७

इष्टस्तंभनयंत्रनं· १७,

दोनों मंत्र :—ॐ नमो भैरवी अग्नि स्तंभिनि, पंचदिव्यो तारिणि श्रेयस्करी यशस्करी ज्वल-ज्वल प्रज्वल-प्रज्वल सर्व कर्म साधिनी स्वाहा ।।१।।

ॐ अनलपिङ्गलोर्द्धकेशिनि महादिव्याधिपतये (ठःठःठःठः) स्वाहा ।।२।।

ओंकारं चिन्तयेद् वक्त्रे विवादे प्रतिवादिनाम् ।
आं वा रेफं ज्वलन्तं वा स्वेष्ट सिद्धि प्रदायकम् ।।३।।

[संस्कृत टीका]–'ओंकारं चिन्तयेत्' ओमित्यक्षरं चिन्तयेत् । क्व ? 'वक्त्रे' कस्मिन् विषये ? 'विवादे' व्यवहारादि विषये । केषाम् ? 'प्रतिवादिनाम्' स्वप्रतिपक्षवादिनाम् । न केवलं ओंकारम्, 'आं वा' आमित्यक्षरं वा चिन्तयेत् । 'रेफं ज्वलन्तं वा' रकारं जाज्वल्यमानं वा चिन्तयेत् 'स्वेष्टसिद्धि प्रदायकम्' स्वकीयेप्सित-सिद्धिप्रदायकं भवति ।।३।।

[हिन्दी टीका]–दूसरे के साथ शास्त्रार्थ करते समय अपनी विजय हो, इसलिये मुँह में ओंकार आं अथवा जाज्वल्यमान रकार माने (रँ अग्नि बीज) का चिंतवन करने से इष्ट सिद्धि होती है ।।३।।

नाम ग्लौं खान्तपिण्डं वसुदल सहिताम्भोजपत्रे लिखित्वा
तत्पिण्डान्तेषु योज्यं बहिरपि वलयं विव्यमन्त्रेण कुर्यात् ।
ठान्तं भूमण्डलान्तं विपुलतर शिलासम्पुटे कुङ्कुमाद्यै-
र्धार्यं श्री वीरनाथक्रम युग पुरतो वह्निदिव्योपशान्त्यै ।।४।।

[संस्कृत टीका]–'नाम' देवदत्तनाम । 'ग्लौं' देवदत्तनामोपरि ग्लौंकारम् । 'खान्तपिण्डं' खकारस्यान्तो गकारः स चासौ पिण्डश्च खान्तपिण्डः ग्म्ल्व्र्यूँ इति पिण्डः तम् । 'वसुदलसहिताम्भोजपत्रे लिखित्वा' अष्टादलान्वितपद्मपत्रे विशेषेण लिखित्वा । 'तत्पिण्डं' तत्कर्णिकालिखित ग्म्ल्व्र्यूँ इति पिण्डम् । 'तेषु' अष्टपत्रेषु । 'योज्यम्' योजनीयम् । 'बहिरपि' तदष्टदल कमल बहिः प्रदेशे । 'वलयम्' । केन ? 'दिव्यमन्त्रेण' विशिष्ट मन्त्रेण । 'कुर्यात्' करोतु । 'ठान्तं' ठकारम् । कथम्भूतम् ? 'भूमण्डलान्तं' पृथ्वीमण्डलान्तः स्थितम् । दिव्य मन्त्र वलय बहिः प्रदेशे ठकारेणावेष्टय तद्बहिः पृथ्वी-मण्डलं लिखेत् इत्यभिप्रायः । क्व ? 'विपुलतरशिलासम्पुटे' विस्तीर्णपाषाण सम्पुटे । कैः ? 'कुङ्कुमाद्यैः' काश्मीरादिपीत द्रव्यैः । 'धार्यं' धारणीयम् । क्व ? 'श्री वीरनाथ क्रम युग पुरतः' श्री वर्धमान स्वामि चरण युगलाग्रतः । किमर्थम् ? 'वह्नि दिव्यो-पशान्त्यै' अनलदिव्योपशान्त्यर्थम् ।।४।।

वलय मन्त्रोद्धार :—

ॐ थम्भेइ जलजलणं चिंतियमित्तेण पञ्चरणमकारो अरिमारि चोरराउ-लघोरुवसग्गं विणासेइ[१] ।। स्वाहा[२] ।।

प्राकृत मन्त्रोऽयम् । इदमग्निस्तम्भनयन्त्रम् ।।

[हिन्दी टीका]—देवदत्त के नाम के ऊपर ग्लौं लिखकर फिर अष्टदल कमल बनाकर उस प्रत्येक कमल दल में ग्म्ल्व्य्रूँ पिंडाक्षर लिखे, फिर बाहर दिव्य मंडल लिखे, ऊपर के वलय में ठकार लिखे, उसके बाद पृथ्वी मंडल बनाकर विपुल-शिलातल सम्पुट करे। यह यंत्र शिलासंपुट पर केशरादि सुगन्धि द्रव्यों से लिखकर दिव्य अग्नि की शांति के लिये श्री महावीर स्वामी के चरण युगल के पास रख देवे ।।४।।

मंत्रोद्धार :—ॐ थंभेइ अमुके अमुकस्स जल ज्जलणं चिन्तिय मित्तेण पंचणमु यारो अरि मारि चोर राउल घोरुवसग्गंविणासेइ स्वाहा ।।
दिव्य अग्नि स्तंभन यंत्र चित्र नं. १८ देखे ।

दिव्येषु जलतुलाफणिखगेषु पवहक्षपिण्डमाविलिखेत् ।
पूर्वोक्ताष्टदलेष्वपि पूर्ववदन्यत् पुनः सर्वम् ।।५।।

[संस्कृत टीका]—**'दिव्येषु' चतुर्षु दिव्येषु । कथम्भूतेषु ? 'जलतुलाफणि-खगेषु' जल दिव्ये तुलादिव्ये घटसर्पदिव्ये पक्षिदिव्ये, एतेषु चतुर्षु दिव्येषु । 'पवहक्षपिण्डं' जल दिव्ये प्म्ल्व्य्रूँ इति पिण्डम् तुलादिव्ये ब्म्ल्व्य्रूँ इति पिण्डम्, फणिदिव्ये ह्म्ल्व्य्रूँ इतिपिण्डम्, पक्षिदिव्ये क्ष्म्ल्व्य्रूँ इति पिण्डम् । 'आविलिखेत्' समन्ताद्विलिखेत् । केषु ? 'पूर्वोक्ताष्टदलेषु' प्राग्विलिखिताष्टदलेषु । कथित चतुर्दिव्येषु पवहक्षपिण्डाः क्रमेण लेखनीयाः । अपि शब्दाद् मध्येऽपि च । 'पूर्ववदन्यत् पुनः सर्वं अन्यत् पुनः यन्त्रोद्धारं प्राग्लिखितं यथा तथैव सर्वम् ।।५।।**

[हिन्दी टीका]—चारों दिव्य स्तंभन के लिये जल, तुला, सर्प, पक्षी के स्तंभन के लिये, पूर्वोक्त आठों दलों में क्रमशः प, व, ह और क्ष से युक्त पिण्डाक्षरों को लिखे, जल दिव्य स्तम्भन के लिये प्म्ल्व्य्रूँ लिखे, तुला दिव्य स्तंभन के लिये ब्म्ल्व्य्रूँ पिंडाक्षर लिखे, सर्प दिव्य स्तंभन के लिये क्ष्म्ल्व्य्रूँ पिंडाक्षर लिखे ये सब

---

१. ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः पणासेउ इति ख पाठः ।
२. ठः ठः ठः ।

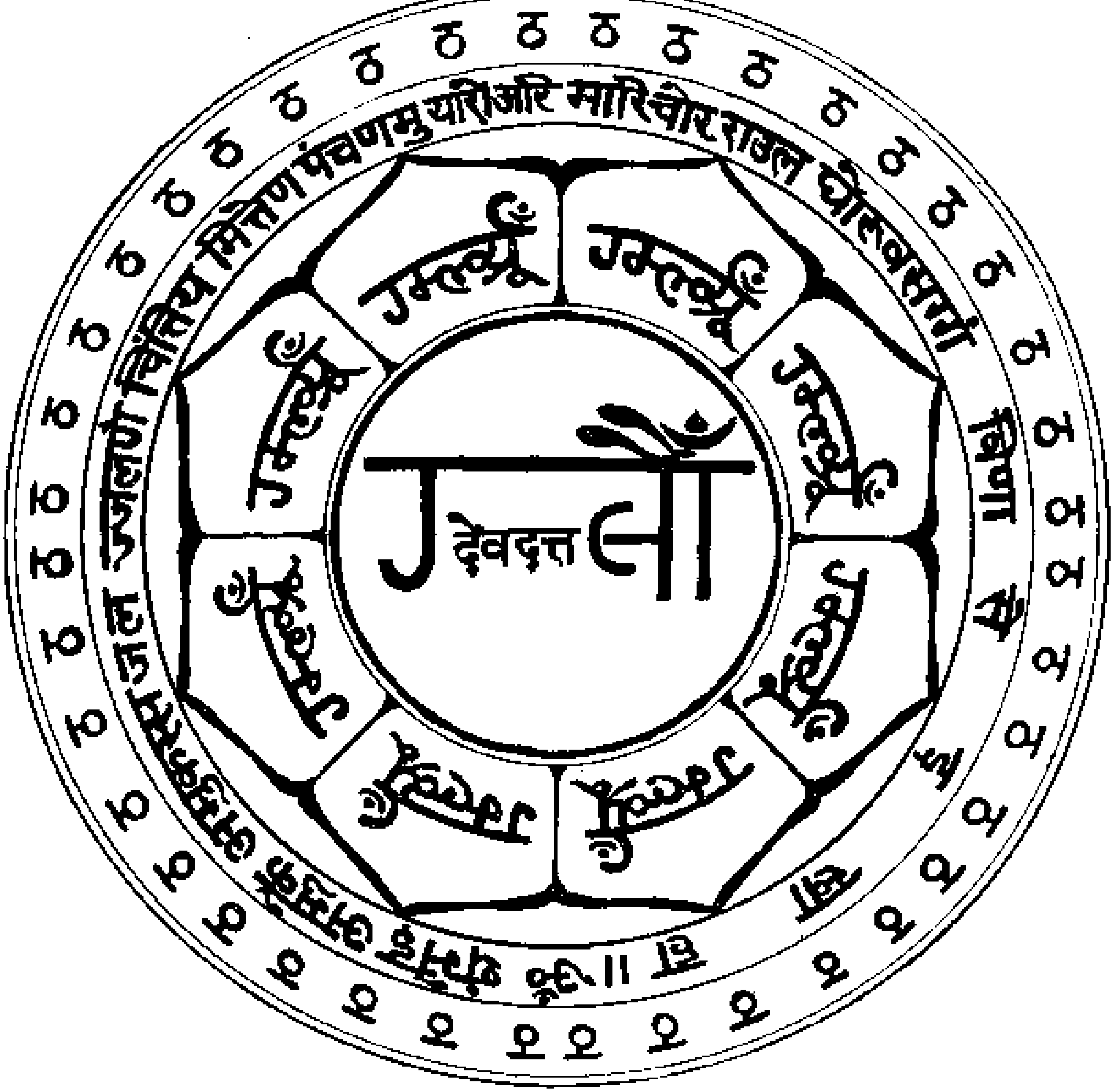

✱ द्वितीय अग्नि स्तंभन यंत्र चित्र नं॰ १८ ✱

पिंडाक्षरों को यंत्र के दलों में और कर्णिका के मध्य में लिखे, बाकी यंत्रोद्धार पहले कहे अनुसार करना ।।५।।

भावार्थ—जल स्ततंभन के लिये म्ल्व्यू्ँ को कर्णिका और यंत्र के आठ दलों में लिखे, उसी प्रकार तुला स्तंभन के लिये ल्म्व्यू्ँ सर्प स्तंभन के लिये ह्म्ल्व्यू्ँ लिखे और पक्षी स्तंभन के लिये क्ष्म्ल्व्यू्ँ पिंडाक्षर लिखे फिर बाह्यवलय बनाकर प्रत्येक यंत्र में पूर्वोक्त मंत्र लिखे और अंतिम वलय में ठ कार लिखे । पहले लिखे अनुसार ही इन यंत्रों की विधि है, यंत्र चित्र नं. ज. तु. स. प.
१९—२०—२१—२२

ब्रह्मग्लौंकार पुटं टान्तावृतमष्टवज्र संरुद्धम् ।
वामं वज्राग्रगतं तदन्तरे रान्तुबीजं च ।।६।।

[संस्कृत टीका]—'ब्रह्म' ॐकार सम्पुटम् इति बीजद्वयम् । कथम्भूतम् ? टान्तावृतम् । ठकारावृतम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'अष्टवज्रसंरुद्धम्' वज्राष्टकैः सम्यग्रुद्धम्। 'वामं वज्राग्रगतं' ॐकारो वज्राणां अग्रे स्थितः। 'तदन्तरे' तद्वज्राप्रान्तराले 'रान्तबीजं च' रकारस्यान्तो लकारः स एव बीजं रान्तबीजं लं इति । 'चः' समुच्चये ।।

[हिन्दी टीका]—ग्लौं कार के संपुट में ॐ कार लिखे फिर ठ कार से वेष्टित करके, उसको आठ वज्र से वेष्टित करे, वेष्टित किये हुए वज्र के मुख पर ॐ लिखे, उसके अन्तराल में लं बीज को लिखे ।।६।।

वार्तालो मन्त्रवृतं बाह्येऽष्टसु दिक्षु विन्यसेत् क्रमशः ।
मलवर यूंकार युतान् क्षमठसहपरान्तलान्तांश्च ।।७।।

[संस्कृत टीका]—'वार्तालीमन्त्रवृतं' वज्राणां बहिः प्रदेशे वार्तालीमन्त्रेण वेष्टितम् । 'बाह्ये' मन्त्रावेष्टन बहिः प्रदेशे । 'अष्टसु दिक्षु' अष्टासु दिशासु । 'विन्यसेत्' विशेषेण स्थापयेत् । कथम्? 'क्रमशः' क्रम परिपाटया। 'मलवरयूंकारयुतान्' मश्च लश्च वश्च रश्च यूंकारश्च मलवरयूंकाराः तैर्युताः मलवरयूंकारयुताःतान् मलवरयूंकारयुतान्। 'क्षमठसहपरान्तलान्तान्' क्षश्च मश्च ठश्च सश्च हश्च पश्च लश्च वश्च, 'रान्तो' रकारस्यान्तो लकारः लश्च, 'लान्तो' लकारस्यान्तो वकारः वश्च, क्षमठसहपरान्तलान्ताः तान् । एवं क्ष्म्ल्व्यू्ँ म्ल्व्यू्ँ ठ्म्ल्व्यू्ँ स्म्ल्व्यू्ँ ह्म्ल्व्यू्ँ प्म्ल्व्यू्ँ ल्म्ल्व्यू्ँ वल्व्यू्ँ एतानष्ट पिण्डान् । वार्तालीमन्त्रोद्धार :—

जलस्तंभन यंत्र चित्र नं॰ १९

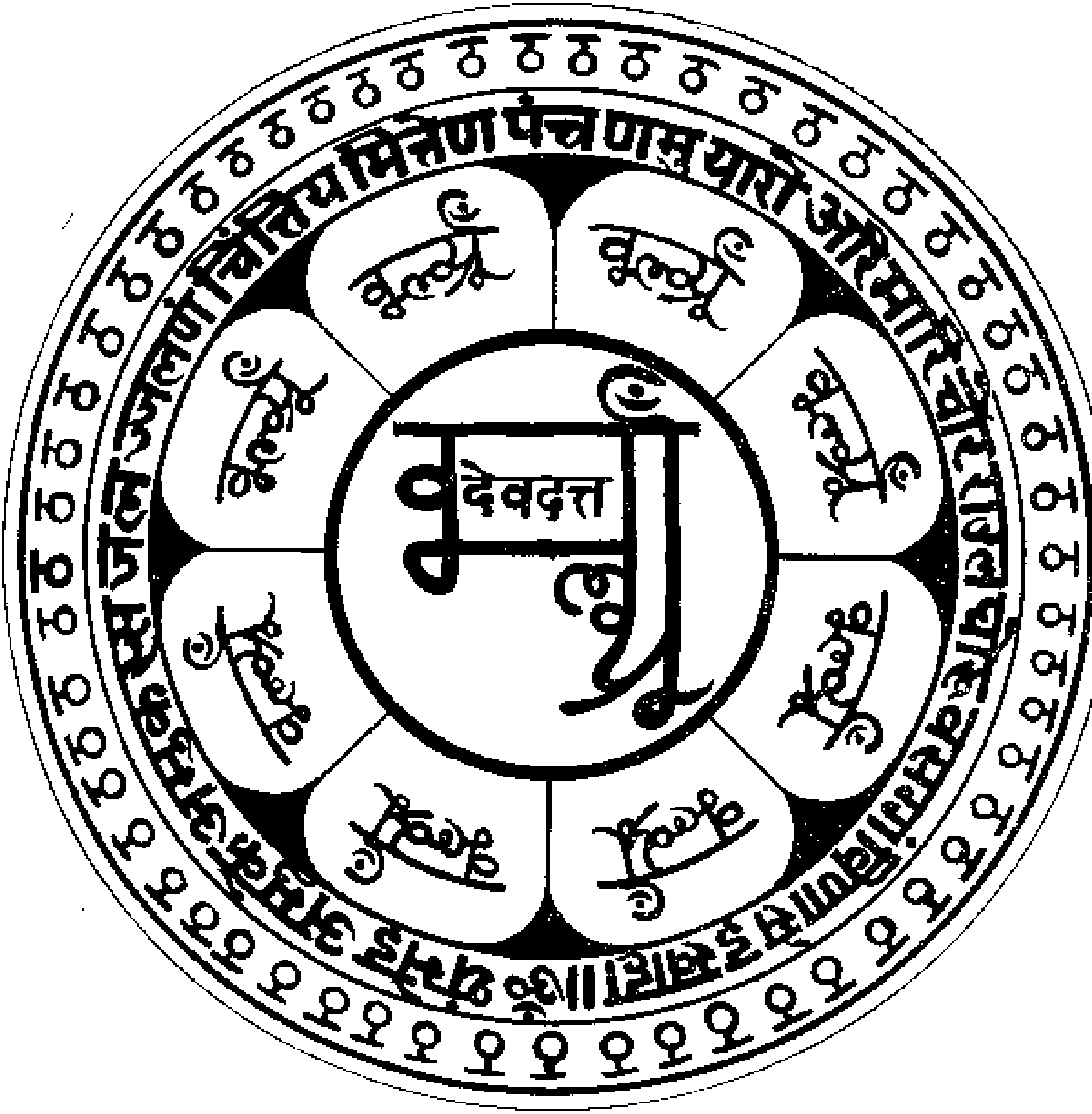

तुलास्तंभनयंत्र चित्र नं॰ २०,

सर्पस्तंभनकेलियेयंत्रचित्र नं॰२१

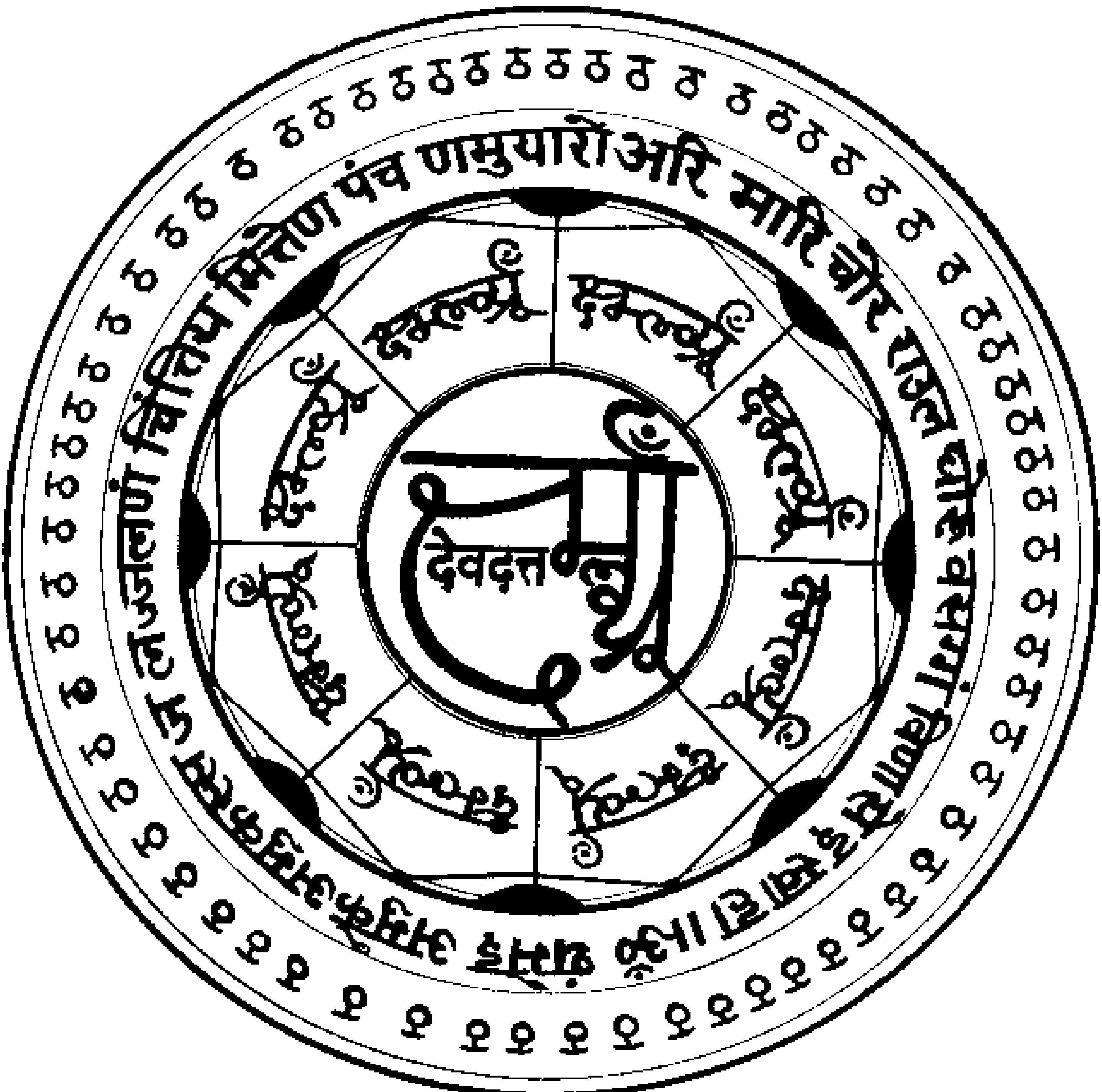

पक्षिस्तंभन के लिये यंत्र चित्र नं.-२२,

ॐ वार्तालि ! वराहि ! वराहमुखि । जम्भे ! जम्भिनि ! स्तम्भे ! स्तम्भिनि ! अन्धे ! अन्धिनि ! रून्धे ! रून्धिनि ! सर्वदुष्टप्रदुष्टानां क्रोधं लिलि गतिं लिलि[१] जिह्वां लिलि ॐ[२] ठः ठः ठः । अयं वार्तालीमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद वज्रों के बाह्य भाग में वार्ताली मंत्र को लिख कर उसके बाहर आठों दिशाओं में क्रमशः क्ष्म्ल्व्य्रूँ म्ल्व्य्रूँ ठ्म्ल्व्य्रूँ स्म्ल्व्य्रूँ ह्म्ल्व्य्रूँ प्म्ल्व्य्रूँ ल्म्ल्व्य्रूँ और क्ल्व्य्रूँ पिण्डाक्षरों को लिखे ।

वार्ताली मन्त्रोद्धार :—ॐ वार्तालि, वाराहि, वाराहमुखि, जम्भे, जम्भिनि स्तंभे, स्तंभिनि, अन्धे, अन्धिनि, रून्धे, रून्धिनि सर्वदुष्ट प्रदुष्टानां क्रोधं लिलि गति लिलि, मति लिलि, जिव्हां लिलि ठः ठः ठः । (ठः)

बाह्येऽमरपुरपरिवृतमङ्कुशरुद्धं करोतु तद् द्वारम् ।
उक्षेशमन्त्रवेष्टयं पृथ्वीपुर सम्पुटं बाह्ये ।।८।।

[संस्कृत टीका]—'बाह्ये' तत्पिण्डाष्टक बहिः प्रदेशे । 'अमरपुर परिवृतम्' इन्द्र पुरेण समन्तादावृतम् । 'अङ्कुशरुद्धं करोतु तद्द्वारम्' तद् इन्द्रपुरं चतुर्द्वारोभयपार्श्वे अङ्कुशः क्रोंकारः तेन रुद्धं कुर्यात् । 'उक्षेशमन्त्रवेष्टयं' तत्पुरबहिः प्रदेशे उक्षा ऋषभस्तस्य ईशः स्वामी श्री ऋषभनाथः तस्य मन्त्रः तेन उक्षेश मन्त्रेणावेष्टयम् । 'पृथ्वीपुरसम्पुटं बाह्ये' उक्षेशमन्त्रवलय बाह्ये पृथ्वी मण्डल संपुटं कुर्यात् ।

उक्षेश मन्त्रोद्धारः—ॐ नमो[३] भगवदो रिसहस्स तस्स पडिनिमित्तेण[४] चरणपणति इंदेण मणामइ यमेण[५] उग्घाडिया जीहा कंठोट्ठमुहतालुया खोलिया जो मं[६] भसइ जो मं हसइ दुट्ठदिट्ठीए वज्ज संखिलाए देवदत्तस्स मणं हियमं कोहं जीहा खीलिया सेलखिलाए ल ल ल ल[७] ठ ठ ठ ठ ।। उक्षेशमन्त्रोऽयं, प्राकृतमन्त्रः ।।८।।

[हिन्दी टीका]—इन आठ पिंडाक्षरो के बाह्य इन्द्रपुर बनावे, उसके बाहर चारों द्वार पर के दोनों पखवाड़े पर अंकुश बीज क्रौं कार से रूँधन करे, उस इन्द्रपुर बाहर बाह्य भाग में श्री ऋषभदेव का मंत्र लिखे ।

---

१. गति लिलि इति ख पाठः ।
२. ठः ठः ठः ठः ठः क्रों ह्रीं नमः स्वाहा इति ख पाठः ।
३. भगवतो इति ख पाठः । ४. पन्नति इति ख पाठः ।
५. उप्पाडिया इति ख पाठः । ६ हसइ जो बाचाहेइ इति ख पाठः ।
७. बंध बंध ठः ठः ठः क्रों ह्रीं नमः इति ख पाठः ।

ऋषभनाथ का मंत्रोद्धार :—ॐ णमो भगवदो रिसहस्स पडिनिमित्तेण चारण पण्णति इंदेण भणामइ ययेण उपाडिया अजीहा, कण्ठोठ मुह तालु वर वीलियायेमइ भंसदू योमइ दुट्ठदिट्ठिए वज्जसंखलाए देवदत्तस्स मणं हियय कोह जीह्वा खीलिया भेलखियाये, ल ल ल ल ठ ठ ठ ठ (लिखे)

कोणेष्वष्टसु विलिखेद् वार्तालीमन्त्रभणित जम्भादीन् ।

ठद्वितयं धरणीपुर मीदृशमिदमालिखेत् प्राज्ञः ।।९।।

[संस्कृत टीका]—'कोणेष्वष्टसु' ऋषेशमन्त्रवलयबहिरष्टसु दिशासु । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । कान् ? 'वार्तालीमन्त्रभणितजम्भादीन्' वार्तालीमन्त्र-स्यन्तरे कथित जम्भाद्यष्टदेवताः ! ॐ जम्भे ! स्वाहा, ॐ जम्भिनि ! स्वाहा, ॐ स्तम्भे ! स्वाहा, ॐ स्तम्भिनि ! स्वाहा, ॐ अन्धे ! स्वाहा, ॐ अन्धिनि ! स्वाहा, ॐ रुन्धे ! स्वाहा, ॐ रुन्धिनि ! स्वाहा, इत्यष्ट देवताः प्राच्याद्यष्टदिशासु क्रमेण स्थाप्याः । 'ठद्वितयं' जम्भादि देवी बहिः प्रदेशे ठकार द्वितयम् । 'धरणीपुरम्' ठकार बहिः प्रदेशे पृथ्वीमण्डलम् । 'ईदृशं' अनेन कथित प्रकारेण । 'इदं' एतद्वार्तालयभिधामं यन्त्रम् । 'आलिखेत्' समन्ताद् लिखेत् । कः ? 'प्राज्ञः' विद्वान् ।।९।।

[हिन्दी टीका]—उस ऋषभदेव के मंत्र से बाहर अठों दिशाओं में वार्तालिमंत्र में कहीं हुई जंभादि आठ देवियों का पूर्वादि दिशा में क्रम से स्थापना करे। इस क्रम से लिखे, ॐ जम्भे स्वाहा । ॐ जम्भिनि स्वाहा । ॐ स्तंभे स्वाहा । ॐ स्तंभिनि स्वाहा । ॐ अन्धे स्वाहा । ॐ अन्धिनि स्वाहा । ॐ रून्धे स्वाहा । ॐ रून्धिनि स्वाहा । लिखकर बाहर दो दो ठ कार की स्थापना करे, फिर ठ कार के बाहरी भाग में पृथ्वीमंडल को लिखे । इस प्रकार यह वार्तालियंत्र के लिखने क्रम है इसे विद्वानों को जानना चाहिये ।।९।।

फलके शिलातले वा हरितालमनः शिलादिभिर्लिखितम् ।

कोप गति सैन्य जिह्वास्तम्भं विदधाति विधियुक्तम् ।।१०।।

[संस्कृत टीका]—'फलके' काष्ठकृतफलके । 'शिलातले वा' अथवा पाषाणपट्टे वा । 'हरितालमनः शिलादिभिः' हरितालमनः शिलादिपीत द्रव्यैः । 'लिखितं' लिखितं सत् । किं करोति ? 'कोपगतिसैन्य जिह्वास्तम्भं' कोपस्तम्भं गतिस्तम्भं सैन्य-स्तम्भं जिह्वास्तम्भम् । 'विदधाति' विशेषेण करोति । कथम् ? 'विधि युक्तम्' यथा-विभागयुक्तं सति ।।१०।।

[हिन्दी टीका]—यह यंत्र हरताल, मनशिलादि पीले द्रव्यों से काष्ठ के पटीये पर अथवा शिलातल पर लिखे तो शत्रु का क्रोध स्तंभन हो, गति स्तंभन, सैन्य स्तम्भन और जिह्वा स्तंभन होता है ।।१०।। यंत्र चित्र नं० २३ देखो ।

।। वार्तालीमन्त्रोद्धार: समाप्त: ।।

नाम ग्लौंपुर्वीपुरं वं पं ग्लौंकारवेष्टितं कृत्वा ।
ह्रीँकार चतुर्वलयं स्वनामयुक्तं ततो लेख्यम् ।।११।।

[संस्कृत टीका]—'नाम' देवदत्तनाम । 'ग्लौँ' तन्नामोपरि ग्लौँकारम् । 'उर्वीपुरं' तदुपरि पृथ्वीमण्डलम् । 'वं पं ग्लौंकार वेष्टितं कृत्वा' उर्वीपुर बहि: प्रदेशे 'वं' वंकारं, तस्योपरि 'पं' पंकारं, पंकारोपरि ग्लौंकारं, एतैरक्षरत्रयैर्वेष्टनं कारयित्वा । ह्रीँकार चतुर्वलयम् । कथम्भूतम् ? 'स्वनामयुक्तम्' तद् ह्रीँकारं स्वकीय नामान्वितम् । 'तत:' तस्मात् ह्रीँकारात् । 'लेख्यं' लेखनीयम् ।।११।।

[हिन्दी टीका]—नाम के ऊपर ग्लौंकार उसके ऊपर पृथ्वीमंडल, मंडल के बाहर वंकार, उसके ऊपर पंकार, उसके ऊपर ग्लौं इस प्रकार तीन अक्षरों से देवदत्त को वेष्टित करके ऊपर ह्रीँ कार को चार वलयों में अपने नाम सहित लिखे ।।११।।

ॐ उच्छिष्टपदस्याग्रे स्वच्छन्द पदमालिखेत् ।
ततश्चाण्डालिनि ! स्वाहा ठान्तयुग्मकवेष्टितम् ।।१२।।

[संस्कृत टीका]-'ॐ' ॐ इत्यक्षरम् । 'उच्छिष्टपदस्य' उच्छिष्टेतिपदं तस्य । 'अग्रे' उच्छिष्टपदस्याग्रे 'स्वच्छन्दपदं' स्वच्छन्देतिपदम् । 'आलिखेत्' समन्तात् लिखेत् । 'तत: चाण्डालिनि ! स्वाहा' तत: स्वच्छन्दपदाच् चाण्डालिनि ! स्वाहा इति ।

एवं मन्त्रोद्धार :—ॐ उच्छिष्ट स्वच्छन्द चाण्डालिनि ! स्वाहा ।। इति मन्त्र विन्यास: ।। ठान्तयुग्मम् कवेष्टितम् ठकारद्वयेन वेष्टितम् ।।१२।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद उच्छिष्ट पद और उसके बाद आगे स्वच्छन्द फिर चाण्डालिनि स्वाहा लिखे, यानी :—

मंत्रोद्धार: —ॐ उच्छिष्ट स्वच्छन्द चाण्डालिनि स्वाहा, इस मंत्र को लिखकर वलय को दो ठकार से वेष्टित करे ।।१२।।

पृथ्वी वलयं दत्त्वा पुरोक्त मन्त्रेण वेष्टयेद् बाह्ये ।
रजनी हरितालाद्यै र्भूर्ये विधिनाऽन्वितो विलिखेत् ।।१३।।

[संस्कृत टीका]—'पृथ्वी वलयं दत्त्वा' ठान्तयुग्मं बाह्ये पृथ्वीमण्डलं दत्त्वा ।

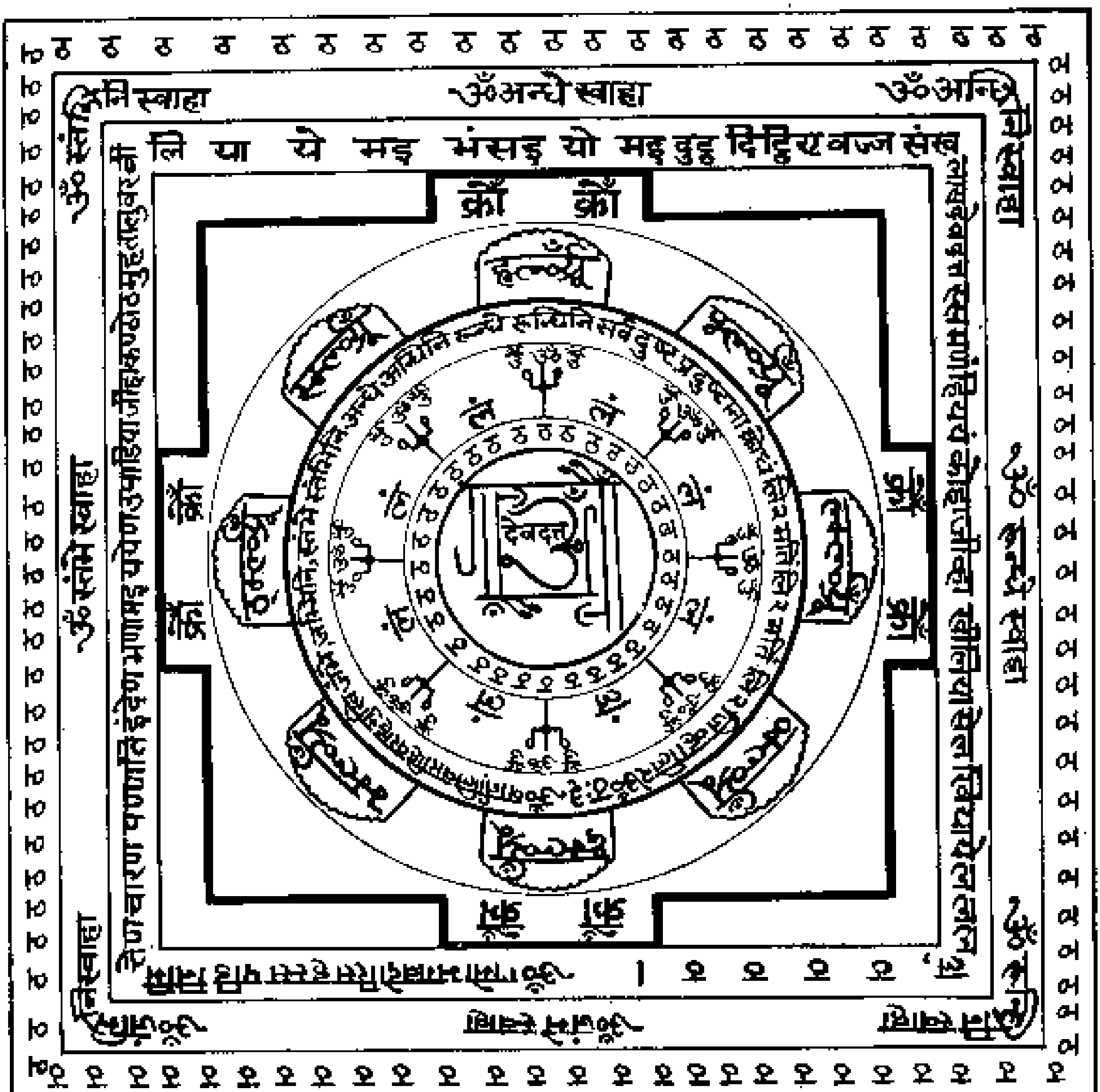

वार्तालियं यंत्रचित्र नं· २३

'पुरोक्त मन्त्रेण' पूर्वोक्त 'ॐ उच्छिष्ट' इत्यादि मन्त्रेण । 'वेष्टयेत्' वेष्टनं कुर्यात् । 'बाह्ये' पृथ्वीमण्डल-बहिः प्रदेशे । 'रजनीहरितालाद्यैः' हरिताल हरिद्रागोदन्तादिपीत द्रव्यैः । क्व ? 'सूर्ये' सूर्यपत्रे । विधिना' यथाविधानेन । 'अन्वितः' युक्तः । विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् ॥१३॥

[हिन्दी टीका]–पृथ्वी मंडल बनाकर ऊपर पूर्वोक्त मंत्र से यंत्र को वेष्टित कर देवे, इस यंत्र को भोजपत्र पर केशर हरितालादि द्रव्यों से विधिपूर्वक लिखे ॥१३॥

तत्कुलालकरमृत्तिकावृतं तोयपूरितघटे विनिक्षिपेत् ।
पार्श्वनाथमुपरिस्थमर्चयेद् दिव्यरोधन विधानमुत्तमम् ॥१४॥

[संस्कृत टीका]–'तत्' तद् यन्त्रम् । 'कुलालकरमृत्तिकावृतम्' कुम्भकारकराग्रमृदा वेष्टितम् । 'तोय पूरितघटे' जलपरिपूर्णनव घटे । 'विनिक्षिपेत्' निदध्यात् । 'श्री पार्श्वनाथं' श्री पार्श्वभट्टारकम् । कथम्भूतम् ? 'उपरिस्थं' तत्कुम्भस्योपरि स्थितम् । 'अर्चयेत्' पूजयेत् । 'दिव्यरोधन विधानम् दिव्य स्तम्भकरणम् । 'उत्तमं' श्रेष्ठम् । दिव्यस्तम्भनयन्त्रमिदम् ॥१४॥

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को कुम्भार के हाथों पर लगी हुई मिट्टी से यंत्र को बन्द कर, पानी से भरे हुये नवीन घडे में डालकर, उस घडे पर पार्श्वनाथ जिनेश्वर की पूजा करे, तो उत्तमदिव्य स्तम्भन होता है ॥१४॥

यह दिव्य स्तंभनयंत्र विधि है, यंत्र चित्र नं० २३ देखो ।

रिपुनामान्वितमान्तं मलवरयूंकारसंयुतं टान्तम् ।
तद्बाह्ये भूमिपुरं त्रिशूलभूतोग्रमृगवेष्ट्यम् ॥१५॥

[संस्कृत टीका]–"रिपुनामान्वितमान्तम्' शत्रोर्नामयुक्तं 'मान्तम्' यकारम् । 'मलवरयूंकारसंयुतं' मश्च लश्च वश्च यूंकारश्च मलवरयूंकाराः तैः संयुतम् । कम् ? 'टान्तम्' ठकारम् । एवं ठ्म्ल्व्र्यूं" इति बीजं, यकार बहिः प्रदेशे । 'तद्बाह्ये भूमिपुरं' 'तत्पिड बाह्ये भूमिपुरं' तत्पिण्ड बाह्ये पृथ्वीमण्डलम् । 'त्रिशूलभूतोग्रमृगवेष्ट्यम्' तत्पृथ्वीमण्डलबाह्ये त्रिशूलनैकभूतक्रूरमृगजातैः 'वेष्टयं' परिवृतम् ॥१५॥

[हिन्दी टीका]–देवदत्त के नाम सहित यकार को लिखकर ठ्म्ल्व्र्यूं" यह बीज लिखकर उसके ऊपर पृथ्वीमंडल बनावे, फिर उसको त्रिशूल, भूत, आदि हिंसक पशुओं से चारों तरफ घेर दे ॥१५॥

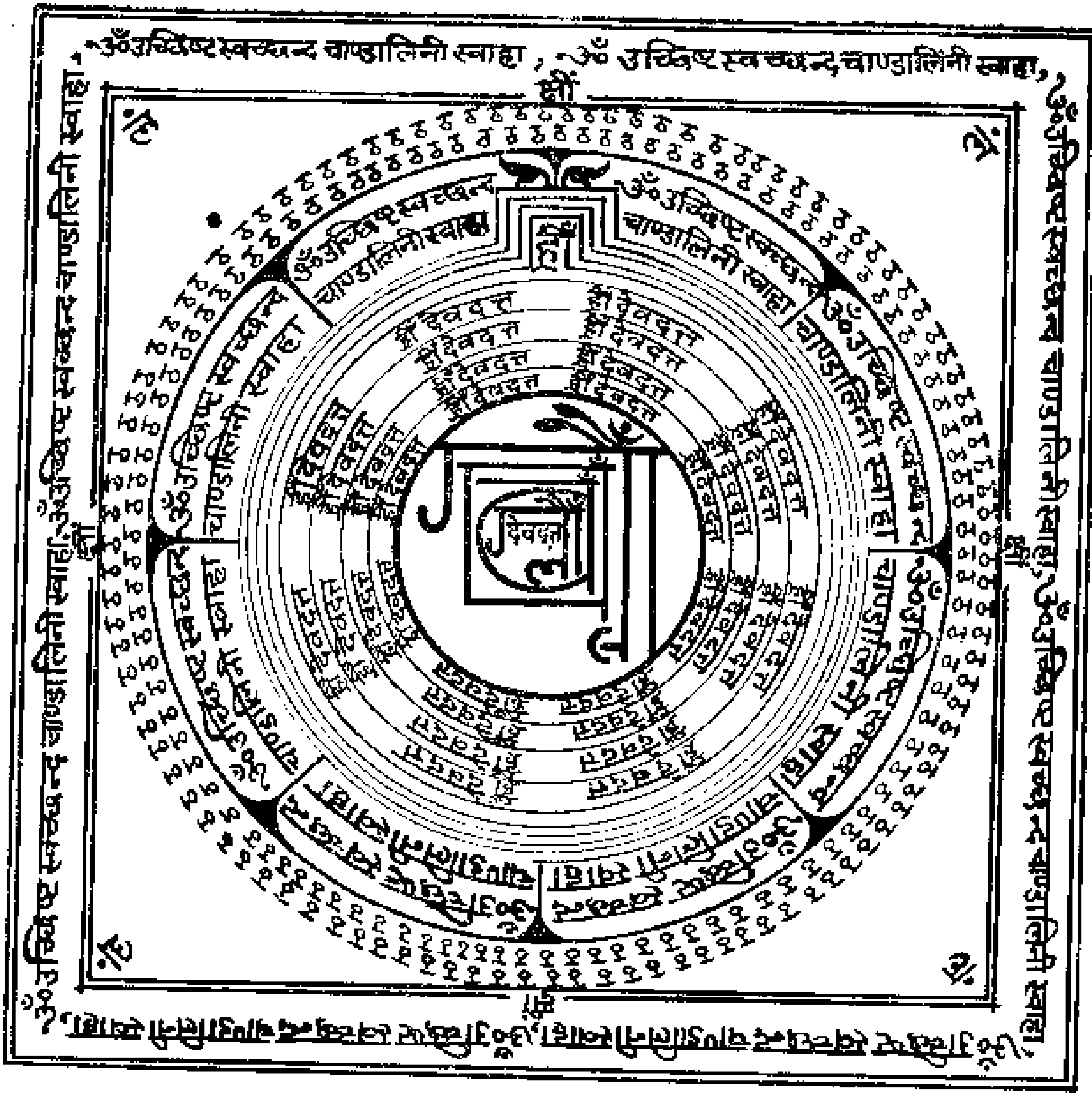

दिव्य स्तंभन यंत्र चित्र नं॰ २३

प्रतिरूप हस्त खड्गैं निहन्य मानारिरूप परिवेष्टयम् ।
शत्रोर्नामान्तरितं समन्ततो वेष्टयेत् पिण्डैः ॥१६॥

[संस्कृत टीका]—'प्रति रूप हस्तखड्गैः' प्रति शत्रु हस्तकृपाणैः । 'निहन्य-मानारिरूपपरिवेष्टयं' निहन्यमानैः निः शेषेण हन्यमानैः अरिरूपैः प्रतिशत्रुरूपैः परि-वेष्टयम् । 'शत्रोर्नामान्तरितं' वैरिनामान्तरितम् । 'समन्ततः' शत्रुप्रतिशत्रुनाम्नोर्बाह्ये परितः । 'वेष्टयेत्' वेष्टनं कुर्यात् । कैः ? 'पिण्डैः' नामान्तरित ठकार पिण्डैः ॥१६॥

[हिन्दी टीका]—फिर प्रतिशत्रु के द्वारा शत्रु मारा जा रहा है, इस प्रकार शत्रु की मूर्ति चित्रित करे, उसके बाद शत्रु के नाम को ठ्म्ल्व्र्यूँ पिण्ड से घेर दे ॥१६॥

प्रतिरिपुवाजिमहागज नामान्तरितं समन्ततो मन्त्रम् ।
विलिखेदों ह्रूँ ह्रीं क्लें ग्लौं स्वाहा टान्तयुग्मान्तम् ॥१७॥

[संस्कृत टीका]—'प्रतिरिपुः' प्रति शत्रुः तस्य 'वाजिमहागजनामान्तरितं' पट्टाश्वगजनामान्तरितम् । 'समन्ततः' नामान्तरित ठ पिण्ड बाह्ये परि समन्तात् । 'मंत्रं' मन्त्रवलयम् । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् ।

मन्त्रोद्धार :—उँ ह्रूँ ह्रीं क्लें ग्लौं स्वाहा ठ ठ देवदत्तस्य पट्टाश्वे,

उँ ह्रूँ ह्रीं क्लें ग्लौं स्वाहा ठ ठ देवदत्तस्य पट्टगजे उँ ह्रूँ ह्रीं इत्यादि मन्त्रेण समन्ततो वेष्टयेत् ।

वेष्टनमन्त्रोद्धारः कथ्यते— उँ ह्रीं भैरव रूप धारिणि ! चण्डशूलिनि ! प्रतिपक्षसैन्यं चूर्णय चूर्णय घूर्म्मय घूर्म्मय भेदय भेदय ग्रस ग्रस पच पच खादय खादय मारय मारय हुँ फट् स्वाहा ॥१७॥

[हिन्दी टीका]—उसके बाद ठकार पिण्ड के अंदर प्रतिशत्रु के मुख्य घोड़ा और मुख्य हाथी का नाम लिखकर ठ पिण्ड के बाहर विशेष रीति से यह मंत्र लिखे ।

मंत्रोद्धार :— ॐ ह्रूँ ह्रीं क्लैं ग्लौं स्वाहा ठः ठः देवदत्तस्य पट्टाश्वं, ॐ ह्रूँ ह्रीं क्लैं ग्लौं स्वाहा ठः ठः देवदत्तस्य पट्टागजे, ॐ ह्रूँ ह्रीं ऐं ग्लौं स्वाहा ठः ठः । इन मंत्रों से वेष्टित करे ।

और नीचे लिखे मंत्र से वेष्टित करे ।

ॐ ह्रीं भैरवरूपधारिणि चण्डशूलिनी, प्रतिपक्ष सैन्यं चूर्णय २ घूर्म्मय २ भेदय २ ग्रस २ पच २ खादय २ मारय २ हूँ फट् स्वाहा ॥१७॥

मन्त्रेण वेष्टयित्वाऽनेन ततोऽरातिविग्रहो लेख्यः ।
अष्टासु दिक्षु बहिरपि माहेन्द्रं मण्डलं दद्यात् ॥१८॥

[संस्कृत टीका]—'मन्त्रेण वेष्टयित्वाऽनेन' अनेन कथित मन्त्रेण वेष्टितं कृत्वा । 'ततः' तन्मन्त्रवेष्टनाद् बहिः प्रदेशे । 'अराति विग्रहो लेख्यः' शत्रुरूपं लेख्यम् । क्व ? 'अष्टासु दिक्षु' प्राच्याद्यष्टदिशासु । 'बहिरपि' विग्रह् बहिः प्रदेशेऽपि । 'माहेन्द्रं मण्डलं' इन्द्रमण्डलम् । 'दद्यात्' देयम् ॥१८॥

[हिन्दी टीका]—पहले कहे हुए मंत्र से वेष्टित करके बाहर के प्रदेश में शत्रु का रूप लिखकर बाहर महेन्द्र मण्डल बनावे ॥१८॥

प्रेतवनात् सञ्चालितमृतक मुखोज्झितपटेऽथवा विलिखेत् ।
कृष्णाष्टम्यां युध्द्वा त्यक्तप्राणस्य सङ्ग्रामे ॥१९॥

[संस्कृत टीका]—'प्रेतवनात्' श्मशान भूमेः सकाशात् । 'संचालितमृतक मुखोज्झितपटेऽथवा विलिखेत्' सम्यगुच्चलित मृतक मुखोज्झितपटेऽथवा प्रेतस्य प्रच्छादित वस्त्रे विलिखेत् । अथवा 'कृष्णाष्टम्यां युद्ध्वा त्यक्तप्राणस्य संग्रामे' कृष्णाष्टम्यां कृष्ण चतुर्दश्यां 'सङ्ग्रामे' रणाङ्गणे युद्ध्वा कृतप्राण परित्याग पुरुषस्य वस्त्रे वा विलिखेत् ॥१९॥

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को स्मशान भूमि से लाए हुए मृत के मुखपर के वस्त्र अथवा कृष्णा अष्टमी को युद्ध में मरे हुए योद्धा के वस्त्र पर लिखे ॥१९॥

कन्याकर्तित सूत्रं दिवसेनैकेन तत्पुनर्वीतम् ।
तस्मिन् हरितालाद्यैः कोरण्टक लेखिनीलिखितम् ॥२०॥

[संस्कृत टीका]—'कन्याकर्तित सूत्रं' कुमार्या कर्तितं सूत्रम् । 'तत्' कुमार्या कर्तितसूत्रम् । 'दिवसेनैकेन पुनर्वीतम्' पुनरपि एकेन दिवसेन वासितम् । 'तस्मिन् हरितालाद्यैः' तस्मिन् वस्त्रे हरितालादिपीत द्रव्यैः । 'कोरण्टक लेखिनी लिखितम्' कोरण्टकलेखिन्या लिखितम् ॥२०॥

[हिन्दी टीका]—अथवा कन्या के काते हुए सूत से बनाये हुए वस्त्र से अर्थात् एक ही दिन में सूत कातकर उसी दिन वस्त्र बनाये हुए पर करंटक की कलम और हरिताल आदि द्रव्यों से लिखे ॥२०॥

पद्मावत्याः पुरतः पीतैः पुष्पैः पुरा सम्भ्यर्च्य ।
यन्त्रपटं बध्नीयात् प्रख्याते चान्तरे स्तम्भे ॥२१॥

[संस्कृत टीका]—'पद्मावत्याः पुरतः' पद्मावती देव्यग्रतः । 'पीतैः पुष्पैः पुरा समभ्यर्च्य' पीतवर्णप्रसूनैः पूर्वं सम्यक् पूजयित्वा । 'यन्त्रपटं' एतल्लिखित यन्त्र पटम् । 'बध्नीयात्' निबध्नीयात् । 'प्रख्याते' विख्याते । 'च:' समुच्चये । 'प्रान्तरे स्तम्भे' अभ्यन्तर स्तम्भे ॥२१॥

[हिन्दी टीका]—फिर इस यंत्र को पद्मावती देवी के सामने पीले पुष्पों से पूजन करके इसको एक अत्यन्त ऊँचे प्रसिद्ध स्तंभ में बांध दे ॥२१॥

तं दृष्ट्वा दूरतरान्नश्यन्ति भयेन विह्वली भूताः ।
विरचित सेना व्यूहात् सङ्ग्रामेऽशेषरिपुवर्गाः ॥२२॥

[संस्कृत टीका]—'तं दृष्ट्वा' स्तम्भे निबद्धं यन्त्रपटं दृष्ट्वा । 'दूरतरान्नश्यन्ति' अतिदूरादेव 'नश्यन्ति' पलायन्ते । 'भयेन विह्वलीभूताः' भीत्या विकलीभूताः । कस्मात् ? 'विरचितसेनाव्यूहात् विशेषेण रचितो विरचितः, विरचितश्चासौ सेनाव्यूहश्च विरचित सेनाव्यूहः तस्मात् । क्व ? 'सङ्ग्रामे' रणभूमौ । के ? 'अशेषरिपुवर्गाः' इतरशत्रुसमूहाः । नश्यन्तीति संबन्धः ॥२२॥

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को दूर से देखकर युद्ध में सेना का व्यूह बनाये हुए सब शत्रु लोग भय से डरकर भाग जाते हैं ॥२२॥

दिव्य सेना स्तंभन यंत्र चित्र नं० २४ देखे ।

इत्युभयभाषाकविशेखर श्रीमल्लिषेणसूरिविरचिते भैरवपद्मावतीकल्पे स्तम्भनयन्त्राधिकारः पञ्चमः परिच्छेदः ॥५॥

श्री उभय भाषा कवि श्री मल्लिषेणाचार्य विरचित भैरव पद्मावती कल्प का स्तम्भनयंत्राधिकार की हिन्दी भाषा की विजया नाम की टीका समाप्त हुई ।

(पांचवां अधिकार समाप्त)

———०———

सैन्यस्तंभन यंत्र चित्र नं. २४,

षष्ठोऽङ्गनाकर्षण परिच्छेदः

द्विरेफयुक्तं लिख मान्तयुग्मं षष्ठस्वरौकारयुतं सबिन्दु ।
स्वरावृतं पञ्च पुराणि वह्नेः रेफात् क्रमात् क्रौमथ ह्रीं च कोणे ।।१।।

[संस्कृत टीका]—'द्विरेफयुक्तं' रेफद्वय संयुक्तम् 'लिख' लेखय । किंतत्? 'मान्तयुग्मम्' मकारस्यान्तो मान्तो यकारः, तस्य युग्ममिति यकारयुगलम् । किंविशिष्टम् ? 'षष्ठस्वरौकार युतम्' षष्ठस्वरश्च औकारश्च षष्ठस्वरौकारौ ताभ्यां युत षष्ठस्वरौकारयुतम्, ऊकारः--औकारसंयुतम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'सबिन्दु' अनुस्वारेण संयुक्तम् । एवं य्रूं य्रौं । पुनरपि कथम्भूतम् ? स्वरावृतम्' तद्बीजबहिः प्रदेशे षोडशकलभिरावेष्टयम् । पञ्चपुराणि वह्नेः' आवृतकलावेष्टनबहिः प्रदेशे पञ्चवह्निपुराणि । 'रेफात् क्रमात् क्रौमथ ह्रीं च कोणे' रेफाक्षर सकाशाद् यथानुक्रमेण क्रौमत्यक्षरम् । 'अथ' क्रौंकारादनन्तरम् । 'ह्रीं' ह्रीमिति बीजम् । 'चः' समुच्चये । क्व ? कोणे ।।१।।

[हिन्दी टीका]—दो रेफ से युक्त छट्ठा स्वर उकार और औकार युक्त अनुस्वार सहित दो यकार लिखना, यानी य्रूं और य्रौं को लिखना, फिर इस बीज के बाहरी भाग में सोलह स्वरों को लिखे, तदनंतर उसके बाहरी भाग में पांच अग्निपुर का लेखन करे, पांच अग्निपुर के प्रथम मंडल के तीनों कोनों में क्रौं और ह्रीं बीज को अनुक्रम से लिखे ।।१।।

क्लौंकाररुद्धं च तथा ह्स्क्लीं ब्लूंकाररुद्धं च ह्सौस्तथैव ।
क्रमेण दिक्षु त्रिषु चाम्बिकाया यन्त्रं बहिर्वह्निमरुत्पुरं च ।।२।।

[संस्कृत टीका]—'क्लौंकाररुद्धं च' क्लौंकारद्वितयरुद्धम् । 'तथा ह्स्क्लीं' तथा पूर्वोक्ताक्षर विधानेन ह्स्क्लीं इति बीजाक्षरम् । 'ब्लूंकार रुद्धं च' ब्लूंकारयुगलरुद्धं च । 'ह्सौं तथैव' ह्सौं इति बीजाक्षरम् 'क्रमेण' प्रथम मण्डलकोणत्रये ह्रीं इति बीजम्, द्वितीय मण्डल कोणत्रये क्रौं इति बीजम्, तृतीय मण्डल कोणत्रये ह्रीं इति बीजम्, चतुर्थ मण्डल कोणत्रये क्लैंकाररुद्धं ह्स्क्लीं इति बीजम्, पञ्चम मण्डलकोणत्रये[१] ब्लूंकाररुद्धं ह्सौं इति बीजम्, एवमनेन क्रमेणवह्निपञ्च

---

१. ब्लेंकार इति ख पाठः ।

पुराणिलेखनीयानि । 'दिक्षु त्रिषु' तन्मण्डलत्रिदिशासु 'मन्त्रं' वक्ष्यमाणमन्त्रम् । कस्याः ? 'अम्बिकायाः' अम्बिकायक्षिदेव्याः । 'बहिः' तन्मात्रेबाह्यं 'वह्निमरुत्पुरं' अग्निमण्डलं वायुमण्डलं च ॥२॥

अम्बिका मन्त्रोद्धार :–

ॐ नमो भगवति! अम्बिके! अम्बालिके! यक्षिदेवि यूँ यौं ब्लें ह्रक्लीँ ब्लं ह्सौः[1] र र र रां रां नित्यक्लिन्ने ।[2] मदनद्रवे । मदनातुरे! ह्रीँ क्रौं अमुकां मम वश्याकृष्टि कुरु कुरु सवौषट् ॥

[हिन्दी टीका]:–उसके बाद प्रथम मण्डल के कोणो पर रं लिखे, द्वितीय मण्डल के तीनों कोणों पर क्रौं लिखे, तृतीय मंडल के तीनो कोणों पर ह्रीँ लिखे, उसी प्रकार आगे ब्लूँ लिखे और आगे ह्स्ल्कीँ लिखे, उसके बाद ह्सौं लिखे, तदनन्तर तीनो ही दिशाओं में अम्बिका देविका मंत्र लिखे, उसके बाद अग्निमंडल और वायु मण्डल लिखे ।

मन्त्रोद्धार :–ॐ नमो भगवति (अम्बे, अम्बाले, अम्बिके) अंबिके अंबालिके यक्ष देवि यूँ यौं ब्लैं ह्स्ल्कीँ ब्लूँ ह्सौं रः रः रः रः रां रां नित्ये, क्लिन्ने मदद्रवे मदनातुरे ह्रीँ क्रौं अमुकीं मम वश्याकृष्टि कुरु कुरु संवौषट् ॥२॥

इष्टाङ्गनाकर्षणमाहुराद्या धत्तूरताम्बूल विषादि लेख्यम् ।
यन्त्रं पटे खर्परताम्रपत्रे दिनत्रये दीपशिखाग्नितप्तम्[3] ॥३॥

[संस्कृत टीका]–'इष्टाङ्गनाकर्षणम्' इष्टप्रमदाजनाकृष्टिम् । 'आहुः' ब्रुवन्ति । के ? 'आद्याः' पूर्वाचार्याः । कम् ? 'यन्त्रम्' किंविशिष्टम् ? 'धत्तूरताम्बूल-विषादिलेख्यम्' उन्मत्तरसः तन्मुखताम्बूलरसः 'विषं' शृङ्गीविषं आदिशब्दाद् उद्वर्तनादिभिः 'लेख्यम्' इत्यादि द्रव्यैः लेखनीयम् । 'यन्त्रम् कथितयन्त्रम् । क्व ? 'पटे' वस्त्रे । 'खर्परे' नूतन खपरे । 'ताम्रपत्रे शुल्बपत्रे । 'दिन त्रये' त्रिदिने । 'दीपशिखाग्नि तप्तम्' प्रदीप शिखा ज्वालातप्तम् ॥३॥

---

१. रः रः रः रः रां रां इति ख पाठः ।

२. मदद्रवे इति ख पाठः ।

३. आकृष्टिमिष्टप्रमदाजनानां करोति यन्त्रं खदिराग्नितप्तम् ।
इति श्लोकार्द्धमधिकं दीपशिखाग्नितप्तमित्यस्यानन्तरं पठ्यते ग पुस्तके । तट्टीकाऽपि दृश्यते । सा यथा :'आकृष्टि' । कासाम् ? 'इष्टप्रमदाजनानां' स्वकीयैप्सितानामङ्गनानाम् । 'करोति' कुरुते । किंतत् ? 'यन्त्रं' एतत् कथितयन्त्रम् । किंविशिष्टम् ? खदिरकाष्ठाङ्गारतप्तम् ॥

[हिन्दी टीका]—इस प्रकार अंगानाकर्षण यंत्र विधि को पूर्वाचार्यों ने कहा, इस यंत्र को जिसको वश करना है उसके कपड़े पर अथवा खोपड़ी पर वा तांबे के पतरा पर, धतूरा के रस से, उसके पान की पीक से अथवा बच्छ नाग आदि द्रव्यों से लिखकर दीपक की शिखा पर तपाने से इष्ट स्त्री का आकर्षण होता है ।।३।।

स्त्री आकर्षण यंत्र चित्र नं. २५

नोट :—इस यंत्र की विधि में तीनों प्रति में अलग-अलग वर्णन है, मंत्र में एक प्रति में (अम्बे, अम्बाले, अम्बिके) है, संस्कृत प्रति में (अम्बिके अम्बालिके) है, इसी प्रकार मणिलालसाराभाई के यहां से प्रकाशित प्रति में है। उसी प्रकार यंत्र में भी, प्रथम मंडल के कोणों में रं लिखा है, कहीं यं लिखा हुआ है, सं. प्रति में यं और सूरत से प्रकाशित में यं, इत्यादि अंतर है। मंत्र शास्त्रज्ञाता सुधार कर लिखें, हमने तो संस्कृत प्रति के मूल पाठ का अनुसरण किया है।

ॐ ह्रीँ हृत्कमले गजेन्द्रवशकं सर्वाङ्ग सन्धिष्वपि
मायामाविलिखेत् कुचद्वितय योर्य्यूँ योनिदेशे तथा ।
क्रोँकारैः परिवेष्टय मन्त्रवलयं दद्यात् पुरं चानलं
तद्बाह्येऽनिलभूपुरं त्रिदिवसे दीपाग्निनाऽऽकर्षणम् ।।४।।

[संस्कृत टीका]—'ॐ ह्रीँ हृत्कमले हृदय कमल मध्ये ॐ ह्रीँ इति बीजाक्षरं विलिखेत् । 'सर्वाङ्गसन्धिषु' सर्वशरीर सन्धिषु । 'अपि' तथा । 'गजेन्द्रवशकं' अङ्कुशम्। 'कुचद्वितययोः' स्तनद्वितययोः । 'मायामाविलिखेत्' । ह्रीँकारमाविलिखेत् । 'तथा' तेन प्रकोरेण। 'योनिदेशे' योनि प्रदेशे । 'य्यूँ' य्यूँ इति बीजम् । 'क्रोँकारैः परिवेष्टय' तद्रूपबहिः प्रदेशे क्रोँकारैः समन्तात् वेष्टयित्वा । 'पुरं चानलम्' तन्मन्त्रवलयबहिः अग्निमण्डलं धयात् 'तद्बाह्येऽनिलभूपुरम्' तदग्निमण्डलबहिः प्रदेशे वायुमण्डलं तदुपरि-भूमण्डलं दद्यात् । 'त्रिदिवसे दीपाग्निनाकर्षणम्' दिनत्रयमध्ये प्रदीप शिखाग्निना आकर्षणं स्यात् ।।४।।

वलयमंत्रोद्धार :—ॐ नमो भगवति ! कृष्णामाताङ्गिनि ! शिलावल्कल कुसुम[१] रुप धारिणि ? किरात शवरि ! सर्वजनमोहिनि[२] ! ह्रां ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अमुकां मम वश्याकृष्टि कुरु कुरु संवौषट् ।

---

१. वेषधारि इति ख पाठः ।
२. सर्वजनमनो मोहिनी इति ख पाठः ।

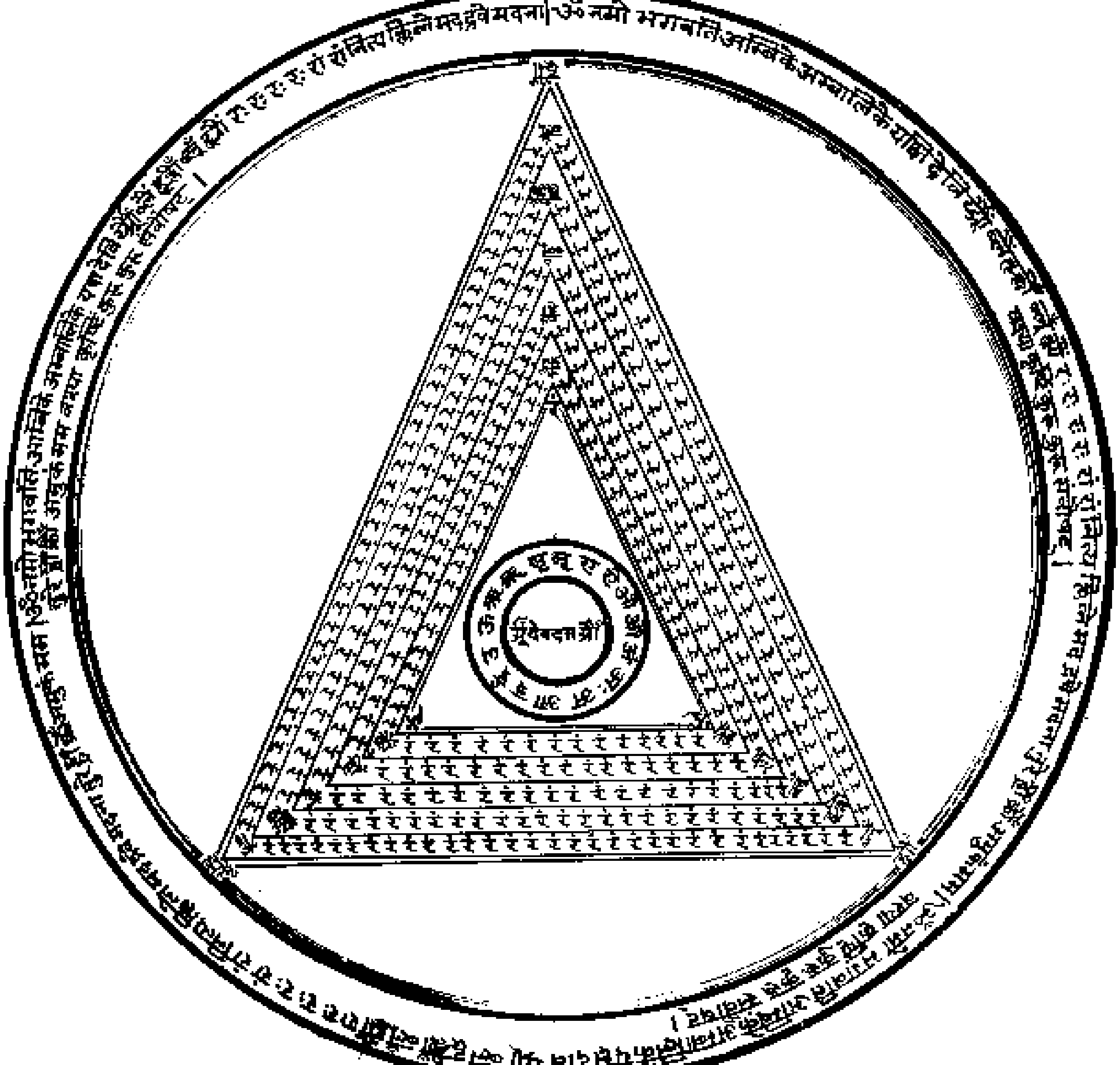

स्त्री आकर्षण यंत्र चित्र नं॰ २५

[हिन्दी टीका]—अपनी इच्छित स्त्री के रूप को एक ताम्रपत्र पर ऊपर पैर और नीचे की ओर शिर करके बनावे फिर उस स्त्री के हृदय पर ॐ ह्रीँ लिखे, शरीर के सब जोड़ों पर क्रों को लिखे, दोनों स्तनों पर ह्रीँ लिखे, उसी प्रकार योनि प्रदेश पर य्यूँ लिखे फिर क्रोँ कार से परिवेष्टित करके बाद में नीचे लिखे मंत्र से वेष्टित कर दे, उसके बाद अग्नि मण्डल, वायु मण्डल और पृथ्वी मण्डल से घेर देवे, तीन दिन दीपाग्नि पर यंत्र को तपावे तो आकर्षण होता है ।।४।।

वलय में लिखने के लिये मंत्रः—ॐ नमो भगवति कृष्णमातङ्गिनिशिलाव ल्कल कुसुम रूप धारिणि किरात शवरि सर्वजन मोहिनि सर्वजन वशकरि ह्रां ह्रीँ ह्रूँ ह्रौं ह्रः अमुकां (कीं) आकर्षय-२ मम वश्या कृष्टि कुरु कुरु संवौषट् ।

पत्रे स्त्रीरूपमालिख्यमूर्ध्वपादमधः शिरः ।

ब्रह्मादिराजिका धूम भानु दुग्धेन लेखयेत्[१] ।।५।।

[संस्कृत टीका]—'पत्रे'[२] ताम्रपत्रे । 'स्त्रीरूपम्' इष्टाङ्गनारूपम् । 'आलिख्य' लिखित्वा । कथम् ? 'ऊर्ध्वपादमधः शिरः' पादावूर्ध्वं शिरोऽधः कृत्वा लिखेत् । 'ब्रह्मादि' ब्रह्मादिपलाशरसुगधत्तूरमिजि अन्ये वदन्ति ब्रह्माविष्णुरुद्रेति त्रिपुरुषम् । 'राजिका' गौरसर्षपाः । 'धूमं' गृहधूमम् । 'भानुदुग्धेन' अर्कक्षीरेण लेखयेत् । एतैः द्रव्यैः कथित स्त्री रूपं यन्त्रं लेखयित्वा दीपशिखग्नौ तापयेत् इत्यर्थः ।।

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को ताम्रपत्र पर (अथवा तांबुलपत्र पर) स्त्री रूप को जिसके पांव ऊपर और शिर नीचे करके लिखे, लिखने के द्रव्य इस प्रकार लेवे, धतूरा का रस, पलास का रस, थुअर का रस, सफेद सरसों, घर के धुंआ का मेश, आकडे का दूध आदि द्रव्यों से (धतूरा, सफेद सरसों, गेहूं और आकडे के दूध से) लिखे, फिर तीन दिन तक दीपक की शिखा पर यंत्र तपावे तो इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है ।।५।।

अंगनाकर्षण यंत्र चित्र नं. २६ देखें ।

नोट :—इस यंत्र की दूसरी प्रतियों में मूर्ति के बाहर अग्नि मंडल, बाहर क्रोंकार से वेष्टित, फिर मंत्र वलय और पृथ्वी मंडल लिख कर यंत्र की समाप्ति करना, मूल विधि यही है, संस्कृत में इसी प्रकार का पाठ है ।

---

१. लेपयुत् इति ख पाठः ।

२. हस्त लिखित प्रति में तांबूल पत्र पर लिखने को कहा है ।

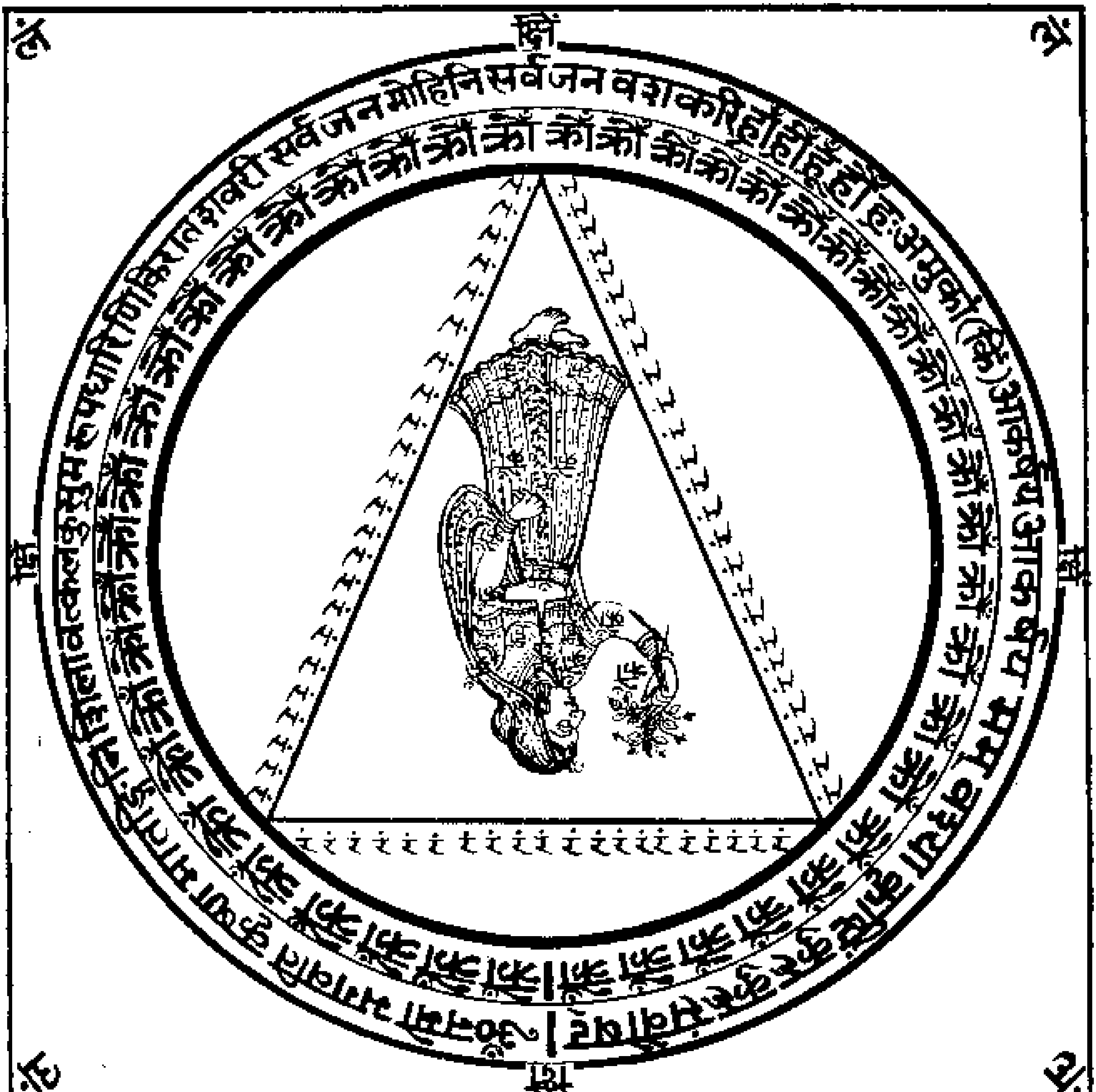

अंगनाकर्षणयंत्रचित्रनं॰२६,

अग्निपुटकोष्ठमध्ये कलावृतं नाथमङ्कुशनिरुद्धम् ।
कोष्ठे॒ प्रणवाङ्कुशमायारतिनाथरंरश्च ॥६॥

[संस्कृत टीका]—'अग्निपुट कोष्ठमध्ये' शिखिमण्डल द्वय सम्पुट कोष्ठ-मध्ये। 'कलावृतं' षोडशकलाभिरावृतम् । कम् ? 'नाथम्' भुवननाथं ह्रींकारम् । कथम्भूतम् ? 'अङ्कुशनिरुद्धम् तद् ह्रींकारोभयपार्श्वे क्रोंकार द्वयरुद्धम् । 'कोष्ठेषु' तदग्निपुटषट् कोणेषु। 'प्रणवाङ्कुशमाया रतिनाथरंरश्च' प्रथम कोष्ठे ॐ, द्वितीय कोष्ठे क्रों, तृतीय कोष्ठे ह्रीं, चतुर्थ कोष्ठे क्लीं पञ्चम कोष्ठे रं, षष्ठकोष्ठे रः ॥६॥

[हिन्दी टीका]—साधक पहले ह्रीं लिखे, उसके दोनों बाजु क्रों लिखे, फिर एक वलय बनाकर, षोड्श स्वर को लिखे उसके बाद अग्नि मण्डल संपुट बनावे, षट कोण का। उस षट कोण के प्रत्येक कोने में क्रमशः ॐ, क्रों, ह्रीं, क्लीं रं और रः बीजों को लिखे ॥६॥

कृष्णशुनकस्य जङ्घाशल्ये प्रविलिख्य मनुजरक्तेन ।
खदिराङ्गारैस्तप्ते सप्ताहादानयत्यबलाम् ॥७॥

[संस्कृत टीका]—'कृष्णाशुनकस्य' असितभषणस्य । 'जङ्घाशल्ये । तच्छुनकदक्षिणजङ्घास्थि । 'प्रविलिख्य' प्रकर्षेण लिखित्वा । केन ? 'मनुजरक्तेन' नररुधिरेण । 'खदिराङ्गारैः' खदिरकाष्ठाङ्गारैः 'तप्ते' तापिते सति । 'सप्ताहात्' सप्तदिन मध्ये । 'आनयति' समानयति । काम्? 'अबलाम्'वनिताम् ॥७॥

[हिन्दी टीका]—काले कुत्ते के जङ्घा की हड्डी पर मनुष्य के हाथ के रक्त से यंत्र लिख कर खदिराग्नि में यंत्र को तपाने से सात दिन में ही, इच्छित स्त्री का आकर्षण होता है ॥७॥

अंगना आकर्षण यंत्र चित्र नं २७ देखे ।

अथवा रजस्वलाया वस्त्रे संलिख्य जलजनागिन्याः ।
पुच्छं विधाय वर्ति तद्दीपादानयेन्नारीम् ॥८॥

[संस्कृत टीका]—'अथवा' अन्येन प्रकारेण वा । 'रजस्वलायाः' पुष्पवत्याः। 'वस्त्रे' तद्वस्त्रे । 'संलिख्य' प्राक्शुनकास्थिलिखिताग्निपुटकोष्ठेत्यादि

१. ग पुस्तके 'भूजरक्तेन' इति पाठोदृश्यते, टिप्पण्यां स खररक्तेन इति तस्यार्थो निर्दिश्यते ।

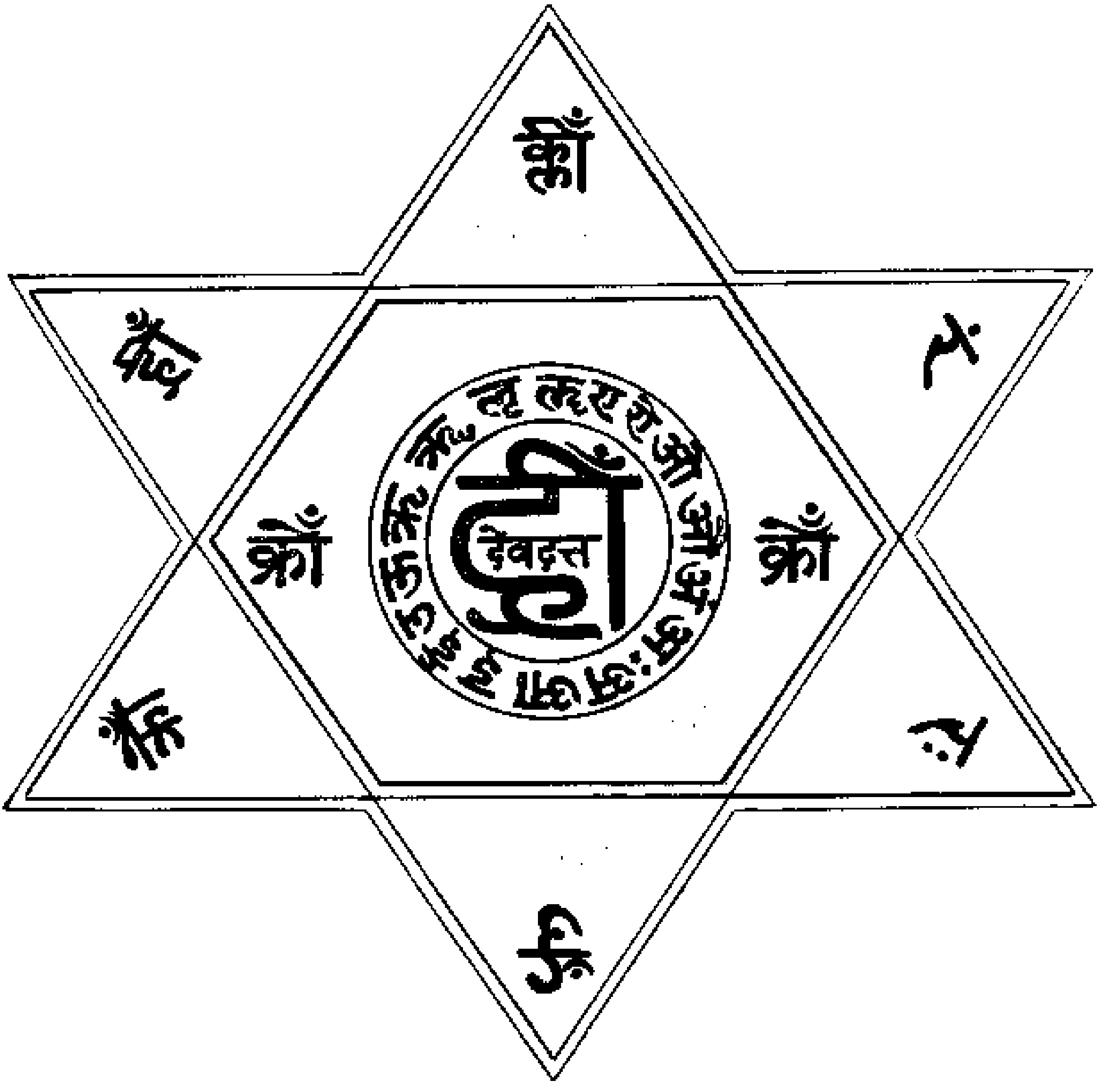

अंगना कर्षण यंत्र चित्र नं॰ २७,

यन्त्रं सम्यग् लिखित्वा । 'जलजनागिन्याः' जलोद्भवसर्पिण्याः । 'पुच्छं विधायवर्ति' नागिन्याः पुच्छं गृहीत्वा तद्वस्त्रमध्ये निक्षिप्य वर्त्ति कृत्वा । 'तद्दीपात्' तद्वर्त्तिप्रबोधित-दीपात् । 'आनयेत्' समानयेत् । काम् ? 'नारीम्' वनिताम् ।।८।।

[हिन्दी टीका]–अथवा अन्य प्रकार से रजस्वला स्त्री के वस्त्र पर पहले कहे हुए यंत्र को लिखकर उस सहित पानी में रहने वाले सर्प की पुंछ को ग्रहण कर उसे कपड़े में मिलाकर उसकी बाती बनावे, उस बाती को बना कर जलाने से स्त्री का आकर्षण होता है ।।८।।

यंत्र चित्र नं. २७ ही देखें ।

ह्रीँकारमध्ये प्रविलिख्य नाम षट् कोण चक्रं बहिराविलेख्यम् ।
कोणेषु तत्वं त्रिषु चोर्ध्वकोणद्वये पुनर्य्यूमधरों लिखेच्च ।।९।।

[संस्कृत टीका]–'ह्रीँकार मध्ये' भुवननाथाधिपमध्ये । 'प्रविलिख्य' प्रकर्षेण लिखित्वा । किम् ? 'नाम' देवदत्तनाम । 'षट्कोणम्' । 'बहिः' तद्ह्रीँकाराद् बहिः । 'आलेख्यं' समन्तादालेख्यम् । 'कोणेषु' षट्कोणेषु । 'तत्त्वं' ह्रीँकारम् । 'त्रिषु च' अधोगतपार्श्वकोणद्वयम् । ऊर्ध्वगत कोणमेकम्, एवं कोणत्रये ह्रीँकार लिखेत् । 'ऊर्ध्वकोणद्वये' पार्श्वकोण द्वये । 'पुनः' पश्चात् । 'य्यूँ य्यूँ य्यूँ' इति लिखेत् । 'अधरों लिखेच्च' अधोगत मध्य कोणे ॐ लिखेत् । 'चः' समुच्चये ।।९।।

[हिन्दी टीका]–ह्रीँ कार के मध्य में देवदत्त लिखकर ऊपर से षट कोण बनावे फिर उस षट्कोण में ऊपर कोणे में ह्रीँ, उसके बाद य्यूँ फिर ह्रीँ फिर ॐ फिर ह्रीँ, उसके बाद य्यूँ क्रमशः लिखे ।।९।।

पाशाङ्कुशौ कोणशिखान्तरस्थौ मन्त्रावृतं वायुपुरं च बाह्ये ।
आकृष्टिमिष्टप्रमदाजनानां करोति यन्त्रं खदिराग्नितप्तम् ।।१०।।

[संस्कृत टीका]–'पाशाङ्कुशौ कोणशिखान्तरस्थौ' षट्कोणचक्र कोणेषु पाशाङ्कुशौ आँ क्रोँ । 'मन्त्रावृतं' षट्कोण चक्रबहिः वक्ष्यमाणमंत्रेणवेष्ठितम् । 'वायुपुरं च बाह्ये' तन्मन्त्रवलयबहिः प्रदेशे वायुमण्डलम् । 'चः' समुच्चये। 'आकृष्टि' आकर्षणम् । कासाम् ? 'इष्ट प्रमदाजनानां' स्वेप्सितस्त्रीणाम् । 'करोति' कुरुते । किंतत् ? 'यन्त्रम्' कथितषट् कोण यन्त्रम् किंविशिष्टम् ? खदिराग्नितप्तम्' खदिरकाष्ठाग्निनातापितम् ।।१०।।

वलयमंत्रोद्धारः—ॐ ह्रीं ह्स्क्लीं ह्सौ आँ क्रों य्यूं नित्यक्लिन्ने ! मदद्रवे ! मदनातुरे ! अमुकी मम वश्याकृष्टिं कुरु कुरु संवौषट् ।।१०।।

[संस्कृत टीका]—षट कोण चक्र के प्रत्येक बाहर के कोणों पर, आँ क्रों क्रमशः लिखे, ऊपर से मंत्र वलय बनाकर उस वलय में मंत्र का लेखन करे, और वायु मण्डल बनादे, वायु मण्डल में यं स्वाहा लिखे, इस यंत्र को इष्ट स्त्री का आकर्षण करने के लिये खदिराग्नि में तपाना तो आकर्षण होता है ।।१०।।

मंत्रोद्धार वलय में लिखने के लिये :—ॐ ह्रीं ह्स्क्लीं ह्सौं आँ क्रों य्यूं नित्य क्लिन्ने मदद्रव मदनातुरे अमुकीं मम वश्या कृष्टिं कुरु कुरु संवौषट् ।।

लिखित्वा ताम्रपत्रे वा श्मशानोद्भवखर्परे ।
तदङ्गमल धत्तूरविषाङ्गार प्रलेपिते ।।११।।

[संस्कृत टीका]—'लिखित्वा' आलिख्य । क्व ? 'ताम्रपत्रे' ताम्रविनिर्मितपत्रे । 'वा' अथवा । 'श्मशानोद्भवखर्परे' श्मशान जनित खपरे । 'तदङ्गमल' इष्टाङ्गनापञ्चमलः 'धत्तूर' उन्मत्तकरसः 'विष' शृङ्गीविषम् 'अङ्गार' श्मशानाङ्गारः 'प्रलेपिते' एतैः अङ्गमलादिद्रव्यैः ताम्रपत्रे प्रलेपिते सति ।।११।।

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को ताम्रपत्र पर अथवा श्मशान से उत्पन्न खपरा पर इष्ट स्त्री के अंग के स्थनों पर का मल, (अथवा पंचमल से) धतूरा शृङ्गीविष और कोयले से लिखना चाहिये ।।११।।

यंत्र चित्र नं २८ देखो, यह भी अंगनाकर्षण यंत्र है ।

नोट :—पंचमल, आंख का मल, कान का मल, दांत का मल, जीभ का मल और शुक्रमल । मूल संस्कृत की प्रति में भी पंचमल को प्रयोग में लेने को लिखा है । जहां ताम्रपत्र यंत्र लेखन विधि लिखी है वहां इन द्रव्यों का लेप करे, पहले बहुत पतले ताम्रपत्र पर यंत्र लेखनी से यंत्र खोद कर, उपरोक्त द्रव्यों का लेप करना चाहिये ।

ह्रीं वदने योनौ क्लीं ह्स्क्लीं कण्ठे स्मराक्षरं नाभौ ।
हृदये द्विरेफयुक्तं ह्रूँकारं नाम संयुक्तम् ।।१२।।

---

१. क्लें इति ख पाठः ।

स्त्री आकर्षण यंत्र चित्र नं॰ २८

[संस्कृत टीका]—'ह्रीँ वदने' आस्ये ह्रीँकारम् । 'योनौ क्लेँ' योनिमध्ये क्लेँ । 'ह्स्क्लीँ कण्ठे' कण्ठप्रदेशे ह्स्क्लीँ इति । 'स्मराक्षरं नाभौ' नाभि प्रदेशे क्लीँकारम् । 'हृदये द्विरेफयुक्तं ह्रूँकारं' हृत्प्रदेशे अधउर्ध्व रेफद्वययुक्तं ह्रूँकारं ह्रूँमिति । किंविशिष्टं ह्रूँकारम् ? नाम संयुक्तम्' देवत्तनामान्वितम् ।।१२।।

[हिन्दी टीका]—मुख में ह्रीँ, योनि में क्लेँ, कण्ठ में ह्स्क्लीँ, नाभि प्रदेश में क्लीँ कार, हृदय प्रदेश में ह्रूँ कार, देवदत्त नाम सहित लिखो ।।१२।।

भावार्थ :—एक स्त्री का चित्र बनाकर, उपरोक्त अंगोपाङ्ग में बीजाक्षर लिखो ।

नाभितले क्लूँकारं[१] वेदादिं[२] मस्तके च संविलिखेत् ।
स्कन्धमणिबन्धकूर्पर पदेषु तत्वम् प्रयोक्तव्यम् ।।१३।।

[संस्कृत टीका]—'नाभितले क्लूँकारं' नाभेरधः प्रदेशे क्लूँकारम् । 'वेदादि' वेदस्य आदिर्वेदादिः ॐकारः तं 'मस्तके च' शीर्षे च संविलिखेत् । 'स्कन्धमणिबन्धकूर्पर पदेषु तत्वं प्रयोक्तव्यम्' स्कन्ध प्रदेशे मणिबन्ध प्रदेशे कूर्पर प्रदेशे पदद्वयप्रदेशे, एतेषु प्रदेशेषु ह्रीँकारः प्रकर्षेण योजनीयः ।।१३।।

[हिन्दी टीका]—नाभि के नीचे क्लूँ, मस्तक पर ॐ तथा कंधा, मणि बंध, कनपटी और पैरों में ह्रीँ को लिखो ।।१३।।

हस्ततले ग्ल्यूँकारं सन्धिषु शाखासु शेषतो रेफान् ।
त्रिपुटित वह्निपुरत्रयमथ तद्बाह्यप्रदेशेषु ।।१४।।
कोष्ठेषु भुवननाथं कोष्ठाग्रान्तर निविष्टमङ्कुशं बीजम् ।
वलयं पद्मावत्या मन्त्रेण करोतु तद्बाह्ये ।।१५।।

[संस्कृत टीका]—'हस्ततले ग्ल्यूँकारम्' करतले ग्ल्यूँकारं लिखेत् । 'सन्धिषु शाखासु' हस्तपादादिशाखासु 'शेषतः' अङ्गुल्यादि शाखासु 'रेफान्' रकारान् लिखेत् । 'त्रिपुटित वह्निपुरत्रयम्' एतत् क्रमेणोद्वरितपुत्तलिका बहिः प्रदेशे अग्निमण्डल त्रय सम्पुटं कुर्यात् । 'अथ' त्रिपुटिताग्नि पुरानन्तरं 'तद्बाह्यप्रदेशेषु' तदग्निमण्डल बहिः प्रदेशेषु 'कोष्ठेषु' नवकोष्ठेषु 'भुवननाथम्' ह्रीँकार लिखेत् । 'कोष्ठाग्रान्तरनिविष्ट

---

१. क्ल इति ख पाठः ।
२. 'वेदाद्य' इति ख पाठः ।

मङ्कुशं बीजम्' कोष्ठाग्रेषु तदन्तरेषु च निवेशित क्रोंकारम् । 'वलयं' वेष्टनम् 'पद्मावत्याः' पद्मावती देव्याः 'मन्त्रेण' वक्ष्यमाणमन्त्रेण 'करोतु' कुर्यात् 'तद्बाह्ये' तन्मण्डलबाह्ये । वलयमन्त्रोद्धार :—उँ ह्रीं ह्रं हस्क्लीं पद्मे ! पद्मकटिनि ! अमुकां मम वश्याकृष्टिं कुरु कुरु संवौषट् ॥१४॥१५॥

[हिन्दी टीका]—हाथ के तलवों में य्यूं कार को, बाकी हाथ-पांव की अंगुलियों में, सन्धि शाखाओं में रकार को लिखे, उसके ऊपर तीन अग्निमंडल बनावे, यह अग्निमंडल उपरोक्त पुत्तलिका पर बना देवे उस अग्निमडल के पुटके नौ कोठों में ह्रीं तथा कोठों के ऊपर क्रों बीज लिखे, उसके ऊपर पद्मावती मंत्र को लिखे और यंत्र को ह्रीं कार से तीन घेरा डालकर वेष्टित कर दे ।

वलय मंत्र :—ॐ ह्रीं ह्रं हक्लीं पद्मेपद्म कटिनि अमुकां मम वश्याकृष्टिं कुरु २ संवौषट् ॥१४॥१५॥

अङ्कुशरोधं कुर्यात् तद्बाह्ये मायया त्रिधा वेष्टयम् ।
यावकमलयजचन्दन काश्मीराद्यै रिदं लिखेद् यन्त्रम् ॥१६॥

[संस्कृत टीका]—'अङ्कुशरोधं कुर्यात्' क्रोंकाररुद्धं कुर्यात् । क्व ? 'तद्बाह्ये' तन्मन्त्रवलय बहिः प्रदेशे 'मायया' ह्रींकारेण 'त्रिधा वेष्टयम्' त्रिप्रकारेण वेष्टय । 'यावक' अलक्तकम्, 'मलयजं' श्रीगन्धम् 'चन्दनम्' रक्तचन्दनम् 'काश्मीरम्' कुङ्कुमम्, इत्यादि सुगन्ध द्रव्यैः 'इदं लिखेद् यन्त्रम्' एतत् कथितयंत्रं लिखेत् ॥१६॥

[हिन्दी टीका]—क्रों कार से रोध करके, उसके बाहर माया बीज ह्रीं कार से तीन बार वेष्टित कर दे । इस यंत्र को अलक्तक, सफेद चंदन, लाल चंदन, केसर आदि द्रव्यों से लिखे ॥१६॥

वस्त्रे रजस्वलायाः खदिराङ्गारेण तापयेद् धीमान् ।
कुरुतेऽभिलषित[1] वनिता कृष्टिं सप्ताह मध्येन ॥१७॥

[संस्कृत टीका]—'वस्त्रे रजस्वलायाः' 'धीमान्' बुद्धिमान् । अभिलषित वनिताकृष्टिम्' अभिप्रेताङ्गनाकृष्टिम्' 'कुरुते' कुर्यात् । कथम् ? 'सप्ताहमध्येन' सप्त-दिनाभ्यन्तरतः ॥१७॥

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादि इस यंत्र को रजस्वला के कपड़े पर लिखे तो सात दिन में अथवा उसके अंदर ही स्त्री आकर्षित हो जाती है ॥१७॥

---

[1]. **कुरुतेऽभिलिखित इति ख पाठः ।**

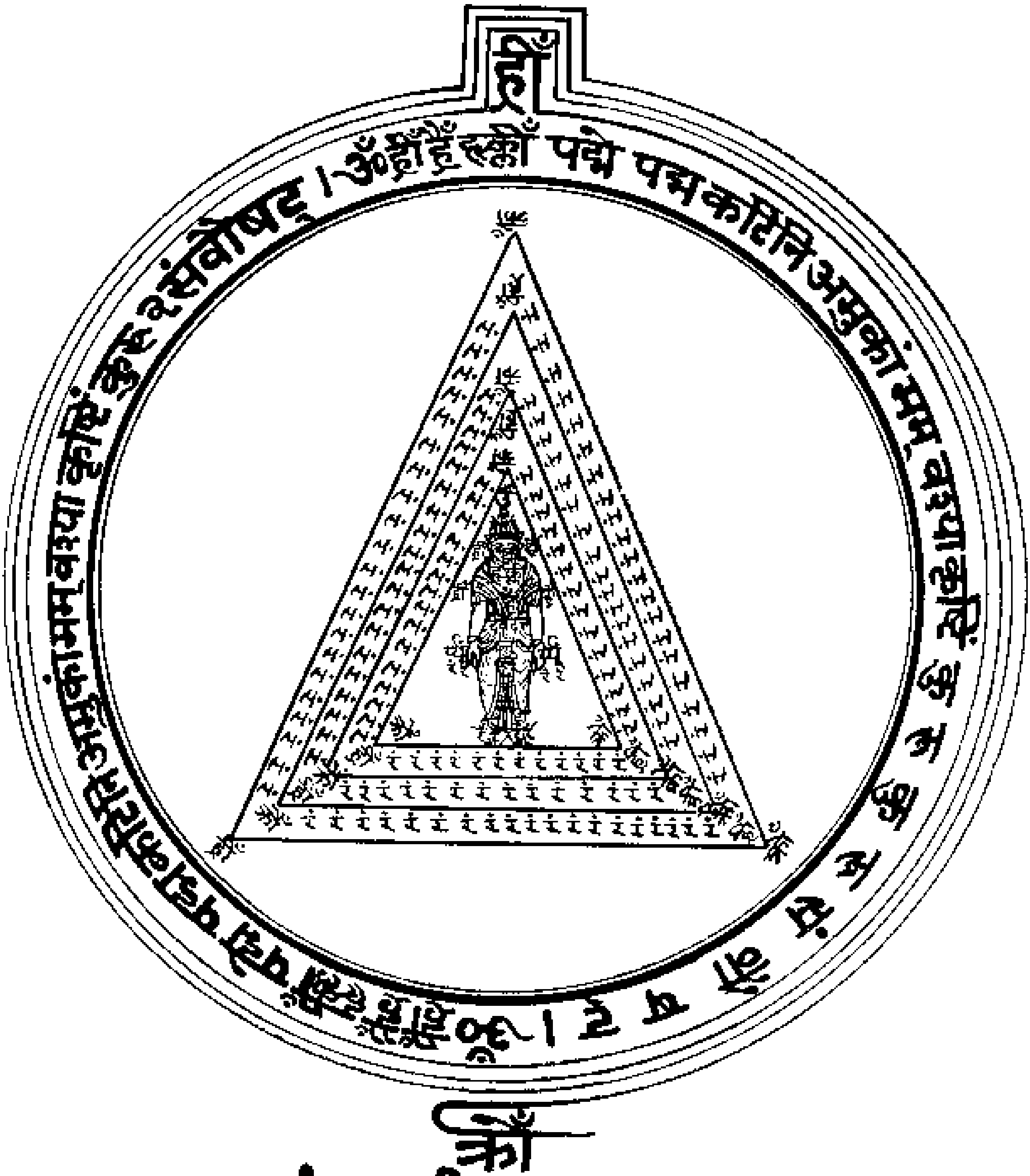

अंगनाकर्षण यंत्र चित्र नं. २९

रविदुग्धादिविलिप्ते युवतिकपालेऽथवा लिखेद् यन्त्रम् ।
पुरुषाकृष्टौ च पुनर्नृकपाले यन्त्रमेवेदम् ॥१८॥

[संस्कृत टीका]—'रविदुग्धादि' अर्कक्षीर—स्नुहीक्षीर--गृहधूमराजिका-लवणेत्यादिभिः 'विलिप्ते' विशेषेण लिप्ते । कस्मिन् ? युवति कपाले 'अथवा' प्राक्कथित रजस्वलावस्त्राभावे अनेन प्रकारेण वा 'लिखेद् यन्त्रम्' प्राक्कथित यन्त्रं विलिखेत् । 'पुरुषाकृष्टौ च' पुरुषाकर्षण विषये 'पुनः' पश्चात् 'नृकपाले' पुरुषकपाले 'यन्त्रमेवेदम्' एतदेव यन्त्रं लिखेत् ॥१८॥

[हिन्दी टीका]—अथवा इस यंत्र को आकड़े के दूध अथवा थूहर के दूध, गृह की धुआं, सफेद सर्सों और नमक आदि द्रव्यों से किसी स्त्री के कपाल पर लिखे, पहले कहे हुए यंत्र को अथवा पुरुषाकर्षण में पुरुष के कपाल पर लिखे, यंत्र को खेर की अग्नि पर तपावे तो सात दिन में स्त्री आकर्षित होती है ॥१८॥

यंत्र चित्र नं० २६ देखे ।

नाम तत्त्वविगर्भितं[1] बहिरालिखेच्छिखि मण्डलं,
रेफमन्त्रवृतं श्मशानजकर्परे विलिखेदिदम् ।
तापयेत् खदिराग्निना हिमकुङ्कुमादिभिरादरा-
दानयत्यबलां बलाद्दिनसप्तकैर्मदविह्वलाम् ॥१६॥

[संस्कृत टीका]-'नाम' देवदत्तनाम, कथम्भूतम् ? 'तत्त्वविगर्भितम्' ह्रीँकार-मध्यस्थितम्, 'बहिः' ह्रीँकाराद् बहिः प्रदेशे । 'आलिखेत्' समन्तात्लिखेत् । किम् ? 'शिखि मण्डलम्' अग्निमण्डलम् 'रेफमन्त्रवृतम्' रकारमन्त्रवलयेण तदग्निमण्डलं बाह्ये वेष्टयम् । 'इदम्' एतद् यन्त्रम् 'विलिखेत्' लिखेत् । क्व ? 'श्मशानज खर्परे' प्रेतवनकर्परे । कैः लिखेत् ? 'हिमकुङ्कुमादिभिः' कर्पूर काश्मीरादि सुगन्ध द्रव्यैः 'आदरात्' आदरेण । किं कुर्यात् ? 'तापयेत्' तापनं कुर्यात् । केन ? 'खदिराग्निना' खदिरकाष्ठ जनिताग्निना । 'आनयति' समानयति । काम ? 'अबलाम्' वनिताम् । कथम् ? 'बलात्' बलात्कारेण । कियत्कालेन ? 'दिनसप्तकैः' सप्तदिवसैः । 'मदविह्वलाम्' मदनाकुलिताम् ॥१६॥

वलयमन्त्रोद्धार :—ॐ नमो भगवति ! चण्डि ! कात्यायनि ! सुभग दुर्भग युवतिजनानाकर्षय आकर्षय [2]ह्रीँ र र र्‌य्रूँ संवौषट् देवदत्ताया हृदयं घे घे ।

---

१. विदर्भितं इति ख पाठः ।
२. आं क्रों ह्रीँ ठः ठः ठः ठः ठः हूँ फट् देवदत्ताय हृदयं घे घे संवौषट् इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]—ह्रीं के मध्य में देवदत्त का नाम लिखकर, ऊपर से अग्नि-मंडल बनावे, रेफ सहित बनावे और एक वलय देकर उस वलय में नीचे लिखा हुआ मंत्र लिख दे। इस यंत्र को श्मशान के खपरा पर कपूर, केसर, चन्दनादि सुगन्धित द्रव्यों से आदर पूर्वक लिखकर खदिराग्नि में तपावे तो इच्छित स्त्री सात दिन में मद-रहित होकर आ जाती है ।।१६।।

देखो यंत्र चित्र नं० ३०।

मंत्रोद्धार :—ॐ नमो भगवति चन्ड (चण्डि) कात्यायनि सुभग दुर्भग युवति जनानामाकर्षय २ ह्रीं र र य्र्यूं संवौषट् देवदत्तायां हृदयं घे घे।

इत्युभयभाषाकवि शेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते भैरव पद्मावती कल्पेऽङ्गनाकर्षणाधिकारः षष्ठः परिच्छेदः ।।६।।

इस प्रकार उभय भाषा कवि श्री मल्लिषेणाचार्य विरचित भैरव पद्मावती कल्प का अंगनाकर्षण नाम के अधिकार की हिन्दी भाषा नामक विजया टीका समाप्ता।

(षष्ठम् अध्याय समाप्त)

—————०—————

अंगनाकर्षण यंत्र चित्र नं॰ ३०,

सप्तमो वशिकरणयन्त्र परिच्छेदः

हंसावृताभिधानं लवरयषष्ठस्वरान्वितं कूटम् ।
बिन्दुयुतं स्वरपरिवृतमष्टदलाम्भोज मध्यगतम् ।।१।।

[संस्कृत टीका]—'हंसावृतम्' हंस इति पदेनावृतं-वेष्टितम् । किं तत् ? 'अभिधानम्' देवदत्तनाम । 'लवरयषष्ठस्वरान्वितम्' लश्च वश्च रश्च यश्च षष्ठस्वरश्च ऊकारः एतैरन्वितं युक्तम् । किं तत् ? 'कूटम्' क्षकारम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'बिन्दुयुतम्' अनुस्वार संयुक्तम्, एवं क्ष्म्ल्व्र्यूँ इति पिण्डं हंसपदाद् बहिर्देयम् । पुनरपि कथम्भूतम् ? 'स्वर परिवृतम्' पिण्डाद् बहिः स्वरैरावेष्टितम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'अष्टदलाम्भोजमध्यगतम्' अष्टदलकमलमध्ये स्थितम् ।।१।।

[हिन्दी टीका]—हंसः शब्द के मध्य में देवदत्त लिखकर उसके ऊपर क्ष्म्ल्व्र्यूँ लिखे, उसके ऊपर एक वलय में स्वर लिखे, फिर अष्टदल कमल बनावे ।।१।।

तेजो हं सोम सुधा हंसः स्वाहेति दिग्दलेषु लिखेत् ।
आग्नेय्यादिदलेष्वपि पिण्डं यत् कर्णिकालिखितम् ।।२।।

[संस्कृत टीका]—'तेजो हं सोम सुधा हंसः स्वाहा' तेजः—ॐकारः, 'हं' हंमिति अक्षरं, सोमः क्वींकारः, सुधा क्ष्वींकारः, 'हंसः' हंस इति पदम् 'स्वाहा' स्वाहा इति पदम्। एवं ॐ हं क्वीं क्ष्वीं हंसः स्वाहा इत्येवं विशिष्टमन्त्रं 'दिग्दलेषु' प्राच्यादिषु चतुः पत्रेषु लिखेत् । 'आग्नेय्यादिदलेष्वपि' पश्चात् आग्नेय्यादि विदिग्गतचतुर्दलेषु 'पिण्डं यत् कर्णिकालिखितम्' यत् कर्णिकाभ्यन्तरे लिखितं क्ष्म्ल्व्र्यूँ इति पिण्डं विदिक्पत्रेषु लिखेत् ।।२।।

[हिन्दी टीका]—उस अष्टदल कमल के पूर्वादि चारों दिशाओं में ॐ हं क्वीं (झ्वीं) क्ष्वीं हंसः स्वाहा लिखे और चारों विदिशाओं में क्ष्म्ल्व्र्यूँ पिण्डाक्षर के को लिख देवे ।।२।।

नोट :—मूल संस्कृत पाठ में और अहमदाबाद से प्रकाशित पद्मावती उपासना में क्वीं है और हस्तलिखित संस्कृत पाठ में ॐ अर्हं ह्रीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा, लिखा हुआ है । इसी प्रति के यंत्र में ॐ ह्रीं झ्वीं क्ष्वीं हंसः स्वाहा लिखा है, सूरत की कापड़िया की प्रति में ॐ अर्हं झ्वीं क्ष्वीं हंस स्वाहा है ।

लेकिन मेरा मत ऐसा है कि क्वीं की जगह झ्वीं ही होना चाहिये ।।२।।

भूर्ये सुरभिद्रव्यैर्विलिख्य[१] तत् सिक्थकेन परिवेष्टय ।
नूतनघटेऽम्बुपूर्णे तद्यन्त्रं स्थापयेद् धीमान् ।।३।।

[संस्कृत टीका]–'भूर्ये' भूर्यपत्रे 'सुरभिद्रव्यैः' कुङ्कुमकर्पूरादिसुगन्धि-द्रव्यैः 'विलिख्य' विशेषेण लिखित्वा 'तत्' तल्लिखित यन्त्रम् 'सिक्थकेन' मधूच्छिष्टेन 'परिवेष्टय' समन्ताद् आवेष्टय । 'नूतनघटे' नवकुम्भे । कथम्भूते ? 'अम्बुपूर्णे' शीतलजलपरिपूर्णे । 'तद्यन्त्रं' तत् सिक्थकेन वेष्टितं यन्त्रम् 'स्थापयेत्' निक्षिपेत् । कः? 'धीमान्' बुद्धिमान् ।।३।।

[हिन्दी टीका]–मंत्रसाधक इस यंत्र को भोज पत्र पर केसर, कपूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से लिख कर, यंत्र को मोम में लपेट कर, ठंडे पानी से भरे हुए नवीन घड़े में रखे ।।३।।

तन्दुलपूर्णं मृण्मयभाजनमप्युपरि तस्य संस्थाप्य ।
श्री पार्श्वनाथ सहितं करोति दाहज्वरोपशमम् ।।४।।

[संस्कृत टीका]–'तन्दुलपूर्णम्' शाल्यक्षतभरितम् 'मृण्मयभाजनम्' मृदा-निर्मितपात्रम् 'अपि' पश्चात् 'उपरि तस्य' पूर्णकुम्भस्योपरि 'संस्थाप्य' सम्यक् स्थाप-यित्वा । कथम् ? 'श्रीपार्श्वनाथ सहितम्' तन्दुलोपरि श्री पार्श्वनाथ जिनप्रतिमायुक्तम् एवं विधाने कृते सति 'करोति' कुरुते । कम् ? 'दाहज्वरोपशमम्' दाहज्वरस्य शान्तिम् ।।४।।

[हिन्दी टीका]–फिर चांवलों से भरे हुए मिट्टी के घड़े के ऊपर स्थापना कर उसके ऊपर श्री पार्श्वनाथ भगवान की स्थापना करने से दाह ज्वर शांत होता है ।।४।।

श्री खण्डेन तदालिख्य पाययेत् कांस्यभाजने ।
महादाहज्वरग्रस्तं तत्क्षणेनोपशाम्यति ।।५।।

[संस्कृत टीका]–'श्री खण्डेन' मुखाश्रयेण 'तत्' प्राक् कथित यन्त्रम् 'आलिख्य' लिखित्वा 'पाययेत्' आतुरं पाययेत् । तत् क्व लिखित्वा ? 'कांस्यभाजने' कांस्यनिर्मित पात्रे । कम् ? 'महादाहज्वरग्रस्तम्' तीव्रोष्णज्वरग्रहीतम् । 'तद्' दाह-ज्वरम् 'क्षणेन' निमिषमात्रेण उपशाम्यति' उपशमं प्राप्नोति ।।५।।

---

१. विलिखेत् इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]—पहले कहे हुए यंत्र को कांच के बर्तन पर सुगन्धित द्रव्यों से लिखकर रोगी को पिलाने से तुरंत ही दाह ज्वर शांत होता है ॥५॥

मंत्रोद्धार :—ॐ क्ष्म्ल्व्र्यूँ हँ क्वीँ क्ष्वीँ हं सः असि आउसा स्वाहा यही मंत्र सूरत की प्रति में इस प्रकार है, ॐ नमो भगवते पार्श्व चंद्राय क्ष्म्ल्व्र्यूँ हँ ज्वीँ क्ष्वीँ हंसः असि आउसा स्वाहा। बाकी प्रतियों में नमो भगवते पार्श्व चंद्राय, और ज्वीँ की जगह क्वीँ लिखा है। हमने संस्कृत प्रति का अनुकरण किया है ॥५॥

मन्त्रोद्धार :—ॐ क्ष्म्ल्व्र्यूँ हँ क्ष्वीँ क्ष्वीँ हंसः असि आउसा स्वाहा ॥

दाह ज्वर शांति यंत्र चित्र नं. ३१ देखे।

(क्लैं) क्लेंतत्व कूटेन्दुवृतं स्वनाम तद्बाह्यभागेऽष्ट दलाब्जपत्रम्।

पत्रेषु पद्मावरमूल मन्त्रं वेष्टयं तदाकर्षण पल्लवेन ॥६॥

[संस्कृत टीका]—'क्लेंतत्व कुटेन्दुवृतम्' 'क्लें' 'क्लें'कारं, 'तत्वं' ह्रींकारम्, 'कूटं' क्षकारम्, 'इन्दुः' ठकारः, तैः वृतम्' एभिश्चतुर्बीजैरावेष्टितम्। किंतत्? 'स्वनाम' स्वकीयनाम। 'तद्बाह्यभागे' तद्बीजाक्षरबहिः प्रदेशे। 'अष्टदलाब्ज पत्रम्' अष्ट दल कमल पत्रम्। 'पत्रेषु' तद्दलपत्रेषु 'पद्मावरमूल मन्त्रम्' पद्मावती देव्या विशिष्टमूल मन्त्रम् 'वेष्टयं तद्' तद् यन्त्रं वेष्टनीयम्। केन? 'आकर्षण पल्लवेन' संवौषट् इति पल्लवेन ॥६॥

मन्त्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ ह्लँ ह्स्क्लीँ पद्मे! पद्मकटिनि! नमः ॥

[हिन्दी टीका]—'क्लें' (क्लें) ह्रीँ क्ष और ठ से अपने नाम को परिवृत करके उस के बाहर के भाग में अष्ट दल कमल बनावे, उस अष्टदल कमल के प्रत्येक दल में पद्मावती देवी का मूल मंत्र लिखे, फिर उसको आकर्षण पल्लव संवौषट से वेष्टित करे ॥६॥

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ ह्लँ ह्स्क्लीँ पद्मे पद्मकटिनि नमः।

यन्त्रं ततश्चार्द्ध शशि प्रवेष्टयं विलिख्य यन्त्रं फलके वटस्य।

गोरोचनासंयुतकुङ्कुमाद्यैः साध्यस्य नामारुण चन्दनेन ॥७॥

[संस्कृत टीका]—'यन्त्रम्' एतत् कथितयन्त्रम् 'ततः' तस्माल्लेखनानन्तरम् 'चः' समुच्चये अर्द्धशशिप्रवेष्टयम् अर्द्धचन्द्र रेखया वेष्टयम् 'विलिख्य' विशेषेण

---

१. क्लैं इति ख पाठः।

(ज्वर) दाहशांत यंत्र चित्र नं॰ ३१

लिखित्वा 'यन्त्रे' एतद् यन्त्रम् । क्व ? फलके' पट्टिकायाम् । कस्य ? 'वटस्य' न्यग्रोध-वृक्षस्य । कैः कृत्वा ? गोरोचनसंयुतकुङ्कुमाद्यैः' गोरोचनान्वितकुङ्कुमादिद्रव्यैः । 'साध्यस्य नामारुणचन्दनेन' साध्यमनुज नामान्वितं यन्त्रं रक्तचन्दनेन लेख्यम् ।।७।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद इस यंत्र को अर्द्ध चंद्रमाकार से घेर दे, इस यंत्र को अच्छी तरह से लिखे, किस के ऊपर लिखे ? वट वृक्ष के पाटीया के ऊपर, गोरोचन, केशर से लिखे, साध्य के नाम वाले यंत्र को लाल चंदन से लिखे ।।७।।

कृत्वा ततश्चोभय सम्पुटं च श्रीपार्श्वनाथस्य पुरो निवेश्य ।
सन्ध्यासु नित्यं करवीर पुष्पैर्भवेदवश्यं जपतः सुसाध्यम् ।।८।।

[संस्कृत टीका]—'ततः' तस्मादनन्तरम् । 'चः' समुच्चये । 'उभयसम्पुटं च' साध्यसाधकयोर्लिखित यन्त्र सम्पुटम् 'कृत्वा' विरचय्य । 'श्री पार्श्वनाथस्य' श्री पार्श्वनाथतीर्थङ्करस्य 'पुरः' अग्रे 'निवेश्य' संस्थाप्य । कासु ? सन्ध्यासु' त्रिषुसन्ध्यासु । 'नित्यं' सर्वकालम् 'जपतः' जाप्यं कुर्वतः । कैः ? 'करवीरपुष्पैः' रक्तकरवीर पुष्पैः । जपतः पुरुषस्य 'अवश्यं' निश्चयेन 'सुसाध्यं' सम्यक् साध्यं 'भवेत्' स्यात् ।।८।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद साधक यंत्र और साध्य यंत्र को संपुट करके माने दोनो को एक साथ यंत्र का एक ही तरफ मुँह करके, मुँह मिलाकर यंत्र को संपुट कर दो, फिर उस यंत्र को पार्श्वनाथ तीर्थंकार की मूर्ति के सामने स्थापन करके, त्रिकाल कनेर के फूलों पर जाप्य करने से साधक को यंत्र की सिद्धि होती है ।।८।।

इष्ट आकर्षण यंत्र चित्र नं. ३१ देखें ।

अन्त्यवर्ग तृतीय तुर्य वकारतत्त्ववृताह्वयं
हंसवर्णवृतं ततो द्विगुणीकृताष्टदलांबुजम् ।
तेषु षोडश सत्कलाः शिरसोनशून्यवृतं बहि-
र्मायया परिवेष्टितं प्रणवादिकादिभिरावृतम् ।।९।।

[संस्कृत टीका]—'अन्त्यवर्गः' शवर्गः । 'तृतीयः' तस्य शवर्गस्य तृतीयाक्षरः सकारः । 'तुर्यः' चतुर्थ हकारः । 'वकारः' वकराक्षरम् । 'तत्त्वं' ह्रीँकारः । 'वृताह्वयं' एतैश्चतुर्भिरक्षरैरावेष्टित देवदत्तनाम । 'हंसवर्णवृतम्' तदक्षरचतुष्टयाद् बहिः 'हंसः' इतिवर्णैरावृतम् । 'ततः' हंसवलयात् 'द्विगुणीकृताष्टदलाम्बुजम्' षोडशदलपद्मम् । 'तेषु' षोडशदलेषु 'षोडश सत्कलाः' अकारादिषोडशस्वराः । 'शिरसोनशून्यवृतंबहिः'

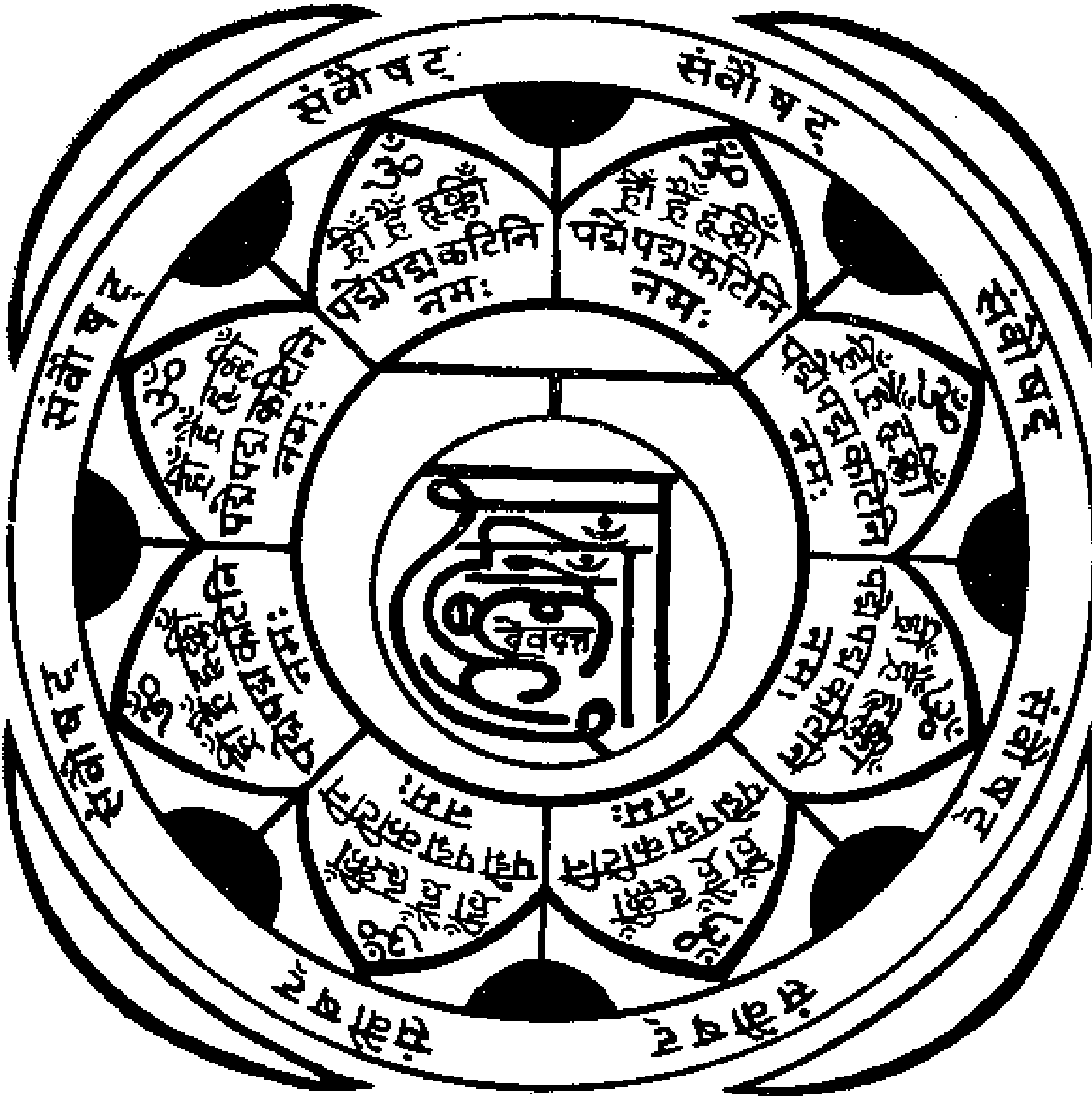

इष्टआकर्षणयंत्र चित्र नं.२१

तत्स्वराद् बहिः शिरोरहित हकारे वेष्टितम्। 'मायया' ह्रीँकारेण 'परिवेष्टितम्' समन्ताद् वेष्टितम्। 'प्रणवादिकादिभिः' तद् ह्रीँकाराद् बहिः प्रदेशे प्रणव आदिर्येषां ते ककारादयः तैः कादिभिरावृतम्।

ॐक, ॐख, ॐग, ॐघ, ॐङ, ॐच इत्यनेन प्रकारेण हकार पर्यन्तम् ते ककारादयः वेष्टनीयम् ॥९॥

[हिन्दी टीका]—स, ह, व और ह्रीँ ये चारों अक्षरों के अन्दर देवदत्त का नाम लिख कर उन चारों अक्षर के बाहर अष्ट दल में हंसवर्ण फिरता हुआ लिख कर उसके बाहर सोलह पंखुडी का कमल बनावे, उसमें क्रमशः षोडश स्वरों को लिखे फिर शिर रहित हकार से वेष्टित करे और ह्रीँकार माया बीज से तीन घेरा डाल दे, उसके बाद बाहर ॐक ॐख से लेकर ॐह पर्यंत लिखे ॥९॥

यन्त्रमाविलिखेदिदं हिमकुङ्कुमागुरुचन्दनै-
र्भूर्यके फलकेऽथवा भुविगोमयेन विमार्जिते।
प्रत्यहं विधिना समं जपतोऽरुणप्रसवैर्भृशं
तस्य पादसरोजषट् पदसन्निभं भुवनत्रयम् ॥१०॥

[संस्कृत टीका]—'यन्त्रम्' एतत्कथितयन्त्रम् 'आविलिखेत्' समन्तात् लिखेत्। कैः? 'हिमकुङ्कुमागुरुचन्दनैः' कर्पूर काश्मीरागुरु श्रीगन्धादि सुरभिद्रव्यैः। क्व ? 'भूर्यके' भूर्य पत्रे। 'फलके' घटफलके। 'अथवा' अनेन प्रकारेण वा 'भुवि' पृथिव्याम्। 'गोमयेन' भूम्यपतितगोशकृता 'विमार्जिते' विलिप्ते 'प्रत्यहं' दिनं दिनं प्रति 'विधिना' यथाविधानेन 'समं' सह 'जपतः' जपं कुर्वतः। कैः ? 'अरुणप्रसवैः' रक्तकरवीर पुष्पैः। भृशं अत्यर्थम्। 'तस्य' अनेन प्रकारेण जपतस्य पुरुषस्य। 'पादसरोजषट्-पदसन्निभं' पादकमलभ्रमरसदृशं। किम् ? 'भुवनत्रयम्'जगत्त्रयम् तस्य पुरुषस्य वशवर्ति स्यात् इत्यभिप्रायः ॥१०॥

मन्त्र :—ॐ ह्रीँ हंस्क्ली क्लूं हूँ असिआउसा अनाहतविद्यायै नमः ॥

[हिन्दी टीका]—इस मंत्र को भोज पत्र पर कपूर, केशर, अगरु व चन्दन से लिख कर अथवा वट वृक्ष के पट्टिये पर वा गोबर से लिपी हुई शुद्ध भूमि पर लिखे, फिर प्रतिदिन निम्नलिखित मंत्र का लाल कनेर के पुष्पों से विधिपूर्वक जाप्य करने से साधक के चरणों में सभी प्राणी नतमस्तक होते हैं ॥१०॥

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्रीँ ह्स्क्लीँ क्लूं (क्लें) हूँ असिआउसा अनाहतविद्यायै नमः। वशीकरण यंत्र चित्र नं. ३२।

ब्रह्मान्तरगतं नाम मायया परिवेष्टितम् ।
वेष्टितं कामराजेन बाह्ये न षोडशपत्रकम् ॥११॥

[संस्कृत टीका]—**'ब्रह्मान्तरगतं' ॐकारमध्यस्थितम् 'नाम' देवदत्तनाम । कथम्भूतम् ? 'मायया परिवेष्टितम्' ह्रीँकारेण परिवेष्टितम् । पुनरपि ह्रीँकाराद् बहिः 'कामराजेन' क्लीँकारेण 'वेष्टितं' परिवेष्टितम् । 'बाह्ये' क्लीँकारबाह्ये 'षोडश पत्रकं' षोडशदलपद्मम् ॥११॥**

[हिन्दी टीका]—ॐकार के मध्य में देवदत्त का नाम लिखकर ऊपर से माया बीज ह्रीँ से वेष्टित करे, फिर उसके बाहर कामराज बीज क्लीँ से वेष्टित करे, तदनन्तर उसके ऊपर सोलह पत्र वाला कमल बनावे ॥११॥

पञ्च बाणान् न्यसेत् तेषु स्वाहान्तौँकार पूर्वकान् ।
तद्बाह्ये[1] मायया वेष्टयं क्रौँकारेण निरोधयेत् ॥१२॥

[संस्कृत टीका]—**'पञ्चबाणान्' ॐ द्रां द्रीँ क्लीँ ब्लूं स इति पञ्च बाणान् 'न्यसेत्' स्थापयेत् । केषु ? 'तेषु' प्रत्येकं पत्रेषु 'न्यसेत्' विन्यसेत् । कथम्भूताम् ? 'स्वाहान्तौकारपूर्वकान्' स्वाहाशब्दान्तान् एवं ॐ द्रां द्रीँ क्लीँ ब्लूं सः स्वाहा' इत्यादिरूपान् । 'तद्बाह्ये' तत्पत्रबाह्ये 'मायया वेष्टयम्' ह्रीँकारेण त्रिधा वेष्टयम् । क्रौँकारेण निरोधयेत्' क्रौँकारेण निरोधनं कुर्यात् ॥१२॥**

[हिन्दी टीका]—उसके बाद पञ्चबाणों को ॐ द्रां द्रीँ क्लीँ ब्लूं स सोलह दलों में स्वाहा शब्द सहित लिखे, उसके ऊपर माया बीज ह्रीँ कार से तीन बार वेष्टित करदे और क्रौँ कार से निरोध करे ॥१२॥

भूर्यपत्रे पटे वाऽपि विलिखेच्च हिमादिभिः ।
ॐ द्रां द्रीँ क्लीँ ब्लूं सकारान्त्यमन्त्रं क्षोभकरं जपेत् ॥१३॥

[संस्कृत टीका]—**'भूर्यपत्रे' भूर्जदले 'पटे वा' वस्त्रे वा 'अपि' निश्चयेन 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् । कैः? 'हिमादिभिः' कर्पूरादि सुगन्धद्रव्यैः । ॐ 'द्रां द्रीँ**

---

१. मायया तत् त्रिधा वेष्टयं इति ख पाठः ।

वशीकरणयंत्रचित्र नं॰३२

क्लीं ब्लूं सकारान्त्यमन्त्रं ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः इति मन्त्रम् 'क्षोभकरं' जनक्षोभकरम् 'जपेत्' जपं कुर्यात् ॥१३॥

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को भोजपत्र वा वस्त्र पर कपूर, केशरादि सुगंधित द्रव्यों से लिखे, और ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः। इस मंत्र का जन क्षोभ करने के लिये जप करना चाहिये ॥१३॥

जन क्षोभकर यंत्र चित्र नं. ३३

नोट :—इस मंत्र की यंत्रविधि में संस्कृत प्रति में ॐ ह्रां ह्रीं ब्लूं सः स्वाहा लिखा है, और सूरत की कापडीयाजी की प्रति में श्लोक और टीका दोनो में ही, ॐ द्रीं क्लीं सः स्वाहा लिखा हुआ है किन्तु हमारे पास मथुरा से लिखी हुई मूल टीका सहित प्रति में ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः स्वाहा लिखा है, हमे तो यही मंत्र ठीक जचता है क्योंकि पंचबाण सहित मंत्र में ह्रां ह्रीं किसी भी हालत में नहीं बनता, पंचबाण में द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ही बनता है, नवाब के यहां से प्रकाशित प्रति में भी ह्रां ह्रीं ही लिखा है, किंतु ठीक नहीं है, अशुद्धपाठ है, इसलिये मेरे निर्णयानुसार ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः स्वाहा, यही मंत्र ठीक है। यंत्र में तीनों प्रतियों उपरोक्त मंत्र ही लिखा है यंत्र में किसी प्रकार का भेद नहीं है।

अष्टदलकमल मध्ये स्वनाम तत्वं दलेषु चित्तभवम्।
पुनरप्यष्टदलाम्बुजमिभवशकरणं ततो लेख्यम् ॥१४॥

[संस्कृत टीका]—'अष्टदलकमल मध्ये' अष्टदलाम्बुजमध्ये कर्णिकायाम् 'स्वनाम तत्वम्' स्वकीयनामान्वितं ह्रींकारम्। 'दलेषु चित्त भवम्' तदष्टदलेषु क्लींकारम्। 'पुनरप्यष्टदलाम्बुजम्' पुनरपि अष्टदलपद्मम्। 'ततः' तदष्टदलेषु 'इभवशकरणं क्रोंकारः 'लेख्यं' लेखनीयः ॥१४॥

[हिन्दी टीका]—अष्टदल कमल के अन्दर कर्णिका में अपने नाम सहित ह्रीं को लिखे, और अष्ट दल कमल में क्लीं कार को लिखे, फिर ऊपर एक अष्टदल का कमल बनावे, उस अष्टदल कमल में क्रों कार को लिखना चाहिये ॥१४॥

षोडशदलगतपद्मं क्लौंकारं तद्दलेषु सुरभिद्रव्यैः।
क्लां क्लीं क्लूं क्लौंकारैस्तद् यन्त्रं वेष्टयेत् परितः ॥१५॥

[संस्कृत टीका]—'षोडशदलागतपद्मम्' पूर्वोक्ताष्टपत्रबहिः प्रदेशे षोडशदलान्वितं पद्मं लिखेत्। 'क्लौंकारं तद्दलेषु' तत् षोडशदलेषु क्लौंकारं लिखेत्। कैः ?

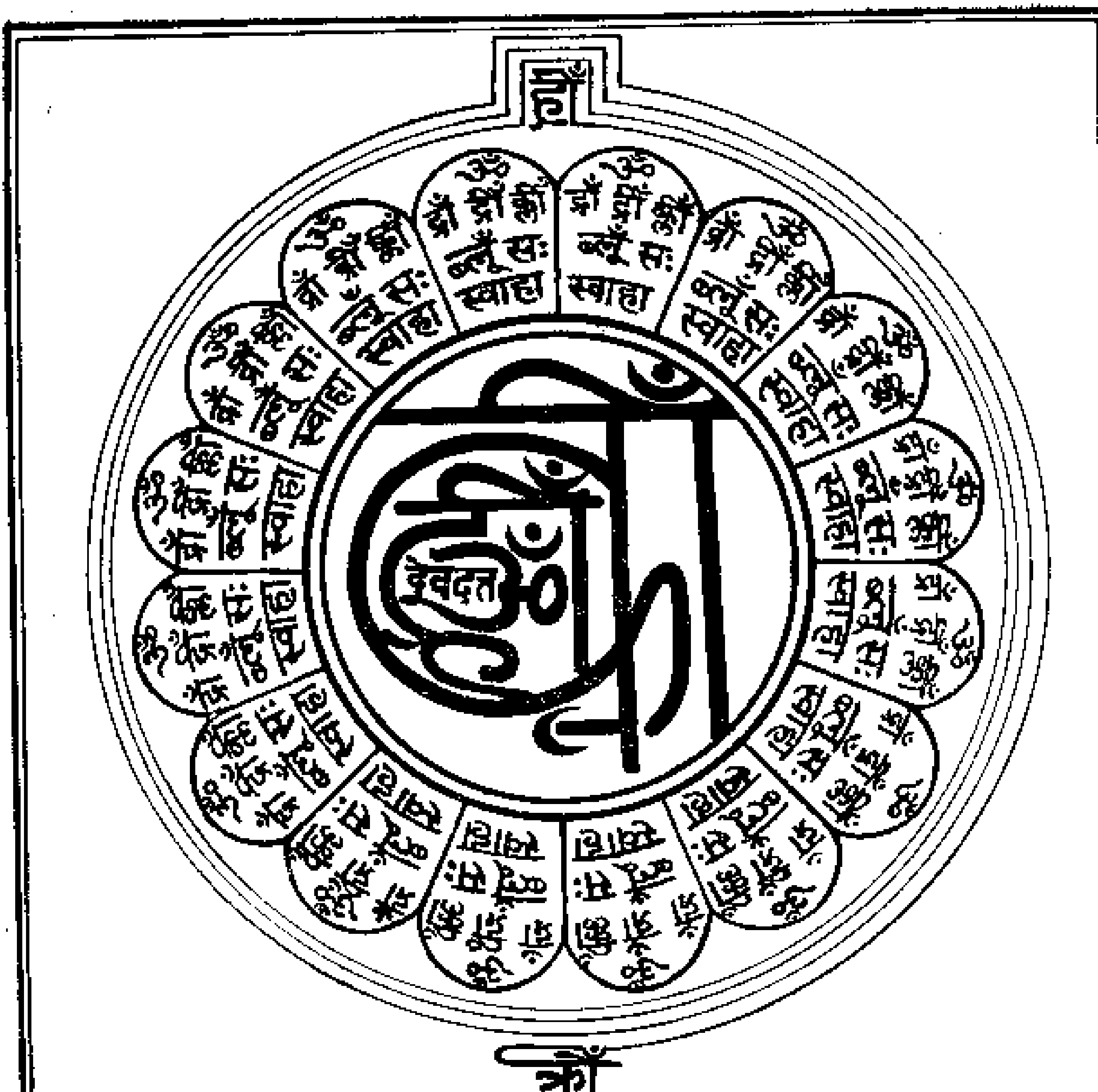

जनक्षोभकर यंत्र चित्र नं. २३

'सुरभिद्रव्यैः' सुगन्धिद्रव्यैः । 'क्लां क्लीं क्लौंकारैः' क्लां क्लीं क्लौं इत्यक्षरचतुष्टयेन 'तद् यन्त्रम्' प्रागुलिखित यन्त्रम् 'वेष्टयेत्' वेष्टनं कुर्यात् । कथम् ? 'परितः' समन्तात् ॥१५॥

[हिन्दी टीका]—फिर उसके ऊपर षोडशदल का कमल बनावे, उस कमल दलों में क्लीँ के लिखे फिर ऊपर से क्लाँ क्लीं क्लूँ क्लीँ क्लौँ इन चार बीजों से यंत्र को चारों तरफ से वेष्टित कर दे । इस यंत्र को सुगन्धित द्रव्यों से लिखें ॥१५॥

तद् बाह्येऽर्कशशिभ्यां जपतः शून्यैश्च पञ्चभिर्नित्यम् ।
नागनरामरलोकः क्षुभ्यति वश्यत्वमायाति ॥१६॥

[संस्कृत टीका]—'तद्बाह्ये' तद्वेष्टनबहिः प्रदेशे 'अर्क शशिभ्याम्' आदित्य चन्द्राभ्यां वेष्टनायम् । 'जपतः शून्यैश्च पञ्चभिर्नित्यम्' सर्वकालं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः इति पञ्चशून्यैः जपं कुर्वतः पुरुषस्य 'नागनरामरलोकः क्षुभ्यति' नागलोकः मनुष्यलोकः देवलोकः इति लोकत्रयं तस्य क्षोभं याति, 'वश्यत्वमायाति' वशवर्तित्वमेति ॥१६॥

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र के बाहर भाग में चंद्र और सूर्य को बनावे, फिर पांच शून्याक्षरों का सर्व काल जाप करने वाले साधक के नाग लोक, मनुष्य लोक, देव लोक ये तीनों लोक के जीव वश्य हो जाते हैं क्षोभ को प्राप्त हो जाते हैं वशीभूत होते हैं ॥१६॥

त्रिभुवन वशीकरण यंत्र चित्र नं. ३४ ।

अष्टौ लघुपाषाणान् दिशासु परिजप्य निक्षिपेद् धीमान् ।
चौरारिरौद्र जीवादभयं सम्पद्यतेऽटव्याम् ॥१७॥

[संस्कृत टीका]—'अष्टौ लघुपाषाणान्' अष्ट क्षुद्रपाषाणान् 'दिशासु' पूर्वादिदिशासु 'परिजप्य' प्रकर्षेण जपित्वा 'निक्षिपेत्' स्थापयेत् । कः ? 'धीमान्' बुद्धिमान् । 'चौरारिरौद्रजीवात्' तस्करशत्रुरौद्रजीवेभ्यः सकाशात् 'अभयं सम्पद्यते' निर्भयं भवति । क्व ? 'अटव्याम्' अरण्ये ॥१७॥

मन्त्र —ऊँ नमो भयवदो अरिट्ठणेमिस्स अरिट्ठेण बंधेण बंधामि रक्खसाणं भूयाणं खेयराणं चोराणं दाढीणं साइणीणं महोरगाणं अण्णे जे के वि दुट्ठा संभवंति तेसिं सव्वेसिं मणं मुहं दिट्ठि बंधामि घणु घणु महाधणु महाधणु जः ठः ठः ठः हुं फट । इत्यरिष्टनेमिमन्त्रं प्राकृतम् ॥

त्रिभुवनवशीकरणयंत्र चित्र नं॰ २४

[हिन्दी टीका]—आठ छोटी कंकरियों लेकर निम्न लिखित मंत्र से मंत्रित कर आठों दिशाओं में फेकने वाले बुद्धिमान व्यक्ति को अरण्य में अथवा अन्य जगह भयंकर पशु जीवों से होने वाला भय नष्ट हो जाता है ।।१७।।

अरिष्ट नेमि मंत्र :—ॐ णमो भयवदो अरिट्ठणेमिस्स बंधेण बंधामि रक्खसाणं भूयाणं खेयराणं दाढीणं महोरगाणं, अण्णे जे के वि दुट्ठा संभवंति तेसिं सव्वेसिं मणं मुहं गइं दिट्ठि बंधामि धणु धणु महाधणु-२ जः जः जः ठः ठः हुं फट् ।।

नोट :—इस मंत्र में भी नाना प्रकार का पाठान्तर मिलता है लेकिन हमने पूर्ण शुद्ध करके लिखा है ।

स्मरबीजयुतं शून्यं तत्त्वेनैंकारवेष्टितम् ।
बाह्येऽष्टदलमम्भोजं नित्यक्लिन्ने! मदद्रवे! ।।१८।।

मदनातुरे! वषडिति विलिखेत् स्वाहान्तविनयपूर्वेण ।
त्रिभुवनवश्यमवश्यं प्रतिदिवसं भवति संजपतः ।।१९।।

[संस्कृत टीका]—'स्मरबीजयुतम् क्लींकारयुतम् । किं तत् ? 'शून्यं' हकारम् । एवं ह्क्लीं इति बीजम् । पुनः कथम्भूतम्? 'तत्त्वेनैंकारवेष्टितम्' ह्रींकारेणैंकारेण वेष्टितम् । 'बाह्ये' तदैंकारबाह्ये 'अष्टदलमम्भोजम्' अष्टदलकमलं लिखेत् । 'नित्यक्लिन्ने! मदद्रवे ! मदनातुरे ! 'वषड्' इति मन्त्रं तद्दलेषु लिखेत् । 'स्वाहान्त विनयपूर्वेण' स्वाहाशब्दमन्त्यं ॐकारं पूर्वं कृत्वा लिखेत् । 'त्रिभुवनवश्यम्' भुवनत्रयवश्यम्' 'अवश्यं' निश्चितम् 'प्रतिदिवसम्' दिनं दिनं प्रति 'भवति' स्यात् । 'संजपतः' सम्यग् जपं कुर्वतः पुरुषस्य ।।१८।।१९।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ ह्क्लीं ह्रीं ऐं नित्यक्लिन्ने ! मदद्रवे ! मदनातुरे ! ममामुकीं वश्याकृष्टिं कुरु कुरु वषट् स्वाहा ।।

[हिन्दी टीका]—ह्क्लीं बीज को ह्रीं और ऐं से वेष्टित करके बाहर अष्ट दल कमल बनावे उस अष्टदल कमल में नीचे लिखा मंत्र लिखे, फिर उसी मंत्र का प्रतिदिन जप करने से तीनों लोकों के जीव वश होते हैं ।।१८।।१९।।

मंत्रोद्धार :—ॐ ह्क्लीं ह्रीं ऐं नित्ये क्लिन्ने मदद्रवे मदनातुरे ममामुकीं वश्याकृष्टि कुरु कुरु वषट् स्वाहा ।।

त्रिभुवन वशिकरण यंत्र चित्र नं. ३५ ।

त्रिभुवन वशीकरण यंत्र चित्र नं॰ ३५,

वर्णान्तं मदनयुतं वाग्भव परिसंस्थितं वसुदलाब्जम् ।
दिक्षु विदिक्षु च मायावाग्भव बीजं ततो लेख्यम् ॥२०॥

[संस्कृत टिका]—'वर्णान्तं' वर्णस्यान्तो वर्णान्तः तं हकारम्। कथम्भूतम् ? 'मदनयुतम्' क्लीँकारयुतम् । हक्लीँ इति । 'वाग्भवपरिसंस्थितम्' ऐंकार समन्तात् स्थितम् । 'वसुदलाब्जम्' तदैंकाराद् बहिरष्टदलपद्मम् । 'दिक्षु विदिक्षु च मायावाग्भव-बीजम्' प्राच्यादि चतुर्दिशासु ह्रीँकार बीजम् आग्नेय्यादिचतुर्विदिशासु च ऐँकार बीजम् 'ततो लेख्यम्' तस्माल्लेखनीयम् ॥२०॥

[हिन्दी टीका]—नाम सहित हल्कीँ को ऐं कार से वेष्टित करके, ऊपर अष्टदल कमल बनावे, उन अष्टदल कम के दिशाओं मे ह्रीँ और विदिशा रूप कमल दलों में ऐँ कार लिखे ॥२०॥

त्रैलोक्यक्षोभणं यन्त्रं सर्वदा पूजयेदिदम् ।
हस्ते बध्दं करोत्येव त्रैलोक्यजनमोहनम् ॥२१॥

[संस्कृत टीका]—'त्रैलोक्यक्षोभणं' त्रैलोक्यवर्तिजनक्षोभकारि 'यन्त्रं' एतत् कथितयन्त्रम् । 'सर्वदा' सर्वकालं पूजयेत् 'इदम्' एतद् यन्त्रम् । 'हस्ते बद्धं' बाहौ बद्धम् 'करोत्येव' अवश्यं करोति 'त्रैलोक्यजन मोहनम्' त्रैलोक्यान्तर्वर्तिजनानां मोहनम्॥२१॥

मन्त्रोद्धार :—उँ ऐँ ह्रीँ देवदत्तस्य सर्वजनवश्यं कुरु कुरु वषट् ॥

[हिन्दी टीका]—इस यंत्र को सर्व काल पूजने से और हाथ में बांधने से त्रैलोक्य में रहने वाले सर्व लोग मोहित होते हैं ॥२१॥

त्रैलोक्यजन क्षोभन (वशीकरण) यंत्र चित्र नं. ३६ ।

मंत्रोद्धार :—ॐ ह् ल्कीँ ऐँ ह्रीँ देवदत्तस्य सर्वजन वश्यं कुरु कुरु वषट् ।

नोट :—इस मंत्र में भी पाठान्तर है यथा, उपासना व संस्कृत प्रति में ॐ ऐँ ह्रीँ आदि मंत्र है, किन्तु सूरत वाली प्रति में ह क्लीँ ॐ के बाद है और आगे ऐँ ह्रीँ आदि हैं । हमारे पास मूल संस्कृत की प्रति में यह मंत्र ही नहीं दिया है, हमने सूरत वाली प्रति का मंत्र पाठ लिया है, यही ठीक जंचता है ।

भ्रमयुगलं केशि भ्रम माते भ्रम विभ्रमं मुह्यपदम् ।
मोहय पूर्णः स्वाहा मन्त्रोऽयं प्रणवपूर्वगतः ॥२२॥

[संस्कृत टीका]—'भ्रमयुगलम्' भ्रम भ्रम इति पदद्वयम् । 'केशिभ्रम' केशि भ्रम केशि भ्रमेति पदद्वयम् । 'माते भ्रमं' माते भ्रम माते भ्रमेति पदद्वयम् । 'विभ्रमं'

त्रैलोक्य क्षोभन यंत्र चित्र नं॰ ३६,

विभ्रम विभ्रमेति पदद्वयम् । 'च' समुच्चये । 'मुह्यपदम्' मुंच्च मुंचेति पदद्वयम् । 'मोहय' मोहय मोहय इति पदद्वयम् । 'पूर्णैः' सम्पूर्णैः । 'स्वाहा' स्वाहेतिपदम् । 'मन्त्रोऽयम्' अयं मन्त्रः 'प्रणव पूर्वगतः' ॐकार पूर्वकः ।।२२।।

मन्त्रोद्धार :–ॐ भ्रम भ्रम केशि भ्रम केशि भ्रम माते भ्रम माते भ्रम विभ्रम विभ्रम मुह्य मुह्य मोहय मोहय स्वाहा ।

[हिन्दी टीका]–भ्रम दो बार लिखे, फिर केशि भ्रम केशि भ्रम लिखे फिर माते भ्रम माते भ्रम लिखे, उसके बाद विभ्रम विभ्रम लिखे, तदनन्तर मुह्य मुह्य लिखे, मोहय मोहय को भी लिखे, प्रथम प्रणव ॐ को लिखकर अंत में स्वाहा से मंत्र पूर्ण करे ।।२२।।

मंत्रोद्धार :–ॐ भ्रम २ केशिभ्रम २ मातेभ्रम २ विभ्रम २ मुह्य २ मोहय २ स्वाहा ।

एतेन लक्षमेकं भूमिमसम्प्राप्त सर्षपैर्जप्त्वा ।
क्षिप्ते गृहदेहल्यामकालनिद्रां जनः कुरुते ।।२३।।

[संस्कृत टीका]–'एतेन' कथित मन्त्रेण । 'लक्षमेकम्' एके लक्षम् । 'भूमिमसम्प्राप्तसर्षपैः' भूम्यपतितसिद्धार्थैः । 'जप्त्वा' जपं कृत्वा । 'क्षिप्ते' निक्षिप्ते सति । क्व ? 'गृहदेहल्याम्' गृहोदुम्बरके । किं करोति ? 'अकाल निद्रां' आकस्मिक-निद्राम् । 'जनः' लोकः । 'कुरुते' कुर्यात् ।।२३।।

[हिन्दी टीका]–इस प्रकार कहे हुये मंत्र को भूमि पर नहीं गिरे हुए सफेद सरसों से एक लक्ष जाप्य करे और उन सरसों को घर की देहली (चौखट) फेंक दे तो घर के सब लोग अकालनिद्रा को प्राप्त हो जाते हैं । यानी सब सो जाते हैं ।।२३।।

रण्डायक्षिणी सिद्धि

मृतविधवाब्राह्मण्याः पादतलालक्तकेन परिलिखितम् ।
तद्वक्त्रपिहित वस्त्रे विधवारूपं निराभरणम् ।।२४।।

[संस्कृत टीका]–'मृत विधवा' पञ्चत्वप्राप्तरण्डायाः, कस्याः ? 'ब्राह्मण्याः' द्विजकुल प्रसूतायाः । 'पादतलालक्तकेन' तस्याः पादतलालक्तकेन । 'परि-लिखितम् समन्तात् लिखितम् । क्व ? 'तद्वक्त्रपिहितवस्त्रे' तन्मृतरण्डामुखप्रच्छादित-वसने । कम् ? 'विधवारूपम्' रण्डारूपम् । 'निराभरणम्' आभरणरहितम् ।।२४।।

[हिन्दी टीका]–मरी हुई विधवा ब्राह्मणी के पांव का आलक्तक (महावर) से उसके शव को ढके हुये वस्त्र में से जो मुंह पर ढका हुआ है ऐसे कपड़े पर लिखे एक विधवा आभरण रहित स्त्री का चित्र बनावे ।।२४।।

प्रणवं विच्चे मोहे स्वाहान्तं सप्तलक्षजाप्येन ।

एकाकिनी निशायां सिद्धयति सा यक्षिणीरण्डा ।।२५।।

[संस्कृत टीका]–'प्रणवं' ऊँकारम् । कथम्भूतम् ? 'विच्चे मोहे स्वाहान्तम्' विच्चे मोहे स्वाहाशब्दान्तम् । 'सप्तलक्ष जाप्येन' सप्तलक्षप्रमाणमेतन्मन्त्रजापेन । 'एकाकिनी' एकाकिनी भूत्वा । 'निशायां' रात्रौ । 'सिद्धयति' सिद्धिं प्राप्नोति । कासौ ? 'यक्षिणी रण्डा' सा रण्डा यक्षिणी ।।२५।।

मन्त्र :–ऊँ विच्चे मोहे स्वाहा ।

[हिन्दी टीका]–प्रणव ॐ पूर्वक विच्चे मोहे, अंत में स्वाहा को लिखे यानी ॐ विच्चे मोहे स्वाहा, मंत्र का एकाकी होकर सात लक्ष जाप्य करने से रण्डा यक्षिणी सिद्ध होती है ।।२५।।

यत् साधकाभिलषितं तत् तस्मै वस्तु[१] सा ददात्येव ।

क्षोभं प्रयान्ति रण्डाः सर्वा अपि भुवनवर्तिन्यः ।।२६।।

[संस्कृत टीका]–'यत् साधकाभिलषितम्' यत् किञ्चित् साधक पुरुषस्य मनोवाञ्छितम् । 'तत्' तद्वस्तु 'तस्मै' तस्मै साधकाय । 'सा ददात्येव' सा यक्षिणी न केवलं वस्त्वेव ददाति, अपितु 'क्षोभं प्रयान्ति' क्षोभं गच्छन्ति । काः ? 'रण्डाः' विधवाः । सर्वा अपि भुवनवर्तिन्यः' समस्ता अपि भुवनाभ्यन्तर वर्तिन्यः ।।२६।।

[हिन्दी टीका]–इस मंत्र के प्रभाव से साधक को रण्डा यक्षिणि मनोभिलसित पदार्थों को देती है सिर्फ पदार्थों को ही नहीं देती किन्तु त्रिभुवन में रहने वाली सभी विधवाओं को क्षुभित कर देती है अर्थात् क्षोभ को प्राप्त होती हैं ।।२६।।

तत्त्वं मन्मथबीजस्य तलोपरि विचिन्तयेत् ।

पार्श्वयोरेव लंपिण्डं भ्रमन्तमरुणप्रभम् ।।२७।।

[संस्कृत टीका]–'तत्त्वं' ह्रीँकारम् । 'मन्मथबीजस्य' कामदेव बीजस्य क्लीँकारस्य । 'तलोपरि' ततः क्लीँकारधोपरिप्रदेशे ह्रीँ ह्रीमिति । 'पार्श्वयोः' तत्क्लीँकारोभयपार्श्वयोः । एव । 'लं पिण्डं' क्लेँकारम् 'विचिन्तयेत्' ध्यानं कुर्यात् ।

१ नियतं इति ख पाठः ।

कथम्भूतम् ? 'भ्रमन्तं' चक्रवद् भ्राम्यन्तम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'अरुणप्रभम्' जपाकुसुम वर्णम् ॥२७॥

[हिन्दी टीका]—क्लीँ कार तत्व को ऊपर, नीचे ह्रीँ और वह क्लीँ के दोनों बाजु ब्लें (ब्ल) कार को चक्र की तरह घुमाता हुआ और जसौंधि पुष्प के वर्ण का ध्यान करे ॥२७॥

योनौ क्षोभं मूर्धनि विमोहनं पातनं ललाटस्थम् ।
लोचन युग्मे द्रावं ध्यानेन करोतु वनितानाम् ॥२८॥

[संस्कृत टीका]—'योनौ क्षोभम्' तदक्षरत्रयात्मके चक्राकारे वनितायोनौ ध्याने कृते वनिता क्षोभं प्रयाति । 'मूर्धनि विमोहनम्' तदेव ध्यानं वनितामस्तके कृते स्त्री मोहनम् । 'पातनं ललाटस्थम्' तदेव ध्यानं वनिताललाटे कृते सति सा विह्वली-भवति । लोचन युग्मे द्रावम्' तदेव ध्यानं वनितादृष्टियुग्मे कृते सति द्रावो भवति । 'ध्यानेन' अनेन कथित ध्यानेन । 'करोतु' क्षोभमित्यादि कर्म कुर्यात् । कासाम् ? 'वनितासाम्' स्त्रीणाम् ॥२८॥

[हिन्दी टीका]—ये तीनों अक्षर का ध्यान स्त्री की योनी में करने से स्त्री क्षोभ को प्राप्त होती है, उसी प्रकार स्त्री के मस्तक पर ध्यान करने से वह मोहित होती है, कपाल पर ध्यान करने से स्त्री विह्वल हो जाती है नेत्र युगल पर ध्यान करने से वह द्रवित हो जाती है । इस प्रकार आचार्य के कहे अनुसार स्त्री को क्षोभादिक करे ॥२६॥

शीर्षास्यहृदयनाभौ पादे चानङ्गबाणमथ योज्यम् ।
सम्मोहनमनुलोम्ये विपरीते द्रावणं कुर्यात् ॥२६॥

[संस्कृत टीका]—'शीर्षे' मस्तके 'आस्ये' वदने 'हृदये' हृत्प्रदेशे 'नाभौ' नाभि प्रदेशे । 'पादे' पादयोः 'चः' समुच्चये । 'अनङ्ग बाणम्' द्रां द्रीं क्लीँ ब्लूँ सः इति पञ्चबाणान् । 'अथ योज्यम्' शीर्षादिषु पञ्चस्थानेषु क्रमेण योजनीयम् । 'सम्मोहन मनुलोम्ये' मूर्धादिपादान्त ध्यानेन सम्मोहनम् । 'विपरीते द्रावणं कुर्यात्' तानेव पञ्च-बाणान् पादादारभ्य क्रमेण मस्तकपर्यन्तं ध्यात्वा द्रावणं कुर्यात् ।

द्रां द्रीँ क्लीँ ब्लूँ सः इत्यङ्गानुलोमस्थापने पञ्च बाणाः ॥२६॥

[हिन्दी टीका]—शिर, मस्तक, मुख, हृदय, नाभि और पैरों में अनङ्ग बाण द्राँ द्रीँ क्लीँ ब्लूँ सः इन पांच बाणों को मस्तक से प्रारंभ कर पांव की तरफ क्रमशः

ध्यान करने से स्त्री मोहित होती है, उससे विपरीत उन्हीं पांच बाणों को पांव की तरफ से प्रारंभ कर मस्तक तक ध्यान करने से स्त्री को द्रवित करता है। इस प्रकार विधि कही ।।२६।।

दद्यात् ताम्बूलगन्धादीन् स्मरबाणाभिमन्त्रितान् ।
क्षालयेदात्म वक्त्रं च स स्त्रीणां मन्मथो भवेत् ।।३०।।

[संस्कृत टीका]–'दद्यात्' ददातु । कान् ? 'ताम्बूल गन्धादीन्' तांबूल श्रीखण्ड गन्ध पुष्पफलादीन् । कथम्भूताम् ? 'स्मरबाणाभि मन्त्रितान्' कामबाण मन्त्रेणाभिमन्त्रितान् । न केवलं ताम्बूलादीन्येण दीयन्ते 'क्षालयेदात्म वक्त्रं च' तन्मन्त्रेणोदकमभिमन्त्र्य स्ववदनं प्रक्षालयेच्च । 'सः' एवं विधः पुरुषः । 'स्त्रीणाम्' वनितानाम् । 'मन्मथः' कामदेवो 'भवेत्' ।

तत्पुष्पाभिमन्त्रण मन्त्रोद्धारः–ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ह्रस्क्लीं ऐं नित्यक्लिन्ने[1] मदद्रवे ! मदनातुरे ! सर्वजनं[1] मम वश्यं कुरु कुरु वषट् ।।३०।।

[हिन्दी टीका]–इन पांच बाण मंत्र से पान, गंध, पुष्प, फलादिक मंत्रित कर इष्ट स्त्री को देवे, सिर्फ देवे ही नहीं किन्तु मंत्र से मंत्रित किये हुए पानी से साधक स्नान करे तो, वह पुरुष स्त्रियों के लिये कामदेव के समान हो जाता है ।।३०।।

फलपुष्पादिक को मंत्रित करने का मंत्र :–ॐ द्रां द्रीं क्लीं ब्लूं सः ह्लक्लीं ऐं नित्य क्लिन्ने मदद्रवे मदनातुरे सर्वजनं मम वश्यं कुरु २ वषट् ।

विचिन्तयेदेव लपिण्डमेकं सिन्दूरवर्णं वनितावराङ्गे ।
तद् द्रावणं दृष्टि निपात मात्रात् स्त्र्याकर्षणं[2] सप्तदिनानि मध्ये ।।३१।।

(संस्कृत टीका]–'विचिन्तयेत्' विशेषेण चिन्तयेत् । कम् ? 'एव लपिण्डमेकम्' क्लेकारमेकम् । कथम्भूतम् ? 'सिन्दूरवर्णं' सिन्दूरसदृशवर्णम् । क्व ? 'वनितावराङ्गे' स्त्रीणां योनौ । 'तद् द्रावणं' तच्चिन्तनं द्रावणं करोति । कस्मात् ? 'दृष्टिनिपातमात्रात्' ध्यानकर्तुः दृष्टितिनिपातमात्रात् । न केवलं द्रावं मोहं च करोति, स्त्र्याकर्षणं[3] सप्तदिनानि मध्ये सप्तदिनानां मध्ये स्त्र्याकर्षणं करोति ।।३१।।

---

१. ह्रीं इति ख पाठः ।
२. सप्ताहतोऽप्यानयनं करोति । क पाठः ।
३. 'सप्ताहतोऽप्यानयनं करोति' सप्तदिवसानां मध्ये स्त्र्याकर्षणं करोति । क पाठः ।

[हिन्दी टीका]—क्लें कार अथवा व्लें कार को स्त्री की योनी में सिन्दूर के रंग जैसे वर्ण का चितवन करने से स्त्री द्रवित हो जाती है, मात्र द्रवित ही नहीं होती किन्तु सात दिन के अन्दर स्त्री आकर्षित कर देता है ॥३१॥

(सूरत कापडिया जी की प्रति में यह श्लोक ज्यादा है।)

सिन्दूरारुण वास सन्निभ प्रभं व्लें कार सत्पिण्डकम्
कान्तागुह्यगतं प्रसंचलितमितं ध्यात्वा मनोरञ्जितम्।
लाक्षारागमबिन्दु वर्षं वर्षं प्रस्यन्दि कामावरात्
सप्ताहेन वशं करोतु वनीतां तत्तत्रचित्रं कुतः ॥३१॥

[हिन्दी टीका]-सिंदुरी लाल वस्त्र के समान प्रभावाले उत्तम पिण्ड व्लें को स्त्री के योनिस्थान में तेजी से घूमते हुए मन को प्रसन्न करने वाला, लाख की लालिमा की बून्दों के समूह को बरसाकर बहाता हुआ, ध्यान करने से स्त्री काम के वेग से यदि एक सप्ताह के अन्दर ही वश में आ जावे तो आश्चर्य ही क्या है ?

नोट :—यह श्लोक संस्कृत की प्रतियों में वा अहमदाबाद की प्रति में हमारे पास वाली प्रति में नहीं है, किन्तु सुरत की कापडिया जी से प्रकाशित प्रति में है, हमने वहां से उद्धरित किया है।

सूरत वाली प्रति में व्लें कार और हस्तलिखित प्रति में भी व्लें कार का ही ध्यान करे लिखा किन्तु पद्मावती उपासना में वहां से पूर्व प्रकाशित संस्कृत टीका में क्लें कार का ध्यान करे लिखा है।

ब्राह्मण मस्तक केशैः कृत्वा रज्जुं तया नरकपालम्।
आवेष्टय साध्यदेहोद्वर्त्तनमल केशनखरपादरजः ॥३२॥
मनुजास्थि चूर्णमिश्रं कृत्वा तन्निक्षिपेत् पुरोक्तपुटे[१]।
ज्वरयति मन्त्रस्मरणात् सप्ताहादस्थिमथनेन ॥३३॥

[संस्कृत टीका]—'ब्राह्मणमस्तककेशैः' द्विजशिरोरुहैः। 'कृत्वा रज्जुम्' तच्छिरोरुहैः' रज्जुं कृत्वा। 'तया' रज्ज्वा। 'नरकपालं' नृकपालपुटम्। 'आवेष्टय' समन्ताद् वेष्टयित्वा। 'साध्यदेहोद्वर्त्तनमलकेशनखरपादरजः' साध्य पुरुषस्य शरीरोद्वर्त्तनमल शिरोरुहनखपादरेणून् गृहीत्वा 'मनुजास्थि चूर्णमिश्रम्' नरास्थि चूर्णमिश्रम्। 'कृत्वा' विधाय। 'तत्' मलादि चूर्णम्। 'निक्षिपेत्' स्थापयेत्। क्व ? 'पुरोक्तपुटे' प्रागुक्तनृकपालपुटे।

---

१. कपालपुटे इति ख पाठः।

'ज्वरयति' साध्यपुरुषं ज्वरेण गृह्णाति । कस्मात् ? 'मन्त्रस्मरणात्' ॐ चण्डेश्वर ! इत्यादिमन्त्रचिन्तनात् । कथम् ? 'सप्ताहात्' सप्तदिनमध्यतः । केन ? 'अस्थिमथनेन' पुरुषास्थिकीलकमथनेन ।।३२।।३३।।

मन्त्रोद्धारः—ॐ चण्डेश्वर ! चण्ड कुठारेण अमुकं ज्वरेण ह्रीं गृह्ण गृह्ण मारय मारय हूं फट् घे घे ।

[हिन्दी टीका]—ब्राह्मण के शिर के केश की रस्सी बनाकर, उस रस्सी को मनुष्य की खोपडी पर लपेटकर साध्य पुरुष के शरीर से निकला हुए मल, शिर के बाल, शरीर का मल, विष्टा, नाखून, पांव के नीचे की धूल को लेकर, मनुष्य के हड्डी का चूर्ण करके उस मनुष्य की खोपडी में डाले और मंत्र का जाप्य करे और मनुष्य की हड्डी से उपरोक्त पदार्थों को जो खोपडी में हैं उनको चूर्ण करे यानी रगडे, तो जैसे-जैसे उपरोक्त पदार्थों का विशेष चूर्ण होता है वैसे-वैसे शत्रु को एक सप्ताह के भीतर ही ज्वर हो जाता है ।।३२।।३३।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ (नमो) चण्डेश्वर चण्ड कुठारेण अमुकं ज्वरेण (ॐ) ह्रीं गृह्ण २ मारय २ हूँ फट् घे घे ।

चण्डेश्वराय होमान्तं सञ्जपेद् विनयादिना ।
सहस्त्रदशकं मन्त्री पूर्वमारुणपुष्पकैः ।।३४।।

[संस्कृत टीका]—'चण्डेश्वराय' चण्डेश्वरायेति पदम् । 'होमान्तम्' स्वाहा-शब्दान्तम् । 'सञ्जपेत्' सम्यग्जपेत् । कथम् ? 'विनयादिना' ॐकारपूर्वेण । 'सहस्त्र दशकं' दशसहस्त्रम् । कोऽसौ ? 'मन्त्री' मन्त्रवादी । कथम् ? 'पूर्वम्' पूर्वसेवायाम् । कैः 'अरुणपुष्पकैः' रक्तकरवीरपुष्पैः ।।३४।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ चण्डेश्वराय स्वाहा ।। जाप्य सहस्त्रदश (१०,०००)

[हिन्दी टीका]—उपरोक्त विधि के पहले साधक को लाल कनेर के फूलों से १०,००० (दश हजार) जाप्य कर लेना चाहिये ।।३४।।

मंत्रोद्धार :—ॐ चण्डेश्वराय स्वाहाः ।

टान्तवकार प्रणवनजान्तार्द्धं शशिप्रवेष्टितं नाम ।
शीतोष्ण ज्वरहरणं स्यादुष्णहिमाम्बुनिक्षिप्तम् ।।३५।।

[संस्कृत टीका]—'टान्तवकार' टान्तः ठकारः । वकारः-व इत्यक्षरम् । 'प्रणवनम्' ॐकारम् । 'जान्तो' झकारः । 'अर्द्ध शशिप्रवेष्टितम्' अर्द्ध चन्द्राकाररेखावेष्टितं

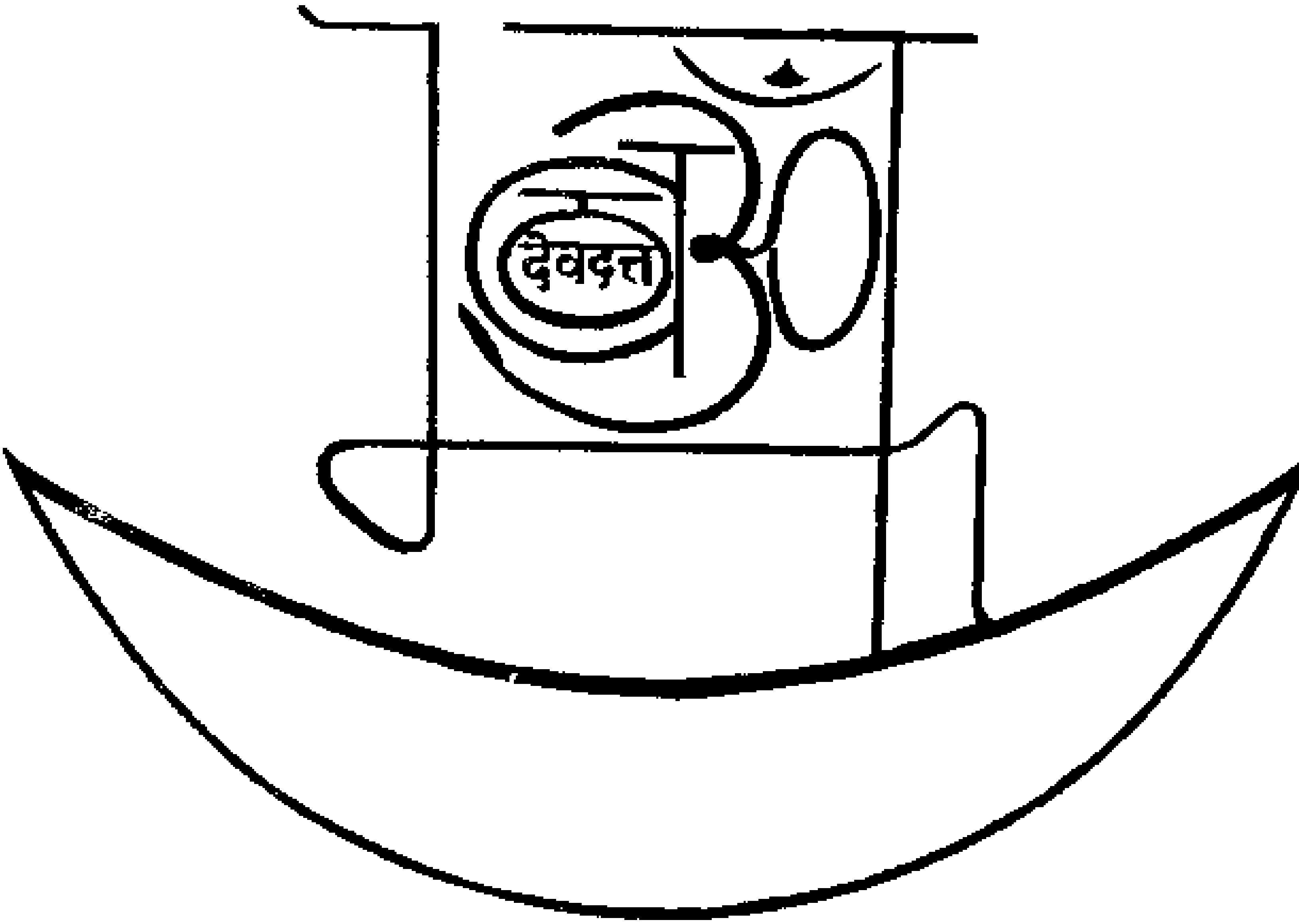

ज्वरहरणयंत्रचित्र नं. ३८

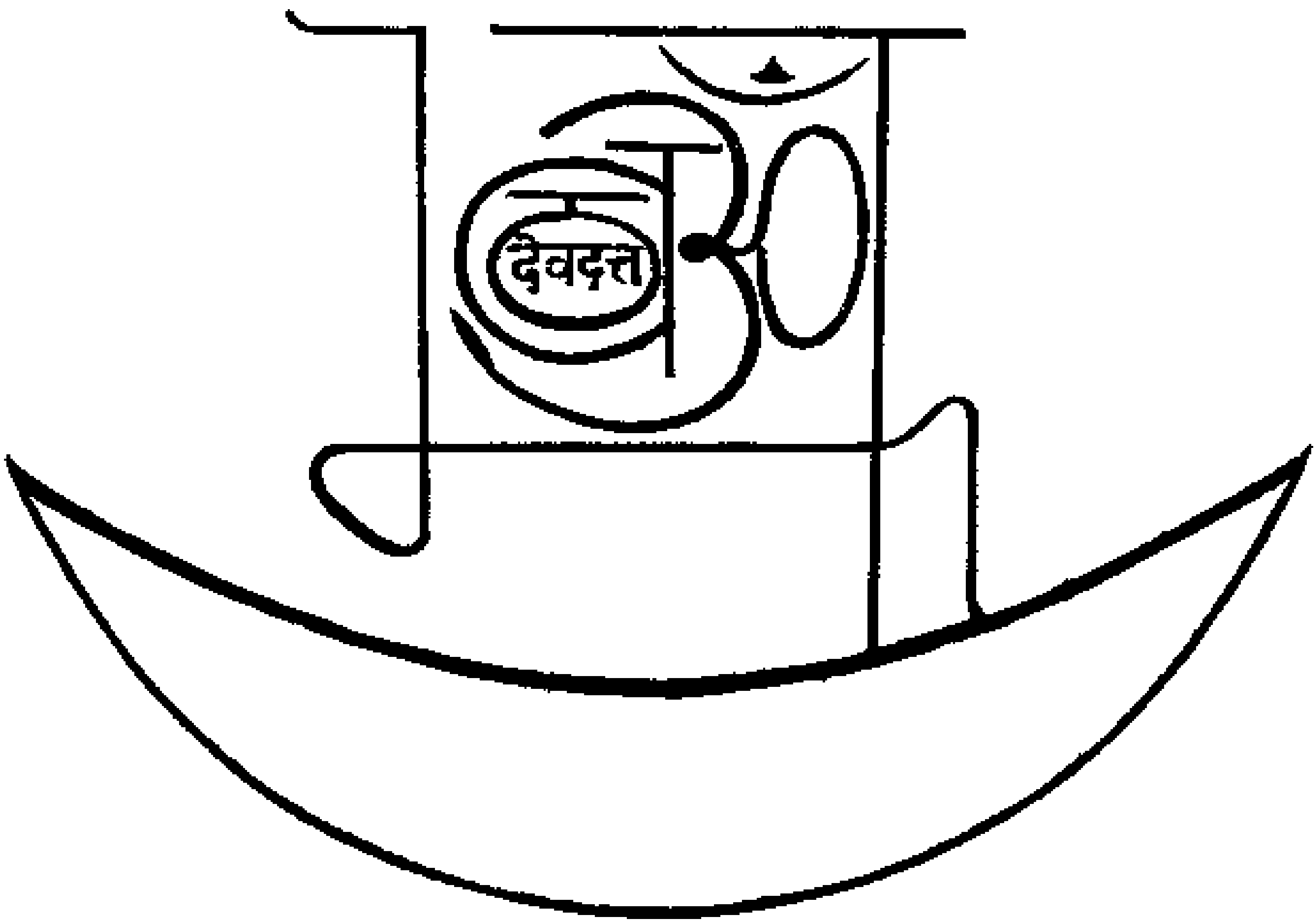

ज्वरहरण यंत्र चित्र नं. ३८

एतैः ठकारादिपञ्चभिः 'प्रवेष्ठियतम्' प्रकर्षेण वेष्टितम् । किं तत् ? 'नाम' ज्वरगृहीत पुरुषनाम । 'शीतोष्ण ज्वर हरणं' स्यादुष्णहिमाम्बुनिक्षिप्तं एतद् यन्त्रं उष्णोदकमध्ये निक्षिप्तं शीत ज्वर हरणं स्यात्, तदेव यन्त्रं शीतोदकमध्ये निक्षिप्तं उष्णज्वर हरणं स्यात् ।।३५।।

[हिन्दी टीका]—उस पुरुष के नाम को क्रमशः ठ, व, ॐ, भ को और अर्द्ध चन्द्र से वेष्टित करके उसको उष्ण जल में डालने से शीतज्वर और शीतल जल में डालने से उष्णज्वर नष्ट होता है ।।३५।।

होमद्रव्यविधान

शाल्यक्षतदूर्वाङ्कुरमलयजहोमेन शान्तिकं पुष्टिम् ।
करवीर पुष्प हवनात् स्त्रीणां कुर्याद् वशीकरणम् ।।३६।।

[संस्कृत टीका]—'शाल्यक्षतदूर्वाङ्कुरमलयजेहोमेन' कलमाक्षतश्वेतदूर्वाङ्कुरश्रीगन्धद्रव्य हवनेन । 'शान्तिकं पुष्टिम्' शान्तिकर्म पुष्टिकर्म च कुर्यात् । 'करवीर पुष्प हवनात्' । 'स्त्रीणां' वनितानाम् । 'वशीकरणं' वश्यकर्म कुर्यात् ।।३६।।

[हिन्दी टीका]—शाठी के चांवल, दुर्वा के अंकुर और लाल चंदन के होम से शांतिक और पुष्टि कर्म, लाल कनेर के पुष्पों के हवन से भी स्त्रियों का वशीकरण होता है ।।३६।।

महिषाक्षपद्महोमात् प्रति दिवसं भवति पुरजनक्षोभः ।
क्रमुकफलपत्र हवनात् राजानो वश्यमायान्ति ।।३७।।

[संस्कृत टीका]—'महिषाक्षपद्महोमात्' गुग्गुलपद्महवनात् । 'प्रति दिवसं भवति पुरजन क्षोभः' दिनं दिनं प्रति पुरजनक्षोभो भवति । 'क्रमुक फलपत्र हवनात्' पूगफल नाग वल्लीपत्र हवनात् । 'राजानो वश्यमायान्ति' सर्वे पार्थिवा वश्यं गच्छन्ति ।।३७।।

[हिन्दी टीका]—महिषाक्ष, गूगल और कमलपुष्प अथवा लाल कनेर के पुष्पों से होम करने से नगरवासी लोग प्रतिदिन क्षोभ को प्राप्त होते रहते हैं । सुपारी और नागरवेल पान के हवन से राजा लोग वश में होते हैं ।।३७।।

तिलधान्यानां होमैराज्ययुतैर्भवति धान्य धनवृद्धिः ।
मल्लि प्रसूनहोमात् सघृताद् वश्या योगिजनाः ।।३८।।

[संस्कृत टीका]—'तिलधान्यानां होमैः' तिलादिधान्यहवनैः । कथम्भूतैः ? 'आज्ययुतैः' घृतान्वितैः । 'भवति धान्य धनवृद्धिः स्यात् । 'मल्लिप्रसून होमात्' मल्लिकापुष्पहोमात् । कथम्भूतात् ? 'सघृतात्' गवाज्ययुक्तात् । 'वश्या नियोगिजनाः' नियोगिजना वश्या भवन्ति ।।३८।।

[हिन्दी टीका]—तिल, धान्य और घृत से होम करने से धन धान्य की वृद्धि होती है, गाय के घी के साथ मल्लिका पुष्प, (मोगरा के फूल) को मिलाकर होम करने से योगीजन भी वश हो जाते हैं ।।३८।।

श्लोक में योगिजन वश होते हैं, लिखा है उसकी टीका संस्कृत में नियोगि-जन वश होते हैं ऐसा लिखा है ।

घृतयुक्तचूत फलनिकर होमतो भवति खेचरी वश्या ।
वटयक्षिणी च होमाद् भवति वशा ब्रह्मपुष्पाणाम् ।।३९।।

[संस्कृत टीका]—'घृतयुक्तचूतफलनिकर होमतः' आज्ययुताम्रफलसमूह-हवनात् । 'भवति' स्यात् । 'खेचरी' खेचरी नाम देवी । 'वश्या' वश्या भवतीत्यर्थः । 'वटयक्षिणी च' वटयक्षिणी नाम देवी च । 'ब्रह्मपुष्पाणाम्' पलाशपुष्पाणाम् । 'हवनात्' होमात् । 'भवति वशा' वशी भवति ।।३९।।

[हिन्दी टीका]—आम के गुच्छों के साथ घी का होम करने से विद्याधरी देवी वश में होती है और पलाश (ढाक) के पुष्पों के साथ घृत का होम करने से वट यक्षणी नाम की देवी सिद्ध होती है, वश होती है ।।३९।।

गृह धूम निम्बराजीलवणान्वित काक पक्षकृतहोमैः ।
एकोदर जातानामपि भवति परस्परं वैरम् ।।४०।।

[संस्कृत टीका]—'गृह धूम' आगार धूम । निम्बः' पिचुमन्दः । 'राजी' कृष्णसर्षपः । 'लवणम्' सामुद्रम् । 'अन्वितैः' एतैर्युक्तैः 'काकपक्षकृतहोमैः' वायस पक्ष कृत होमैः । 'एकोदर जातानाम्' एकोदर समुत्पन्न पुरुषाणाम् । 'अपि' निश्चयेन । 'परस्परं वैरम्' । 'भवति' जायते ।।४०।।

[हिन्दी टीका]—घर के धुए का काजल, नीम, काली सरसों, समुद्र का नमक, कौए के पंख सहित होम करने से एक माता से उत्पन्न होने वाली अत्यंत स्नेही संतान में भी द्वेषभाव उत्पन्न होता है ।।४०।।

प्रेतवन शल्य मिश्रित विभीतकाङ्गारसद्मधूमानाम् ।
होमेन भवति मरणं पक्षाहाद् वैरिलोकस्य ॥४१॥

[संस्कृत टीका]—**'प्रेतवन शल्य मिश्रित विभीतकाङ्गारसद्मधूमानाम्' श्मशानास्थियुक्त भूत वृक्षाङ्गारगृहधूमानाम् । 'होमेन' हवनेन । 'भवति' जायते । किं तत्? 'मरणम्' पञ्चत्वम् । कथम्? पक्षाहात्' पक्षदिनमध्यतः । कस्य? 'वैरिलोकस्य' शत्रुजनस्य ॥**

[हिन्दी टीका]—श्मशान की अस्थि (हड्डी) से सहित बहेड़ा का अंगारा और घर के धूए के काजल से होम करने से एक पक्ष में ही शत्रु का मरण हो जाता है ॥४१॥

साधक सावधान :—इस मारण क्रिया में हाथ न डाले, नहीं तो नरकों में दुःख भोगना पड़ेगा, हिंसक क्रियाओं को कभी नहीं करे। करेगा तो जवाबदारी साधक की ही रहेगी ।

इत्युभयभाषाकवि शेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते भैरव पद्मावती कल्पे वश्य मन्त्राधिकार सप्तम परिच्छेदः ॥७॥

इति श्री उभय भाषा कवि विरचित भैरव पद्मावती कल्प वश्या यंत्राधिकार की हिन्दी भाषा नामक विजया टीका समाप्त ।

। सातवां अध्याय समाप्त ।

अष्टमो दर्पणादि निमित्त परिच्छेदः

सिध्द्यति सहस्रजाप्यै दशगुणितैः प्रणवपूर्वहोमान्तैः ।
दर्पण निमित्त मन्त्रश्चले चुले चूले प्रभलिनोच्चार्यः ।।१।।

[संस्कृत टीका]—'सिद्धयति' सिद्धि प्राप्नोति । कैः ? 'सहस्र जाप्यैः' । कथम्भूतैः ? 'दशगुणितैः' दशसहस्त्रैरित्यभिप्रायः । पुनः कथम्भूतैः ? प्रणव पूर्व होमान्तैः' उँकार पूर्व स्वाहा शब्दान्त्यैः । 'दर्पणनिमित्तमन्त्रः' आदर्श निमित्त मन्त्रः उच्चार्यः ।।१।।

मन्त्रोद्धार :—उँ चले चूले चूडे (ले) कुमारिकयोरङ्ग प्रविश्य यथा भूतं यथाभाव्यं यथासत्यं[1] मा विलम्बय ममाशां पूरय पूरय स्वाहा ।।

[हिन्दी टीका]—दर्पणनिमित के मंत्र का दश हजार जाप्य करने से मंत्र सिद्ध होता है, दशांश होम आहुति मंत्र की अवश्य देनी चाहिये ।।१।।

मंत्र :—ॐ चले चूले चूडे (ले) कुमारिकयोरङ्गप्रविश्य यथाभूतं यथा भाव्यं यथा सत्यं, मां विलम्बय ममाशां पूरय-पूरय स्वाहा ।

नोट :—यही दोनों मूल संस्कृत की प्रति में मंत्र है, किन्तु साराभाई नवाब के यहां से प्रकाशित प्रति में कहीं-कहीं अंतर है (दर्शय-दर्शय भगवति) इतने शब्दों का अंतर है । सूरत वाली प्रति भवति दर्शय-दर्शय भगवति, आदि लिखा है ।

सप्तवाराभिमन्त्रितगोदुग्धं पाययेत् कुमारिकयोः ।
ब्राह्मणकुलप्रसूत्योस्तयोर्द्वयोः सप्तवत्सरयोः ।।२।।

[संस्कृत टीका]—'सप्तवाराभिमन्त्रितम्' कथितमन्त्रेण सप्तवाराभिमन्त्रितम् । किम् ? 'गोदुग्धम्' गोक्षीरम् । 'पाययेत्' पानं कारयेत् । कुमारिकयोः' कन्ययोः । किंविशिष्टयोः? 'ब्राह्मण कुलप्रसूत्योः' विप्रवंशसज्जातयोः । पुनः कथम्भूतयोः ? 'सप्तवत्सरयोः' सप्तवार्षिकयोः । 'तयोर्द्वयोः' उभयोः ।।२।।

[हिन्दी टीका]—दो ब्राह्मणकुल में उत्पन्न होने वाली सात वर्ष की कन्याओं को उपरोक्तक मंत्र से गाय के दूध को सात बार मंत्रित करके पिलावे ।।२।।

---

१. दर्शय दर्शय भगवती इति ख पाठः ।

संस्नाप्य ततः प्रातर्दत्वा ताभ्यामथ प्रसूनादीन् ।
भूम्यामपतितगोमय सम्मार्जितभूतले स्थित्वा ।।३।।

[संस्कृत टीका]—'संस्नाप्य' सम्यक्स्नपयित्वा । 'ततः' स्नानानन्तरम् । 'प्रातः' प्रभात समये । दत्त्वा 'ताभ्याम्' कुमारोभ्याम् । 'अथ' पश्चात् । 'प्रसूनादीन्' पुष्पाक्षतानुलेपनादीन् । 'भूम्याम्' पृथिव्याम् । 'अपतितम्' न पतितम् । 'गोमयं' शकृत्। 'सम्मार्जित भूतले' तेन गोशकृता सम्यग्मार्जितभूतले । 'स्थित्वा' उषित्वा ।।३।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद उन दोनों कन्याओं को स्नान करावे, पृथ्वी पर न पड़े हुए गोबर से स्थान का लेप करके उस स्थान पर खड़ा होकर उन कन्याओं को पुष्पादिक देवे ।।३।।

चतुरस्त्रमण्डलस्थं कलशं गन्धोदकेन परिपूर्णम् ।
तस्योपर्यादर्शं निवेशयेत् पश्चिमाभिमुखम् ।।४।।

[संस्कृत टीका]—'चतुरस्त्रमण्डलस्थम्' समचतुरस्त्रमण्डलमध्यस्थितम् । कं तम् ? कलशम्' घटम् । कथम्भूतम्? 'गन्धोदकेन परिपूर्णम्' सुगन्धद्रव्यान्वितोदकेन परिपूर्णम् । 'तस्योपरि' तत्पूर्णकुम्भस्योपरि । आदर्शं दर्पणम् । निवेशयेत्' स्थापयेत् । कथम् ? पश्चिमाभिमुखम्' प्रतीच्यभिमुखम् ।।४।।

[हिन्दी टीका]—फिर चौकोर एक मंडल बनावे, उस मंडल पर कलश स्थापन करे तदनन्तर सुगन्धि जल से कलश को भर दे, उस कलश पर एक दर्पण स्थापन करे, उसका पश्चिम दिशा की तरफ मुंह करे ।।४।।

तदभिमुखे प्राक्कल्पितकुमारिकायुगलमथ निवेश्य ततः ।
तद् हृदये ब्लूँकारं विचिन्तयेत् प्रणवसम्पुटितम् ।।५।।

[संस्कृत टीका]—'अथ' पश्चात् । 'तदभिमुखे' तद्दर्पणाभिमुखे । 'प्राक्-कल्पित कुमारिकायुगलम्' पूर्वं स्नानादिसङ्कल्पित कन्याया युग्मम् । 'निवेश्य' तन्मण्डले संस्थाप्य । 'ततः' पश्चात् । 'तद्हृदये' तत्कुमारिका युगल हृदये । 'ब्लूँकारं' ब्लूमिति बोजाक्षरम् । 'विचिन्तयेत्' विशेषेण ध्यायेत् । कथम् ? 'प्रणवसम्पुटितम्' उँकार-सम्पुटगतं । उँ ब्लूँ उँ इत्योंकार सम्पुटितम् ।।५।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद दर्पणाभिमुख होकर उन दोनों कन्याओं को मंडल में बिठावे, और उन दोनों कन्याओं के हृदय पर ब्लूँ कार बीजाक्षर का ध्यान करे, कैसे करे? ॐ प्रणव सहित करे, याने ॐ ब्लूँ का ध्यान करे ।।५।।

शशिमण्डलवत् सौम्यं तन्मन्त्रमनुस्मरन् स्वयं तिष्ठेत् ।
आदर्शं वीक्ष्यमाणं कुमारिकायुगलकं पृच्छेत् ॥६॥

[संस्कृत टीका]—'शशिमण्डलवत् सौम्यम्' चन्द्रमण्डलवत्सौम्यरूपम् । 'तन्मन्त्रम्' वक्ष्यमाणमन्त्रम् । 'अनुस्मरन् स्वयं तिष्ठेत्' मन्त्रवाद्यात्मना तिष्ठेत् । आदर्शवीक्ष्यमाणं कुमारिका युगलकम्' कन्यकायुगलम् । 'पृच्छेत्' प्रष्टव्यम् ॥६॥

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी आगे कहे अनुसार चन्द्र मंडल जैसे निर्मल मंत्र को जपता हुआ, स्वयं बैठकर दर्पण में देखती हुई उन दोनों कन्याओं को पूँछे ॥६॥

यद् दृष्टं यच्छ्रुतं[1] ताभ्यां तत्र रूपं वचो यथा ।
खड्गाङ्गुष्ठे जलादर्शे तत् सत्यं नान्यथा भवेत् ॥७॥

[संस्कृत टीका]—'यद् दृष्टम्' यत् तत्र दृष्टम् । 'यच्छ्रुतम्' यत् तत्र श्रुतम्। 'ताभ्याम्' कुमारिकाभ्याम् । 'तत्र' मुकुरादि निमित्ते । 'रूपं वचो यथा' येन प्रकारेण दृष्टं रूपम्, आकर्णितं वचनम् । क्व? 'खड्गाङ्गुष्टजलादर्शे' खड्गाङ्गुष्टनिमित्ते, जल-पूर्ण कलशे, दर्पण निमित्ते । 'तत् सत्यम्' यद् दृष्टम्, यत्श्रुतं तत् सर्वं तथ्यम् । 'नान्यथा भवेत्' अन्य प्रकारेणासत्यं किमपि न भवति ॥७॥

[हिन्दी टीका]—जैसा-जैसा देखा, जैसा-जैसा सुना, वैसा ही उन दोनों कन्याएँ कहेगी, वह पूर्ण सत्य ही होगा, खड्ग, अंगुष्ठ, जल, दर्पण, आदि में देखा हुआ सत्य होगा, अन्यथा नहीं हो सकता है ॥७॥

दर्पणाङ्गुष्ठ दीपादि निमित्तमवलोकयेत् ।
सिध्यत्यष्टसहस्त्रेण मन्त्रो जाप्येन मन्त्रिणाम् ॥८॥

[संस्कृत टीका]—'दर्पणाङ्गुष्ठदीपादि निमित्त अवलोकयेत्' निरीक्षेत् । 'सिध्यति' सिद्धि प्राप्नोति । 'अष्टसहस्त्रेण' सहस्त्राष्टकेन । कोऽसौ ? 'मन्त्रः' वक्ष्य-माणमन्त्रः । 'जाप्येन' जपनेन । केषाम् ? 'मन्त्रिणाम्' मन्त्रवादिनाम् ॥८॥

मन्त्रोद्धार :—ॐ नमो मेरु महामेरु, ॐ नमो गौरी महागौरी, ॐ नमः काली महाकाली, ॐ इन्द्रे महाइन्द्रे, ॐ जये महाजये, ॐ नमो विजये महाविजये, ॐ नमः पण्णसमणि, अवतर अवतर देवी अवतर अवतर[2] स्वाहा ॥

१. यत् श्रुतं इति ख पाठः ।
२. ह्रीं स्वाहा इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]–दर्पण अंगुष्ठ दीपकादि निमित में देखे, मंत्रवादी को नीचे लिखे मंत्र को आठ हजार जाप्य करने से सिद्धि मिलती है ।

उसके आराधना का मंत्र :–ॐ नमो मेरू महामेरू ॐ (नमो धरणि महाधरणि) ॐ नमो गौरी महागौरी, ॐ नमो काली महाकाली ॐ नमो इन्द्रे महा-इन्द्रे ॐ नमो जये महाजये ॐ नमो विजये महाविजये ॐ नमो पण्णसमणि, महापण्ण-समणि अवतर--अवतर देवि अवतर--देवि अवतर (मम चिन्तितं कार्यं ब्रूहि-२) स्वाहा ।।८।।

नोट :––इस मंत्र में मूल संस्कृत पाठ में और अन्य प्रतियों में मंत्र का भेद दिखता है, संस्कृत प्रति में नमोधरणि महाधरणि, पाठ नहीं है और मम चिन्तितं कार्यं सत्यं ब्रूहि-२ पाठ भी नहीं है, किन्तु सूरत की कापडियाजी की प्रति में है ।

दत्वा दर्भास्तरणं दुग्धाहारं पुरा कुमारिकयोः ।

संस्नाप्य ततः प्रातर्धवलाम्बर भूषणादीनि ।।९।।

[संस्कृत टीका]–'दत्वा' । किम् ? 'दर्भास्तरणम्' दर्भशय्याम् । 'दुग्धाहारम्' क्षीराहारम् । कथम् ? 'पुरा' निशि प्रथमयामे । कयोः ? 'कुमारिकयोः' । 'ततः' तदनन्तरम् । 'प्रातः' प्रभातसमये । 'संस्नाप्य सम्यक्स्नपयित्वा । 'धवलाम्बर भूषणादीनि' श्वेतवस्त्रालङ्करणादीनि ।।९।।

[संस्कृत टीका]–दोनों कुमारिकाओं को दाभ की शैय्या और दूध का आहार रात्री के प्रथम प्रहर में देकर, प्रातः काल अच्छी तरह से कराकर सफेद वस्त्र और आभूषणादि देवे ।।९।।

कलशादर्शकुमारीस्थानेष्वथ विन्यसेदिमं मन्त्रम् ।

विनयं गजवशकरणं क्षांक्षींक्षूंकारहोमान्तम् ।।१०।।

[संस्कृत टीका]–'कलशादर्शकुमारी स्थानेषु' कलशस्थापने, दर्पण स्थापने, कुमारी स्थापने, एतेषु स्थानेषु । 'अथ' पश्चात् 'विन्यसेत्' कम्? 'इमं मन्त्रम् वक्ष्यमाणमन्त्रम् । 'विनयं गजवशकरणं क्षां क्षीं क्षूंकारहोमान्तम्' उंकारं विनय इति सञ्ज्ञम्, गजवशकरणं क्रोंकारम्, क्षांकारम् क्षींकारम् क्षूंकारम् 'होमान्तम्' स्वाहाशब्दान्तम् ।।१०।।

स्थानत्रय संस्थापन मन्त्रोद्धार :–उं क्रों क्षां क्षीं क्षूं स्वाहा । एतन्मन्त्रं स्थानत्रये विन्यसेत् ।।

[हिन्दी टीका]—कलश स्थापन की जगह, दर्पण स्थापन की जगह और कुमारीका स्थापन की जगह इस मंत्र ॐ क्रौं क्षां क्षीं क्षूं स्वाहा का न्यास तीनों स्थानों पर करें ।।१०।।

प्रणवादि पञ्च शून्यैरभिमन्त्र्य कुमारिकाकुचस्थाने ।
अशितुं तयोश्च दद्याद् घृतेन सम्मिश्रतान् पूपान् ।।११।।

[संस्कृत टीका]—'प्रणवादि पञ्च शून्यैः' ॐकारादि ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः इति पञ्चशून्यैः । 'अभिमन्त्र्य' मन्त्रयित्वा । क्व ? 'कुमारिका कुचस्थाने' कन्यास्तनयुगल स्थाने । 'तयो' द्वयोः कुमारिकयोः । 'क्व' पुनः । 'अशितुम्' भक्षयितुम्। 'दद्याद्' दातव्यम् । कान् ? 'पूपान्' पोलिकाः । कथम्भूतान् । 'घृतेन सम्मिश्रतान्' आज्ययुक्तान् ।।११।।

[हिन्दी टीका]—प्रणवादि पांच शून्याक्षर याने ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः इन अक्षरों से मंत्रित करके, किसको मंत्रित करके ? कन्या के दोनो स्तनों को । फिर घृतमिश्रित पूआ कन्याओं को खाने को देना चाहिये ।।११।।

आलक्ताभिरञ्जित हस्ताङ्गुष्ठे निरीक्षयेद् रूपम् ।
करनिर्वर्तिततैलेनाङ्गुष्ठस्नान करणेन ।।१२।।

[संस्कृत टीका]—'आलक्ताकाभिरञ्जितहस्ताङ्गुष्ठे' मन्त्रिदक्षिणकराङ्गुष्ठे । 'निरीक्षयेत्' अवलोकयेत् । किम् ? 'रूपम्' प्रतिबिम्बम् । केन ? 'करनिर्वर्तिततैलेन' हस्ताभ्यां मर्दिततैलेन । कथम्भूतेन ? अङ्गुष्ठस्नानकरणेन' मन्त्र्यङ्गुष्ठेन तैलाभ्यक्तेन अङ्गुष्ठनिमित्तमिदम् ।।१२।।

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी के दोनों हाथों से मर्दित किए हुए तिल के तेल से अंगुष्ठ निमित्त के द्वारा अलक्तक (महावर) से रंगे हुए अपने अंगूठे में मंत्ररूप को देखे ।।१२।।

प्रणवः पिंगुलयुगलं पण्णात्तिद्वितयं महाविद्येयम् ।
टान्तद्वयं च होमो दर्पणमन्त्रो जिनोद्दिष्टः ।।१३।।

[संस्कृत टीका]—'प्रणवः' ॐकारः । 'पिंगुलयुगलं' पिंगल पिंगलेतिपदद्वयम् । 'पण्णत्ति द्वयं च' पण्णत्ति पण्णत्तीतिपद द्वयं च । 'महाविद्येयम्' इयं महाविद्या । 'टान्तद्वयं' ठकारद्वयम् । 'च' । 'होमः' स्वाहा इति । 'दर्पणमन्त्रः' आदर्शमन्त्रः । 'जिनोद्दिष्टः' जिनेश्वर प्रणीतः ।।१३।।

मन्त्र :— उँ पिंगल पिंगल पण्णत्ति पण्णत्ति[1] ठः ठः स्वाहा ।।

[हिन्दी टीका]—ॐकार पिंगल-पिंगल ये दो पद, और पण्णत्ति-२ ये दो पद और ठः ठः ये दो और स्वाहा, ये दर्पण मंत्र है इस मंत्र को जिनेन्द्र देव ने दर्पण मंत्र कहा है ।।१३।।

ॐ पिंगल पिंगल पण्णति पण्णति ठः ठः स्वाहा ।।१३।।

जाप्यं भानुसहस्त्रैः सितपुष्पैश्चन्द्र किरणसङ्काशैः ।
सिद्धयति दशांश होमादादर्श निमित्त मन्त्रोऽयम् ।।१४।।

[**संस्कृत टीका**]—**'जाप्यं' जपम् । 'भानुसहस्त्रैः' द्वादशसहस्त्रैः । कैः ? 'सित पुष्पैः' श्वेतप्रसूनैः । कथम्भूतैः ? 'चन्द्रकिरणसङ्काशैः' चन्द्ररश्मिसन्निभैः । 'सिद्धयति' सिद्धि याति । केन ? 'दशांशहोमेन' द्वादश सहस्त्राणां दशांश होमेन । 'आदर्श-निमित्त मन्त्रोऽयम्' अयं मन्त्रः दर्पण निमित्तसाधनम् ।।१४।।**

[हिन्दी टीका]—दर्पण निमित मंत्र की सिद्धि बारह हजार चंद्रमा के समान उज्वल सफेद पुष्पों के जाप्य करने से और दशांश होम करने से होती है ।।१४।।

चितभस्मनैक विंशति वारान् सम्मर्द्य[2] दर्पणं पूर्वम् ।
शाल्यक्षतोपरि स्थित नवाम्बुपरिपूर्णनव कुम्भे ।।१५।।

[**संस्कृत टीका**]—**'चितभस्मनैक विंशति वारान्' । 'सम्मर्द्य' मर्दयित्वा । कम् ? 'दर्पणम्' 'शाल्यक्षतोपरिस्थित' कलमाक्षत पूजोपरिस्थित । 'नवाम्बुपरिपूर्ण-नवकुम्भे' अग्रोदकपरिपूर्णनवकुम्भे ।।१५।।**

[हिन्दी टीका]—फिर श्मशान के भस्म से उस दर्पण को इक्कीस बार स्वच्छ कर याने दर्पण को मलकर उसको शालि के चांवलों पर नवीन जल से भरे हुए कुम्भ के ऊपर दर्पण को रखे ।।१५।।

तं प्रतिनिधाय तस्मिन्नेक कुलोद्भूतकन्यकायुगलम् ।
त्रिषु वर्णेष्वन्यतमं स्नातं धवलाम्बरोपेतम् ।।१६।।

[**संस्कृत टीका**]—**'तं प्रति निधाय' तं आदर्श कुम्भस्योपरि संस्थाप्य । 'तस्मिन्' तत्कुम्भसमीपे । 'एककुलोद्भूतकन्यका युगलम्' एक कुल जनित कन्यका**

---

१. महाविद्ये ठः ठः इति ख पाठः ।
२. विमृशेच्च इति ख पाठः ।

युग्मम् । किं विशिष्टम् ? 'त्रिषु वर्णेष्वन्यतमं' ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यानां मध्येसत्कन्यका-युगलम् प्राप्य, तदेकम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'स्नातम्' कृतस्नानम् 'धवलाम्बरोपेतम्' श्वेतवस्त्रपरिधानान्वितम् ।।१६।।

[हिन्दी टीका]—उस कुम्भ पर दर्पण को स्थापन कर, उस कुम्भ के समीप में एक ही वर्ण से उत्पन्न ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य इन तीनो वर्णों में से कोई भी एक वर्ण में उत्पन्न हुई दो कन्याओं को स्नान करा कर श्वेत वस्त्र पहिनावे १६।।

अभ्यर्च्य गन्धतन्दुलनिवेद्यकुसुमादिभिस्ततः कलशम् ।
दत्वा ताम्बूलादीन् आदर्शं दर्शयेत् ताभ्याम् ।।१७।।

[संस्कृत टीका]—'अभ्यर्च्य' सम्यग् अर्चयित्वा । कैः? 'गन्धतन्दुल निवेद्य-कुसुमादिभिः' गन्धाक्षतवर पुष्प दीपधूपाद्यष्टविधार्चन द्रव्यैः । 'ततः' तस्मात् । 'कलशं' पूर्णकुम्भम् । 'दत्वा ताम्बूलादीन्' ताम्बूलगन्धाक्षतकुसुमादीन् दत्वा । 'आदर्शं दर्शयेत्' । 'ताभ्याम्' कुमारिकाभ्याम् ।।१७।।

[हिन्दी टीका]—फिर भली प्रकार गन्धाक्षत पुष्पादिक से उस कलश की पूजा कर उन कन्याओं को पान आदि पदार्थों को देकर दर्पण दिखावे ।।१७।।

मन्त्रं प्रपठंस्तिष्ठेत् कुमारिकायुगलकं तथा पृच्छेत् ।
दृष्टं श्रुतं च कथयति रूपं वचनं च मुकुरान्ते ।।१८।।

[संस्कृत टीका]—'मन्त्रं प्रपठन्' मन्त्रं उच्चारयन् । 'तिष्ठेत्' निवसेत् । 'कुमारिका युगलकम्' कन्यकायुगलम् । 'तथा' तेन प्रकारेण । 'पृच्छेत्' प्रश्नं कुर्वीत । 'दृष्टं श्रुतं च कथयति' यद् दृष्टं यच्छ्रुतं तत्सर्वं कथयति । 'रूपं वचनं च मुकुरान्ते' आदर्शे यद् दृष्टं रूपं यच्छ्रुतं वचनं तत्कथयति । इति दर्पणावतारः ।।१८।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद मंत्रवादी मंत्र को जपता हुआ उन दोनों कन्याओं से पूछे । वे दोनों कन्याए दर्पण में रूप और सुने हुए वचन को ठीक-ठीक कहेंगी ।।१८।।

दीपक निमित्त सुन्दरी यंत्र

इदानीं दीपनिषद्या कथ्यते—

अष्ट सहस्रैर्जातो पुष्पैः श्री वीरनाथ जिनपुरतः ।
जप्ते सुन्दरदेवो सिद्धयति मन्त्रेण सद्भक्त्या ।।१६।।

[संस्कृत टीका]'अष्टसहस्रैः' सहस्राष्टकैः । 'जातीपुष्पैं' मालती प्रसूनैः। 'श्री वीरनाथ जिनपुरतः' श्रीवर्द्धमान स्वामि जिनस्याग्रे । 'जप्ते' जाप्ये कृते सति । 'सुन्दरदेवी' सुन्दरी नाम देवी । सिद्धयति' सिद्धि प्राप्नोति। केन? 'मन्त्रेण' वक्ष्यमाण मन्त्रेण। कथम् ? 'सद्भक्त्या' सद्भक्ति विशेषेण ।।१६।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ सुन्दरि ! परमसुन्दरि[१] ! स्वाहा ।

[हिन्दी टीका]—श्री महावीर स्वामी के सामने जाती पुष्पों से आठ हजार जाप करने से सुन्दरी देवी सिद्ध होती है । विशेष भक्ति से आराधना करे ।।१६।।

जाप करने का मंत्र :—ॐ सुन्दरि परमसुन्दरि स्वाहा ।

ब्रह्मादि सुन्दरी शब्दं होमान्तं कर्णिकान्तरे ।
अष्टपत्रेषु सर्वेषु लिखेत् परमसुन्दरी ।।२०।।

[संस्कृत टीका]—'ब्रह्मादि सुन्दरी शब्दं' ॐकारादि सुन्दरीपदम् । 'होमान्तं' स्वाहान्तम् । 'कर्णिकान्तरे' ॐ सुन्दरि ! स्वाहा इति कर्णिकाभ्यन्तरे' लिखेत् । 'अष्ट पत्रेषु सर्वेषु' तत्कर्णिका बहिः प्रदेशे अष्टदलेषु । 'लिखेत् परम सुन्दरी' ॐ परम सुन्दरी स्वाहा इति पदं प्रत्येकं सर्वदलेषु लिखेत् ।।२०।।

[हिन्दी टीका]—आठ पांखुडी का एक कमल बनावे, कर्णिका में ॐ सुन्दरी स्वाहा, लिखे और आठों पांखडीयों में ॐ परमसुन्दरी स्वाहा लिखे ।।२०।।

कृष्णतिलतैलपूर्णे कुलालकरमृत्तिकाकृते पात्रे ।
आलक्तककृतवर्त्या दीपे न्यग्रोधवह्निभवे ।।२१।।

[संस्कृत टीका]—'कृष्ण तिलतैल पूर्णे' कृष्णतिलोद्भूततैल सम्पूर्णे । पुनः कथम्भूते ? 'कुलालकर मृत्तिकाकृते' कुम्भकारकराग्रगृहीतमृत्तिकया कृते । कस्मिन् ? 'पात्रे' दीपमात्रे । 'आलक्तककृतवर्त्या' आलक्तकपटलावेष्टितवर्त्या । 'दीपे' प्रदीपे । कथम्भूते ? 'न्यग्रोधवह्निभवे' वटवृक्षकाष्ठजनितग्निप्रज्वलिते । कुमारिकाद्यष्टविधार्चनं प्राक्कथित विधान वज्ज्ञात्वा कर्त्तव्यम् । दीपनिमित्तमिदम् ।।२१।।

[हिन्दी टीका]—कुम्हार के हाथ में लगी हुई मिट्टी से बनाये हुए दीपक में काले तिल का तेल भरकर (लाक्षा) (लाख) आलक्तक की वत्ती बनाकर उस दीपक में डाले और उसके बाद, उस दीपक को वट वृक्ष की लकडी से जलावे ।।२१।।

---

१. महासुन्दरि ! इति ख पाठः ।

बाकी विधान पूर्व की तरह से जानना चाहिये । दीपनिमित्त विधान है । सुन्दरी यंत्र चित्र नं. ३९ देखें ।

इदानीं कर्णपिशाची विधानमभिधीयते—

श्रवणपिशाचिनि मुण्डे ! स्वाहान्तः प्रणवपूर्वकोच्चार्यः ।

सिद्धयति च लक्षजाप्यात् कर्ण पिशाचीत्ययं मन्त्रः ॥२२॥

[संस्कृत टीका]—'श्रवण पिशाचिनि मुण्डे' श्रवण पिशाचिनि मुण्डे इति पदम् । 'स्वाहान्तः' स्वाहाशब्दान्त्यः । पुनः कथम्भूतम् ? 'प्रणवपूर्वकोच्चार्यः' उँकारमादि कृत्वोच्चारितः । 'सिद्धयति च लक्ष जाप्यात्' लक्ष प्रमाण जाप्यात् सिद्धि प्राप्नोति । 'कर्णपिशाचीत्ययं मन्त्रः' अयं मन्त्रः कर्णपिशाची नाम स्यात् ॥२२॥

मन्त्रोद्धार :—उँ[१] श्रवणपिशाचिनि मुण्डे ! स्वाहा ॥

[हिन्दी टीका]—प्रणव पूर्वक ॐ और अंत में स्वाहा लिखे, श्रवणपिशाचिनिमुण्डे को लिखे । मंत्र का एक लक्ष जाप करने से कर्णपिशाची मंत्र सिद्ध होता है ॥२२॥

मंत्रोद्धार :—ॐ श्रवणपिशाचिनि मुण्डे स्वाहा ।

मन्त्र परिजप्त कुष्टं हृन्मुखकर्णाङ्घ्रियुगलमालिप्य ।

सुप्तस्य कर्णमूले कथयति यच्चिन्तितं कार्यम् ॥२३॥

[संस्कृत टीका]—'मन्त्र परिजप्त कुष्टं' कर्णपिशाचिनी मन्त्रेणैक विंशतिवाराभिमन्त्रितं कुष्टं उदकपेषितम् ।' हृन्मुखकर्णाङ्घ्रियुगलमालिप्य' एतेनोक्तेन पिष्ट कुष्टेन हृदयवदन श्रवणयुगलपादयुगलानि लेपयित्वा । 'सुप्तस्य' निद्रितस्य । 'कर्णमूले' श्रवणमूले । 'कथयति' वदति । 'यच्चिन्तितं कार्यं यद् अतीतानागतवर्त्तमानेप्सितं प्रयोजनम् ॥२३॥

[हिन्दी टीका]—मंत्रवादी इस मंत्र से कूठ को २१ बार मंत्रित करके उसको पीसकर कर हृदय, मुख दोनों कानों पर दोनों पैरों पर लगाकर सोवे तो कर्णपिशाचिनी देवी सोते समय चिन्तित कार्य को कान में कहती है ॥२३॥

मलयूंकार[२] चतुर्दश कलान्वितं कूटबीजकं विलिखेत् ।

शिखिवायुमण्डलस्थं सनामखरताडपत्रगतम् ॥२४॥

---

१. उँ ह्रीं श्रवण पिशाचिनी इति ख पाठः ।

२. मलवयूंकार इति ख पाठः ।

सुन्दरी यंत्र चित्र नं. ३९,

[संस्कृत टीका]–'मलयूंकार चतुर्दशकलान्वितं' मश्च लश्च यूंकारश्च चतुर्दशकला च औकारः तैः 'अन्वितम्' आवृतं मलयूंकारचतुर्दशकलान्वितम्। कम्? कूटबीजकं' क्षकारबीजकम्। एवं क्ष्म्ल्व्र्यौं ईदृशं बीजम्। 'विलिखेत्' एतद् बीजाक्षरं लिखेत्। कथम्? 'शिखिवायुमण्डलस्थं' अग्निपुरवायुपुरमध्यस्थितम्। पुनरपि कथम्भूतम्? 'सनामखरताडपत्रगतम्' देवदत्तनामान्वितखरताडपत्रे स्थितम् ।।२४।।

[हिन्दी टीका]–नाम सहित क्ष्म्ल्व्र्यूं पिंडाक्षरों को लिखकर ऊपर से चौदह स्वर अक्षरों को लिखे, और अग्नि मंडल से और वायु मंडल से वेष्टित कर दे। इसको ताड़पत्र पर लिखे ।।२४।।

मार्तण्ड स्नुहि दुग्धं त्रिकटुकहयगन्धसद्मभवधूमैः।
आलिप्य ललाटस्थं गृहिणां कुरुते गृहावेशम् ।।२५।।

[संस्कृत टीका]–'मार्तण्डस्नुहिदुग्धं' अर्कक्षीरं, स्नुहीक्षीरम्। 'त्रिकटुकं' प्रसिद्धम् 'हयगन्धा' अश्वगन्धा, 'सद्मभवधूमैः' गृहभव धूमैः। इत्यादिद्रव्यैः 'आलिप्य' तत्पत्रमालिप्य। 'ललाटस्थं' भालस्थम्। केषाम्? 'गृहिणां' गृहीत पुरुषाणाम्। 'कुरुते' करोति। कम्? 'गृहावेशम्' गृहावतारम् ।।२५।।

[हिन्दी टीका]–इस यंत्र को अकोवे का दूध, चार धारी वाले थूअर का दूध, त्रिकुट (सोंठ, काली मिरच और पीपल) असगंध, घर के धुआं से बनाकर ग्रह से पकड़े हुए के मस्तक पर रखने से ग्रह दूर हो जाता है ।।२५।।

ग्रह शोधन यंत्र चित्र नं. ४० देखें।

इसी को पद्मावती उपासना में गुप्त लक्ष्मी शोधन यंत्र कहा है।

धनदर्शक दीपक

कुनटीगन्धकतालकचूर्णं कृत्वा सितार्कतूलेन।
संवेष्टय पद्मनालकसूत्रेण च वर्तिरिह कार्या ।।२६।।

[संस्कृत टीका]–'कुनटी' मनः शिला, 'गन्धकः' प्रसिद्धः, 'तालकम्' गोदन्तचूर्णम्, 'कृत्वा' एतेषां द्रव्याणां चूर्णं कृत्वा। 'सितार्कतूलेन' श्वेतविफलोद्भवतूलेन। 'संवेष्टय' तच्चूर्णं तत्तूलमध्ये सम्यग्वेष्टयित्वा, केवलं तेन 'पद्मतालकसूत्रेण च' पद्मनालोद्भवसूत्रेण परिवेष्टय च। 'वर्तिरिह कार्या' अनेन प्रकारेण वर्तिरिह कर्तव्या ।।२६।।

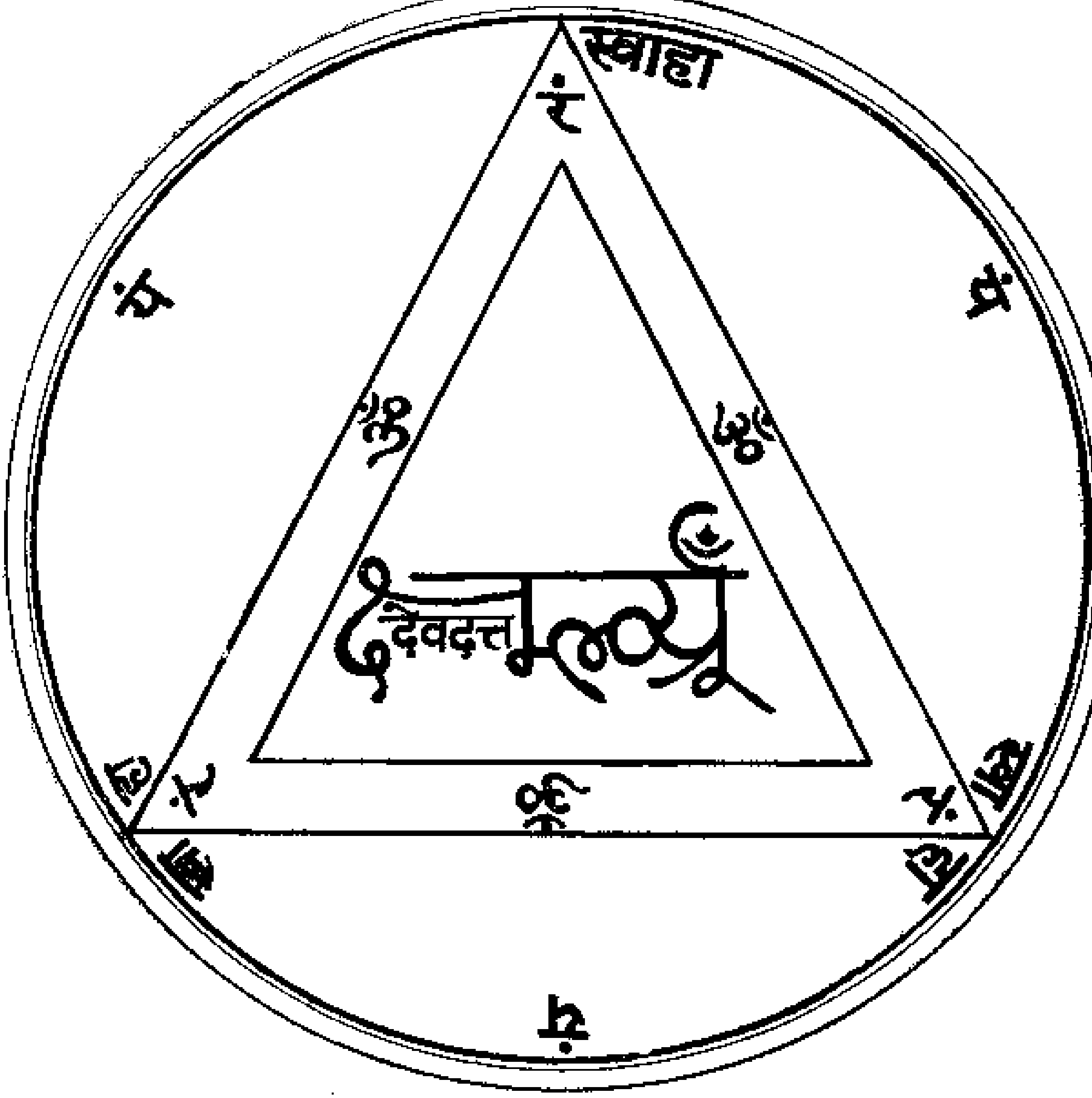

गुप्तलक्ष्मी शोधनयंत्र
(क) ग्रह शोधन यंत्र नं. ४०

[हिन्दी टीका]–मनशिल, गंधक [गोरोचन] और हरिताल का चूर्ण बनावे, फिर सफेद आर्क की रूई और कमल नाल के तागे को मिलाकर बत्ती बनावे ॥२६॥

साकङ्गु तैल भाव्या तया प्रदीपं विबोधयेन्मन्त्री ।
यत्राधो मुख मगम द्दीपस्तत्रास्ति वसुराशिः ॥२७॥

[संस्कृत टीका]–साकङ्गु तैल भाव्या, सा कृता वर्तिः, कङ्गु तैलेन भावनीया तया एवं विध वर्त्या, प्रदीपं प्रकाशितद्दिपम् विबोधयेत्, प्रज्वालयेत् । कः मन्त्री मन्त्रवादी, यत्राधो मुख मगम द्वीपः तत्र यस्मिन् स्थले तद्दीपः अधोमुखं गच्छति, तत्रास्ति वसुराशिः, तस्मिन् स्थले सुवर्णराशिरस्तीति ज्ञातव्यम् ॥२७॥

[हिन्दी टीका]–उस बत्ती को कागनी के तेल में भिगोकर दीपक को जलावे, वह दीपक जहाँ नीचे को मुखवाला हो जावे वहीं धन की राशि जाननी चाहिये ॥२७॥

विनयावि प्रज्वलित ज्योतिर्द्दिशायां मरुप्रभोऽन्तपदम् ।
प्रपठन् मनसा मन्त्रं प्रदीपमालोकयेन्मन्त्री ॥२८॥

[संस्कृत टीका]–'विनयादि' ॐकारपूर्वम् 'प्रज्वलित ज्योतिर्द्दिशायाम्' इति पदम् । पुनः कथम्भूतम् ? 'मरुप्रभोऽन्तपदम्' स्वाहा शब्दान्वितम् । 'प्रपठन् मनसा मन्त्रं' एवं विशिष्ट मन्त्रं मानसेनोच्चारयन्[1] 'प्रदीपं' प्रकृष्टं दीपम् । 'आलोकयेत्' विलोकयेत् । कः ? 'मन्त्री' मन्त्रवादी ॥२८॥

मन्त्रोद्धार :–'ॐ ज्वलितज्योतिर्दिशायां' स्वाहा । इयं दीपवर्तिः अश्वखुरे छुरिकायां वा प्रतिबोध्य संस्थाप्यावलोकनीया ॥

[हिन्दी टीका]–दीपक की बत्ती जलाते समय उक्त मंत्र का शुद्ध उच्चारण करे । दीपक को बत्ती सहित घोड़े की नाल अथवा घोड़े के खुर (सुम) पर रखे अथवा लोहे की छुरी पर रखे और ध्यान लगाकर, एकाग्रचित्त से देखे ॥२८॥

गणितनिमित्त

प्रायोर्वीशनदीनवग्रहनग व्याधि प्रसूनाक्षरा
ण्येकीकृत्य नखान्वितं त्रिगुणितं तिथ्या पुनर्भाजितम् ।

---

1. ॐ ह्रीं प्रज्वलित इति ख पाठः ।

ब्रूयादुद्धरिताच्छुभाशुभफलं वैषम्य साम्येसुधी
रेतत् तथ्यमिहोदितं मुनिवरैर्भव्याब्जधर्मांशुभिः ।।२९।।

[संस्कृत टीका]—'प्राय' बालयुववृद्धेति त्रिविधप्राय मध्ये नामैकम्, 'उर्वीश' सार्वभौमानां राज्ञां मध्ये नामैकं, 'नदी' गङ्गादिमहानदीनां मध्ये नामैकं, 'नवग्रह' आदित्यादिनवग्रहाणां मध्ये नामैकम् 'नग' मन्दरादिपर्वतानां मध्ये नामैकं, 'व्याधि' वातपित्तश्लेष्मोद्भवानां प्रश्नकथिताक्षर संख्याम् । 'एकीकृत्य' तानि सर्वाण्यप्येकत्राङ्कं, कृत्वा । 'नखान्वितं' तदङ्कराशिमध्ये विंशत्यङ्कं योजयित्वा । 'त्रिगुणितं' तत् सप्तराशि त्रिभिर्गुणितं कृत्वा, 'तिथ्या पुनर्भाजितम्' पुनः पश्चात् त्रिगुणित राशि पञ्चदशभिः संख्यैर्विभज्य । 'ब्रूयात्' कथयेत् । कस्मात् । 'उद्धरितात्' भागावशेषात् । किं ? 'शुभाशुभफलं' शुभफलमशुभफलं च । कस्मिन् ? 'वैषम्य साम्ये' विषमाङ्के शुभ फलं ब्रूयात्, समाङ्के विरुद्ध फलं ब्रूयात् । कः ? 'सुधीः' धीमान् । 'एतत् तथ्यं' एतत् प्रश्न निमित्तं निश्चितं सत्यम् । 'इह' अस्मिन् कल्पे । 'उदितं' प्रतिपादितम् । कैः ? मुनिवरैः मुनि वृषभैः । कथम्भूतैः ? भव्याब्जधर्मांशुभिः भव्या एव अब्जानि तेषां धर्मांशुरादित्यस्तद्वते र्मुनिभिः इति प्रश्नः ।।२९।।

[हिन्दी टीका]—बालक, युवा और वृद्ध इन तीन में से एक का नाम, चक्रवर्तियों में से किसी एक का नाम, गंगादि महानदियों में से किसी एक का नाम, नवग्रहों में से किसी एक का नाम, मेरू आदि पर्वतों में किसी एक का नाम, वात, पित्त, कफ व्याधाओं में से किसी एक का नाम, नाना प्रकार के फूलों में से किसी एक का नाम, बालक से लेकर फूल तक के नाम की और प्रश्नाक्षर की संख्या इन दोनों को एकत्र करके, उन एकत्र संख्या में २० संख्या को और जोड़कर फिर उसको त्रिगुणित करे, त्रिगुणित करने के बाद पन्द्रह अंक से भाग करे, जो शेष बचे उससे शुभाशुभ फल को जाने, यदि शेष सम अक्षर आवे तो विरुद्धफल होगा, यदि विषम संख्या आवे तो शुभ फल होगा, यह निमित ज्ञान रूपी प्रयोग भव्यरूपी कमलों को सूर्य के समान खिलाने वाले उत्तम २ मुनियों ने कहा है । यह प्रश्न निमित निश्चित ही सत्य होता है ।।२९।।

युद्ध में अर्द्धेन्दुत्रिशुलयंत्र ज्ञान

अर्द्धेन्दु रेखाग्रगतं त्रिशूलं मध्ये च सम्यक्प्रविलिख्य धीमान् ।
ऋक्षेऽमावस्याप्रतिपद्दिने तु यस्मिन् मृगाङ्को व्यवतिष्ठतेऽसौ ।।३०।।

[संस्कृत टीका]—'अर्द्धेन्दु रेखाग्रगतम्' अर्द्ध चन्द्राकार रेखाग्रस्थितम् । किं तत् ? 'त्रिशूलम्' त्रिशूलाकारम्, न केवल चन्द्राकाराग्रगतं त्रिशूलम् । 'मध्ये च' तदर्धचन्द्राकार रेखामध्येऽपि च त्रिशूलम् । 'सम्यक्प्रविलिख्य' शोभनं प्रकर्षेण लिखित्वा । कः ? 'धीमान्' बुद्धिमान् । 'ऋक्षे' नक्षत्रे । 'अमावस्या प्रतिपद्दिने तु' अमावस्या-निवर्तमान प्रतिपद्दिने तु । 'यस्मिन् मृगाङ्कः' असौ चन्द्रमा प्रतिपद्दिने यस्मिन् ऋक्षे अवतिष्ठते' सन्तिष्ठते ।।३०।।

[हिन्दी टीका]—पहले अर्ध चंद्राकार रेखा बनावे, फिर उसके अग्रभाग के मध्य में सम्यक् प्रकार त्रिशूलाकृति बनाकर, अमावस्या की एकम के दिन चंद्रमा जिस नक्षत्र में रहे, उस नक्षत्र को त्रिशूलाकृति के अग्रभाग में लिखकर, उस नक्षत्र को आगे करके ।।३०।।

कृत्वा तदादिं विगणय्य युद्धे विन्द्यात् त्रिशूलाग्रगतेषु मृत्युम् ।
मार्तण्ड संख्येषु जयं च तेषु पराजयं षट्सु बहिः स्थितेषु ।।३१।।

[संस्कृत टीका]—'कृत्वा तदादिं' तत्प्रतिपद्दिने यस्मिन् नक्षत्रे मृगाङ्कस्तिष्ठति तं नक्षत्रं त्रिशूलरेखाग्रे संस्थाप्य तन्नक्षत्रमादिं कृत्वा । 'विगणय्य', क्व ? 'युद्धे', यस्मिन् दिने युद्धे यस्य युध्यमानस्य पुरुषस्य जन्मनक्षत्रं यत्र लभ्यते तत्पर्यन्तं गणयेत् । 'त्रिशूलाग्रगतेषु मृत्युम्' जन्मनक्षत्रं त्रिशूलाग्रगतं यदा भवति तदा मृत्युम् । विन्द्यात्' जानीयात् । 'मार्तण्ड संख्येषु जयं च तेषु' अर्द्धचन्द्राकाररेखाभ्यन्तरगत द्वादश-र्क्षेषु तेषु जयं स्यात् । 'पराजयं षट्सु बहिः स्थितेषु' अर्धचन्द्राकाररेखाबहिः स्थितेषु षडृक्षेषु पराजयः स्यात् ।।३१।।

।। इति युद्ध प्रकरणेऽर्द्धेन्दुरेखा चक्रम् ।।

[हिन्दी टीका]—उन नक्षत्रों को त्रिशूल के अग्र भाग पर स्थापन कर उन नक्षत्रों को आदि करके, गणना करे । युद्ध को जाते समय मनुष्य का जन्म नक्षत्र इनमें से जिस स्थान पर हो, उससे फल जानना चाहिये । यदि जन्म नक्षत्र त्रिशूलों के अन्दर पड़े तो मृत्यु हो, यदि वह नक्षत्र मध्य के बाहर नक्षत्रों में से कोई हो, तो विजय हो अथवा वह बाहर अर्थात् अर्ध चन्द्राकार रेखा के बाहर छः नक्षत्रों में से किसी स्थान पर पड़े तो पराजय हो ।।३१।। युद्ध में अर्द्धेन्दु त्रिशूल चक्र यंत्र चित्र नं० ४१ देखें ।

गर्भ में पुत्र है या पुत्री

दिशि विदिशि तदुभयान्तरवर्तिभ्यां दिशतु पृच्छके मन्त्री ।
क्रमशो बालं बालां नपुंसकं पूर्णगर्भिण्याः ।।३२।।

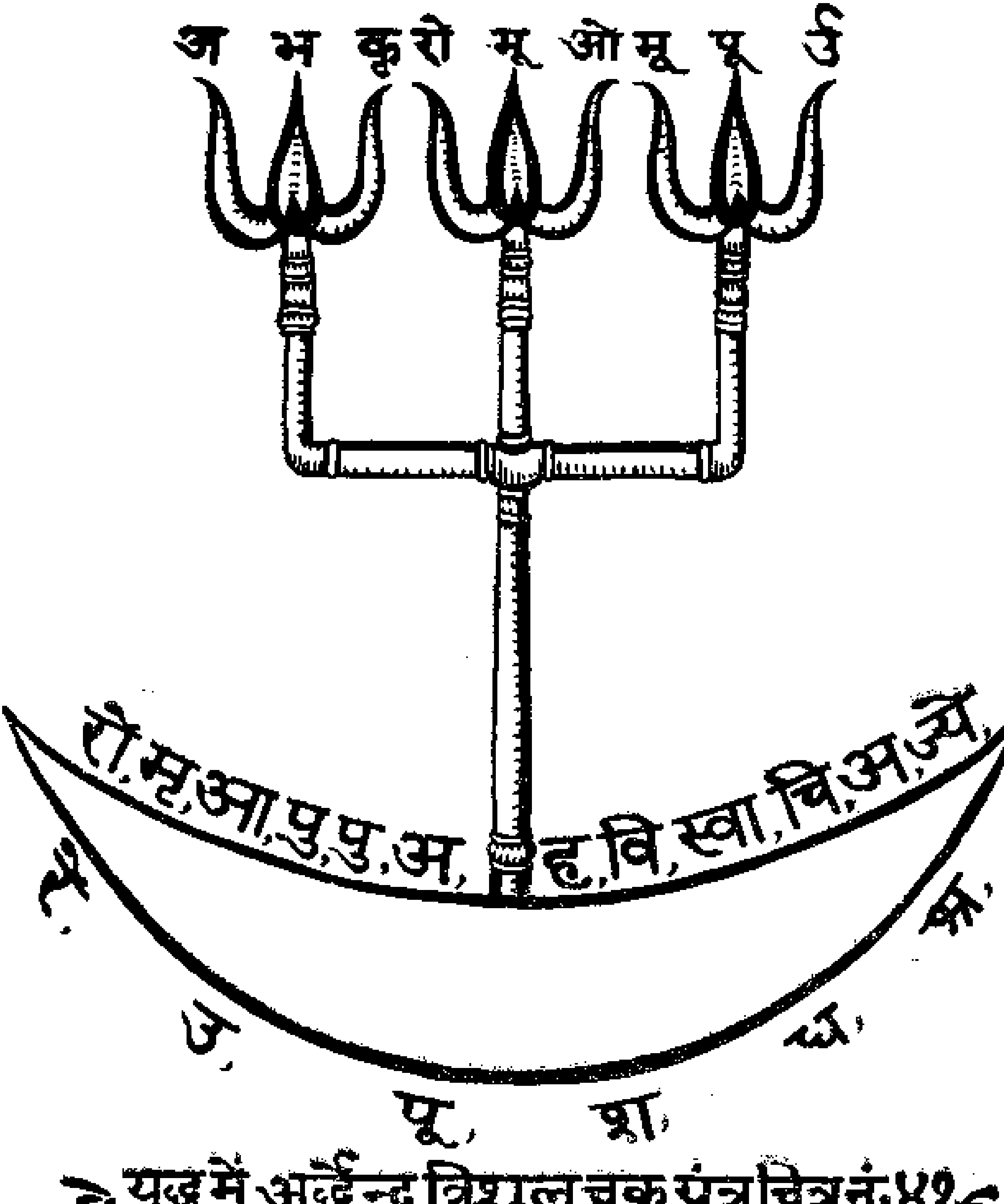

→ युद्ध में अर्द्धेन्दु त्रिशूल चक्र यंत्र चित्र नं. ४१ ←

[संस्कृत टीका]—'दिशि विदिशि' दिशासु विदिशासु। 'तदुभयान्तर वर्तिभ्यां' तदुभयपार्श्ववर्तिभ्यां तद्दिग्विदिग्भ्यां उभयपार्श्वस्थितानाम्। 'दिशतु' कथयतु। 'पृच्छके' प्रश्नकारि पुरुषे। कः ? 'मन्त्री' मन्त्रवादी। कथम् ? 'क्रमशः' यथाक्रमम्। 'बालं बालां नपुंसकम्' दिशि पृच्छके बालं, विदिशि पृच्छके कुमारीं दिशतु, तद्दिग्विदिग्भ्यां मध्येवर्तिनि प्रच्छके नपुंसकं दिशतु। कस्याः ? 'पूर्णगर्भिण्याः सम्पूर्णगर्भिण्याः ॥३२॥

[हिन्दी टीका]—प्रश्नकार मनुष्य जिस दिशा या विदिशा में रहकर महिने समाप्त हो चुके हैं ऐसी गर्भिणी स्त्री के लिये प्रश्न करे तो मंत्रवादी अनुक्रम से इस प्रकार उत्तर दे, प्रश्नकर्त्ता दिशाओं की ओर रहकर प्रश्न करे तो पुत्र होगा, विदिशाओं में रहकर प्रश्न करे तो पुत्री होगी और दिशा विदिशा के मध्यम में रहकर प्रश्न करे तो नपुंसक उत्पन्न होगा ॥३२॥

स्त्री अथवा पुरुष को पहले किसकी मृत्यु होगी ?

वर्णमात्राश्च दम्पत्योरेकीकृत्य त्रिभाजिताः।
शून्येनैकेन मृत्पुंसो नार्या द्वयङ्केन निर्दिशेत् ॥३३॥

[संस्कृत टीका]—'वर्णमात्राश्च' वर्णाः ककारादिहकारपर्यन्ताः, मात्राश्च अकरादि षोडशस्वराः। कयोः ? 'दम्पत्योः' स्त्रीपुंसोः। 'एकीकृत्य' तयोर्नामवर्णमात्राश्च पृथक्पृथक् विश्लेष्य ताः सर्वा एक स्थाने कृत्वा। 'त्रिभाजिताः' तां राशिं त्र्यङ्केन विभाजिताः। 'शून्येनैकेन, तद्भागोद्धरितशून्येन एकेन च। 'मृत्पुंसः' पुरुषस्य मृत्युः। 'नार्या द्वयङ्केन' तदुद्धरित द्वयङ्केन नार्या मृत्युम्। 'निर्दिशेत्' कथयेत् ॥३३॥

[हिन्दी टीका]—स्त्री और पुरुष के नामों के व्यंजन और स्वरों को अलग-अलग लिखकर उनकी गिनती करे, फिर तीन का भाग दे। यदि शून्य शेष रहे, तो अथवा एक रहे तो पुरुष की पहले मृत्यु होगी, यदि दो शेष रहे, तो स्त्री की मृत्यु होगी ॥३३॥

इत्युभयभाषा कवि शेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते भैरव पद्मावती कल्पे निमित्ताधिकारः अष्टमः परिच्छेदः ॥८॥

श्री उभय भाषा कवि विरचित भैरव पद्मावती कल्प का निमिताधिकार की हिन्दी भाषा नामक विजया टीका का समाप्त।

(अष्टम अध्याय समाप्तः)

नवमः स्त्र्यादिवश्यौषधपरिच्छेदः

मोहनतिलक

लवंगं कुङ्कुमोसीरं नागकेसरराजिकाः[१] ।

एलामनः शिलाकुष्टं सगरोत्पलरोचनाः ।।१।।

[संस्कृत टीका]—'लवङ्ग' देवकुसुमम् । 'कुङ्कुमम्' वाल्हीकम् । 'उसीर' श्वेतवालकम् । 'नागकेसरं' चापेयम् । 'राजिकाः' श्वेत सर्षपाः । 'एला' पृथ्वीका । 'मनः शिला' कुनटी । 'कुष्टम्' वाप्यम् । 'लगरं' पिण्डीतगरम् । 'उत्पलं' श्वेतकमलम् । 'रोचना' पिङ्गला ।।१।।

[हिन्दी टीका]—लवंग, केशर, चन्दन, नागकेशर, सफेद सरसों, इलायची, मनशिल, कूठ, तगर सफेद कमल और गोरोचन ।।१।।

श्री खण्ड तुलसी पिक्वी[२] पत्रकं कुटजान्वितम् ।

सर्वं समानमादाय नक्षत्रे पुष्यनामनि ।।२।।

[संस्कृत टीका]—'श्री खण्डं' मालाश्रयम् । 'तुलसी'[३] सरसा । 'पिक्वी' गन्ध द्रव्यम् । 'पत्रकं' प्रसिद्धम् । 'कुटजान्वितम्' इन्द्रयवान्वितम् । 'सर्वं समानमादाय' एतत् सर्वं समानभागं गृहीत्वा । 'नक्षत्रे पुष्यनामनि' पुष्यनाम्नि नक्षत्रे ।।२।।

[हिन्दी टीका]—लाल चंदन, तुलसी, पिक्वा (गन्ध द्रव्य) पत्राखा कुटज, (चंदन, तुलसी, कपूर, केशर, कुटज) (चंदन, केशर, कपूर, कस्तूरी, कुटज) सबको बराबर पुष्य नक्षत्र में खरीदकर लावे ।।२।।

कन्यया पेषयेत् सर्वं हिम भूतेन वारिणा ।

कुरु चन्द्रोदये जाते तिलकं जनमोहनम् ।।३।।

[संस्कृत टीका]—'कन्यया' कुमार्या । 'पेषयेत्' सञ्चूर्णयेत् । 'सर्वं' तत् सर्वमौषधम् । केन ? 'हिमभूतेन वारिणा' हिमाज्जनितोदकेन । 'कुरु' । कस्मिन् ? 'चन्द्रोदये जाते', अमृतोदये जाते । किं ? 'तिलकम्' विशेषकम् । कथम्भूतम ? 'जनमोहनम्' जनवश्यकरम् ।।३।।

---

१. सर्षपा इति ग पाठः ।

२. पिक्का इति ग पाठः ।

३. सुरभा इति ग पाठः ।

[हिन्दी टीका]—कुमारी कन्या से धतूरे के रस में सबको पिसवाकर, ओले के पानी से, चंद्रोदय होने पर तिलक करने से संसार मोहित होता है ॥३॥

स्त्रीवश्यपान

बर्हिशिखासित गुञ्जागोरम्भानुकीटस्य मलम् ।
निज पञ्चमलोपेतं चूर्णं वनितां वशीकुरुते ॥४॥

[संस्कृत टीका]—'बर्हिशिखा' मयूरशिखा, 'सितगुञ्जा' श्वेतगुञ्जा 'गोरम्भा' प्रसिद्धा । 'भानुकीटकस्य मलं', अर्कपत्र कीटकविट् । 'निजपञ्चमलोपेतं' स्वकीयपञ्चमलोपेतम् । 'चूर्णं' एतद् द्रव्यान्वितं ताम्बूलचूर्णम् । 'वनितां' स्त्रियम् । 'वशी कुरुते' वशी करोति ॥४॥

[हिन्दी टीका]—मयूरशिखा, सफेद गुंजा, गोरखमुंडी (गोभी), आक का पत्ता, कीट का मल और अपने पाचों मलों का चूर्ण, पान के अन्दर खिलाने से स्त्री वशीकरण (मोहित) होती है ॥४॥

स्त्रीवश्यगुटिका

करवीर भुजङ्गाक्षीजारीदण्डीन्द्रवारुणी ।
गोबन्धिनी सलज्जानां विधाय वटिका बहूः ॥५॥

[संस्कृत टीका]—'करवीर' रक्ताश्वमार जटा, 'भुजङ्गाक्षी' सर्पाक्षीजटा, 'जारी' पुत्रं जारी, 'दण्डी' ब्रह्मदण्डीजटा, 'इन्द्र वारुणी' विशाल जटा, 'गोबन्धिनी' अधः पुष्पी, प्रियङ्गु रित्येके, 'सलज्जानां' समन्ताज्जटान्वितानां एतेषां द्रव्याणां चूर्णं संपेष्य। 'विधाय वटिका बहूः' बहूरपि वटिकाः कृत्वा ॥५॥

[हिन्दी टीका]—लाल कनेर, भुजङ्गाक्षी, जटा, ब्रह्मदण्डी, इन्द्रायन, गोबन्धनी (गोखुरी) (अधोपुष्पी या प्रियंगु) लज्जावती के चूर्ण की गोलियां बनावे ॥५॥

वटिकाभिः समं क्षिप्त्वा लवणं शुभ भाजने ।
पक्त्वा स्वमूत्रतो दद्यात् खाद्ये स्त्रीजन मोहनम् ॥६॥

[संस्कृत टीका]—'वटिकाभिः समं क्षिप्त्वा' 'लवणम्' समुद्र लवणम् । क्व ? 'शुभ भाजने' मनोज्ञ भाण्डे । 'पक्त्वा' पाकं कृत्वा । कथम् ? 'स्वमूत्रतः' निज मूत्रतः । 'दद्यात् खाद्ये' अशनादिषु दद्यात् । 'स्त्रीजनमोहनं' स्यात् ॥६॥

[हिन्दी टीका]–उन गोलियों को नमक सहित एक बर्तन में डालकर अपने मूत्र में पकावे। इन गोलियों को भोजन आदि के साथ खिलाने से स्त्री वश में होती है ॥६॥

वश्यचूर्ण

मृत भुजग वदन मध्ये लज्जरिकां सन्निधाय सितगुञ्जाम्।
रुद्र जटा सम्मिश्रामाकृष्य दिनत्रयं यावत् ॥७॥

[संस्कृत टीका]–'मृतभुजग वदन मध्ये' पञ्चत्वप्राप्त कृष्ण सर्पास्यमध्ये। 'लज्जरिकां' समङ्गामूलम्। 'सन्निधाय' सम्यग्निधाय। 'सितगुञ्जां' श्वेतरक्तिकाम्। किं विशिष्टाम्? 'रुद्रजटासम्मिश्राम्' रुद्रजटासंयुक्ताम्। 'आकृष्य दिनत्रयं यावत्' एतन्मूलत्रयं तत्सर्पास्ये दिनत्रयं यावत् संस्थाप्य, पश्चात् 'आकृष्य' निष्कास्य ॥७॥

[हिन्दी टीका]–मरे हुये काले सांप के मुंह में लाजवंती, सफेद गुंजा और रुद्रजटा को रखकर इनको तीन दिन बाद निकाले ॥७॥

लाङ्गलिकायाः कन्दे गोमय लिप्ते परिक्षिपेच्चूर्णम्।
परिभाव्य शुनीपयसा स्वमलैः पञ्चाङ्ग सम्भूतैः ॥८॥

[संस्कृत टीका]–'लाङ्गलिकायाः कन्दे' कलिहार्याः कन्दं उत्कीर्य तद्द्वय सम्पुटमध्ये। कथम्भूते? 'गोमयलिप्ते' गोशकृता परिलिप्य। 'परिक्षिपेच्चूर्णम्' प्राक्कथितौषधत्रयकृतचूर्णं तत्कन्दमध्ये निक्षिपेत्। किं कृत्वा? 'परिभाव्य' तच्चूर्णं सम्यग्भावयित्वा। केन? 'शुनीपयसा' कृष्णशुनीदुग्धेन, न केवलं शुनिदुग्धेन भाव्यम्। 'स्वमलैः पञ्चाङ्ग सम्भूतैः' स्वकीयपञ्चाङ्ग जनित मलैरपि भावयित्वा ॥८॥

[हिन्दी टीका]–उस चूर्ण को काली कुतिया के दूध और अपने पांचों मलों में भावित करके गोबर से लिपे हुये कलिहारी के सम्पुट कन्द में डाले ॥८॥

पंचाङ्गमल

नेत्रश्रोत्रमलं शुक्रं दन्तजिह्वामलं तथा।
वश्यकर्मणि मन्त्रज्ञैः पञ्चाङ्गमलमुच्यते ॥९॥[1]

[संस्कृत टीका]–'नेत्रं' लोचनम्, 'श्रोत्रं' श्रवणम्, तयोर्मलम्। 'शुक्रं' बीजम्। 'दन्तः' रदनः, 'जिह्वा' रसना 'मलं' अनयोर्मलम्। 'तथा' तेन प्रकारेण।

---

१. क्षेपक : श्लोक :।

'वश्यकर्मणि' स्त्रीवश्यकर्मकरणे । 'मन्त्रज्ञैः' मन्त्रविद्भिः । 'पञ्चाङ्गमल मुच्यते' एवं पञ्चाङ्गमलमिति कथ्यते ।।९।।

[हिन्दी टीका]—आंख का मल, कान का मल, वीर्य, दन्तमल, जिह्वामल इन पांच प्रकार के मल का प्रयोग वश्यकर्म के लिये मंत्रवादियों ने कहा है ।।९।।

पक्त्वा चूर्णमिदं पश्चाज्जगद्वश्यकरं परम् ।
दद्यात् खाद्यान्नपानेषु स्त्रीपुंसोश्च परस्परम् ।।१०।।

[संस्कृत टीका]—'पक्त्वा' पाकं कृत्वा । 'चूर्णमिदम्' एतत्कथितचूर्णम् । 'पश्चात्' तदनन्तरम् । 'जगद्वश्यकर' सकलजनवश्यकरम् । 'परं' अतिशयेन । 'दद्यात्' ददातु । केषु ? 'खाद्यान्नपानेषु' खादन्नपानेषु । कयोः ? 'स्त्रीपुंसोश्च' स्त्रीपुरुषयोः । कथम् ? 'परस्परं' एकैकं तद्दद्यात् वशीभवति ।।१०।।

[हिन्दी टीका]—पहले कहे हुये चूर्ण को पकाकर स्त्री पुरुष को परस्पर खाने के पदार्थों में मिलाकर देने से वशीकरण होता है, सकलजन वशीकरण भी होता है ।।१०।।

वश्यदीपक

पञ्चपयस्तरुपयसा पीतवयण्डकरसेन परिभाव्य ।
तिलतैलदीपवर्तिस्त्रिभुवनजन मोहकृद्भवति ।।११।।

[संस्कृत टीका]—'पञ्चपयस्तरुपयसा' न्यग्रोध-उदुम्बर-अश्वत्थ-प्लक्ष-वटी, वटस्थाने वंदुलमिति वदन्ति केचित् इति पञ्चक्षीरवृक्षक्षीरैः । न केवलं पञ्चक्षीर-वृक्षक्षीरैरेव 'पीतवयण्डकरसेन' ।।११।।

[हिन्दी टीका]—दूध के पांच प्रकार के पेड़ों का दूध (बड, गूलर, पीपल, पिलखन और अंजीर इन पांचों पेड़ों का दूध) और अंडे के रस में बन कपास, आक, कमलसूत्र, सेंभल की रुई और पटवन (सन) की बनी हुई (पंचसूत्री वत्तिका) बत्ती को भावना देकर काले तिलों का दीपक जलाने से तीनों लोक वश में हो जाते हैं ।।११।।

वशीकरण प्रयोग

विषमुष्टिकनकहलिनीपिशाचिका चूर्णमम्बु देहभवम् ।
उन्मत्तक भण्डगतं क्रमुकफलं तद्वशं कुरुते ।।१२।।

[संस्कृत टीका]–'विषमुष्टिः' विषवोडिका । 'कनकम्' कृष्णधत्तूरः 'हलिनी' कलिहलिनी 'पशाचिका' कपिच्छूका, 'चूर्णं' एतेषां चतुर्द्रव्याणां चूर्णम् । 'अम्बु देह भवम्' स्वमूत्रम् । 'उन्मत्तकभाण्डगतं' एतद् द्रव्याणां चूर्णं स्वमूत्ररहितं, कृष्णधतुरकफलभाण्डमध्ये दिनत्रयस्थितं, क्रमुकफलं, पूगीफलम्, तद्वशं कुरुते, तत्क्रमुकफलं, खादने (सति) स्त्री वशं करोति ।।१२।।

[हिन्दी टीका]–पोष्ट का डोड़ा (विषमुष्टि) कनक (काला धतूरा) कालि हरी हलिनि, पिशाचिका (छोटी जटामांसी) को अपने मूत्र में मिलाकर उन्मत्तक (सफेद धतूरा) को बर्त्तन में सुपारी सहित रखने से वशीकरण होता है ।।१२।।

क्रमुकफलं मुखनिहितं तस्माद्दिवसत्रयेण संगृह्य ।
कनकविषमुष्टिहलिनी चूर्णैः प्रत्येकं संक्षिप्य ।।१३।।

[संस्कृत टीका]–'क्रमुकफलं' पूगीफलम् । 'मुखनिहितं' सर्पास्ये स्थापितम् । 'तस्मात्' सर्पमुखात् । 'दिवसत्रयेण संगृह्य' तत्क्रमुकफलं दिनत्रयानन्तरं गृहीत्वा । 'कनकविषमुष्टिहलिनीचूर्णैः' धत्तूरकमल चूर्णम्, विषडोडिकाचूर्णं, हलिनी चूर्णम्' प्रत्येकं' पृथक्पृथक् 'संक्षिप्त्वा (प्य)' निक्षिप्य ।।१३।।

[हिन्दी टीका]–मरे हुऐ सर्प के मुंह में सुपारि को तीन दिन रख कर, काले धतूरे की जड़ का चूर्ण विषमुष्टि (विषटोड़िका) के चूर्ण और हलिनी (विशल्याकन्द) के चूर्ण के साथ पृथक्-पृथक पीस कर डाले ।।१३।।

खरतुरगशुनीक्षीरैः क्रमशः परिभाव्य योजयेत् खाद्ये ।
अबलाजन वशकरणं मदनक्रमुकं समुद्दिष्टम् ।।१४।।

[संस्कृत टीका]–'खरतुरगशुनी क्षीरैः' रासभाश्वशुनीक्षीरैः । 'क्रमशः' परिपाटया । 'परिभाव्य' भाव्यं कनकचूर्णं खरदुग्धेन भाव्यं, विषमुष्टि चूर्णं तुरगदुग्धेन भाव्यं, हलिनी चूर्णं शुनीदुग्धेन भाव्यमिति क्रमेण तत्पूगीफलं दिनत्रयेण भावनीयम्, 'योजयेत् खाद्ये' एतत्प्रकारसिद्धं क्रमुकं सकलं ताम्बूले योजनीयम् । 'अबलाजन वशकरणं अनङ्गबाणनामधेयं क्रमुकम् । 'समुद्दिष्टं' सम्यक्कथितम् ।।१४।।

[हिन्दी टीका]–उस पीसे हुए द्रव्य को अर्थात् उस सुपारी को और धतूरे के चूर्ण को गधी के दूध में भावित करे, (विषमुष्टि) जहर कुचला के चूर्ण को घोडी के दूध में भावित करे, हलिनी चूर्ण को कुतिया के दूध के साथ भावित करे, उस सुपारी को तीन दिन भावना देनी चाहिये । इस प्रकार सिद्ध हुई सुपारी को खाद्य पदार्थ में खिलाकर अथवा पान के साथ खिलावे तो स्त्रीजन का वशीकरण होता है ।।१४।।

वश्य काजल

पुत्तंजारीकुङ्कुमशरपुङ्खीमोहनीशमीकुष्टम् ।
गोरोचनाहि केसरतगररुदन्ती च कर्पूरम् ।।१५।।

[संस्कृत टीका]—'पुत्तंजारी' प्रसिद्धा, 'कुङ्कुमं' काश्मीरम् 'शरपुङ्खी' श्वेतबाणपुङ्खी, 'मोहनी' वटपत्रिका 'शमी' केशहन्त्री, 'कुष्टं' कोष्टम् । 'गोरोचना' पिङ्गला, 'अहिकेसरं' नागकेसरम्, 'तगरं' पिण्डीतगरम्, 'रुदन्ती' प्रताता । 'कर्पूरं' चन्द्राग्वितम् ।।१५।।

[हिन्दी टीका]—पुत्रजारी, केशर, सरफोंका, मोहिनी, शमी, कूठ, गोरोचन, नागकेशर, तगर रुद्रवन्ति और कपूर ।।१५।।

कृत्वैतेषां चूर्णं यावकमध्ये ततः परिक्षिप्य ।
पङ्कजभवतन्तुवृता वर्तिः कार्या पुनस्तेन ।।१६।।

[संस्कृत टीका]—'एतेषां प्रागुक्तद्रव्याणां' । 'चूर्णं कृत्वा' चूर्णं विधाय । 'यावक मध्ये ततः परिक्षिप्य' तदनन्तरं तच्चूर्णं अलक्तकपटलमध्ये निक्षिप्य । 'पंङ्कजभवतन्तुवृता' पद्मनालिका जनितसूत्रेणावृता । 'वर्तिः कार्या' अनेन प्रकारेण वर्तिः कर्तव्या । 'पुनस्तेन' पश्चात् तेन वक्ष्यमाणेन ।।१६।।

[हिन्दी टीका]—इन सबका चूर्ण करके इनको अरुक्तक के पटल में रखकर और कमल सूत्र से लपेट कर इनकी बत्ती बनावे ।।१६।।

कारुकिकुच भवपयसा त्रिवर्णयोषास्तनक्षीरैः ।
परिभाव्य ततः कपिलाघृतेन परिबोधयेद्दीपम्[१] ।।१७।।

[संस्कृत टीका]—'कारुकिकुचभवपयसा' पञ्चकारुकीस्तनोद्भवदुग्धेन । 'त्रिवर्णयोषास्तस्तनक्षीरैः' ततः कारुकीकुचभवपयसोऽनन्तरं ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यस्त्रीणां स्तनदुग्धेन । 'परिभाव्य' प्राक्कृतवर्तिः तैर्दुग्धैर्भावयितव्या । 'ततः' भावनानन्तरं 'कपिलाघृतेन' कपिलाज्येन । 'परिबोधयेत्' प्रज्वालयेत् । कम् ? दीपम् ।।१७।।

[हिन्दी टीका]—फिर ब्राह्मण स्त्री का दूध, क्षत्रिय स्त्री का दूध, वैश्य स्त्री का दूध इन में उसको भावित करके कपिला गाय के घी में दीपक जलावे ।।१७।।

---

१. दीपः इति च पाठः ।

उभय ग्रहणे दीपोत्सवे च नवकर्परेऽञ्जनं धार्यम् ।
गोमयविलिप्त भूम्यां स्थित्वा मन्त्राभिषिक्तायाम् ॥१८॥

[संस्कृत टीका]—'उभयग्रहणे' सोमसूर्यग्रहणे। 'दीपोत्सवे च' अथवा दीपावलीपर्वणि। 'नवकर्परेऽञ्जनं धार्यम्' नवीनमृद्भाण्डकपाले 'अञ्जनं धार्यम्' कज्जलं ग्राह्यम्। 'गोमयविलिप्त भूम्यां' भूम्यपतितगोमयेन सम्मार्जितपृथिव्याम्। 'स्थित्वा' उषित्वा। कथम्भूतायाम्! 'मंत्राभिषिक्तायां' वक्ष्यमाणमन्त्रेणाऽभिषिक्त भूम्याम् ॥१८॥

मन्त्रोद्धार :—ॐ भूर्भूमि देवते ! तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॥ भूमिसंमार्जनमन्त्रः ॥[१]

ॐ नमो भगवते चन्द्रप्रभाय चन्द्रेन्द्र महिताय नयनमनोहराय हरिणि हरिणि सर्वं वश्यं कुरु कुरु स्वाहा ॥ कज्जलोद्धारणमन्त्रः ॥

ॐ नमो भूताय[२] समाहिताय कामाय रामाय ॐ चुलुचुलुगुलुगुलु नीलभ्रमरि नीलभ्रमरि मनोहरि नमः ॥ नयनाञ्जनमन्त्रः ॥

[हिन्दी टीका]—सूर्य ग्रहण अथवा चंद्र ग्रहण वा दीपमालिका को नवीन माटी के बर्तन में काजल को ग्रहण करना, गोबर से लिपी हुई और नीचे लिखे हुए मंत्र से अभिषिक्त की हुई पृथ्वी पर बैठ कर काजल को ग्रहण करना ॥१८॥

मंत्रोद्धार :—ॐ भूर्भूमि देवते तिष्ठ-२ ठः ठः ॥ इस मंत्र से भूमि का सम्मार्जन करे ।

ॐ नमो भगवते चन्द्रप्रभाय चंद्रेन्द्र महिताय नयन मनोहराय हरिणि-२ सर्वजन वश्यं कुरु-२ स्वाहा । इस मंत्र से कज्जल का उद्धार करे ।

ॐ नमो भूताय, (भूत भावनाय) समाहिताय कामाय रामाय ॐ चुलु-२ गुलु-२ नीलं भ्रमरि, मनोहरि, (नयन मोहिनी) नमः— इस मंत्र से आंख में अंजन (काजल) लगावे ॥

कज्जल रञ्जितनयने दृष्ट्वा तां वाञ्छतीह[३] मदनोऽपि ।
नरमप्यञ्जित[४] नयनं भूपाश्चास्तस्य यान्तिवशम् ॥१९॥

[संस्कृत टीका]—'कज्जलरञ्जितनयने' कज्जलेनाञ्जिते नेत्रे । 'दृष्ट्वा'

---

१. ॐ ऐं देवते ! 'कज्जलं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' कर्परामिमन्त्रणं । इति ख ग पाठः ।
२. भूतेशाय इति ख पाठः ।
३. वशयतीति मदनेपि इति ग पाठः ।
४. नरमप्यञ्जित नेत्रं भूपाश्चायान्ति तस्य वशम् ग पाठः ।

विलोक्य। 'तां' कामिनीं 'वाञ्छतीह मदनोऽपि' कामदेवोऽपि वशं याति। 'नरमप्यञ्जित नयनं' पुरुषमप्यञ्जितनयनं दृष्ट्वा। 'भूपाद्याः तस्य यान्ति वशं' तस्य कज्जलाञ्जित पुरुषस्य क्षत्रियाद्यास्तदञ्जनाद्वश्या भवन्ति ।।१६।।

[हिन्दी टीका]—इस काजल से युक्त आंखों को जो कोई देखता है वह वश में हो जाता है, स्त्री ने अपने आंखों में डाला तो पुरुष वश में होते हैं, अगर पुरुष आंखों में डालकर राजा के सामने जावे तो राजा भी वश में होता है ।।१६।।

पिशाचीपान

विषमुष्टिकनकमूलं रालाक्षतवारिणा ततः पिष्टम् ।
तद्रसभावितपत्रं पिशाचयत्युदर मध्यगतम् ।।२०।।

[संस्कृत टीका]—'विषमुष्टि:' विषडोडिका। 'कनकमूलं' धत्तूरमूलम्। 'रालाक्षतवारिणा' रालाक्षत धौतोदकेन। 'ततः पिष्टम्' तस्मात् पिष्टम्। 'तद्रसभावितपत्रं' तत्पिष्टौषधरसेन भावितं ताम्बूल पत्रम्। 'पिशाच सति' पिशाच इवाचरति। 'उदरमध्यगतं' जठरमध्यं गते सति पुरुषं पिशाचयति ।।२०।।

[हिन्दी टीका]—जहरी कुचला, काले धतूरे की जड़ को, कांगनी चांवल के धोवन के पानी में पीसकर उस रस में पान को भिगोकर, जिसको खिलावे, वह पिशाच के समान आचरण करे, अर्थात् उदर में प्रवेश करते ही पिशाच तुल्य आचरण करने लगता है ।।२०।।

शत्रुभयकरण काजल

चिक्कणिके केप्सितरूपापिशाचिका सार्द्र चितमषीमथिते ।
नृकपाले मातृगृहे काननकापसिकृतवर्त्या ।।२१।।

(संस्कृत टीका)—'चिक्कणिका' इलोठा, कर्णाट भाषायां उहाठा। ईप्सित रूपा' बहुरूपा, सरटविट्। 'पिशाचिका' कपिकच्छुका। 'सार्द्र चितमषीमथते' सार्द्र चितोद्भवमष्यां निर्मथिते। कस्मिन्? 'नृकपाले' नरकपाले। मातृगृहे' सप्तमातृकाणां गृहे। 'काननकापसिकृतवर्त्या' अरण्योद्भवकापसितूलेन निर्मितवर्त्या ।।२१।।

[हिन्दी टीका]—चिक्कणि सुपारी, मोम, कोंचको को पीसकर, उनको जंगली कपास में मिलाकर बत्ती बनावे, उस बत्ती से सप्तमातृका के गृहों में गिली चिता की स्याही से (काजल) मथे हुए मनुष्य के कपाल पर ।।२१।।

धार्यं कृष्णाष्टम्यामञ्जनमेतन्महाघृतोद्भूतम् ।
तेन त्रिशूलमञ्जनमपि कुर्यादङ्कभीत्यर्थम् ।।२२।।

[संस्कृत टीका]—'धार्यम्' धर्तव्यम् । 'कृष्णाष्टम्यां' कृष्णाष्टम्यां कृष्णचतुर्दश्यां वा । किम् ? 'अञ्जनं' कज्जलम् । 'एतत्' एतत्कज्जलम् । 'महाघृतोद्भूतम्' महाघृतोद्भवम् । 'तेन त्रिशूलं कुर्यात्' अनेन प्रकारेण कृतकज्जलेन न केवलं त्रिशूलं कुर्यात् । 'अञ्जनमपि कुर्यात्' नयनाञ्जनमपि करोतु । किमर्थम् ? 'अङ्कभीत्यर्थम्' एतदञ्जनं प्रति पक्षकस्य भयोत्पादनार्थम् ।।२२।।

तत्कज्जलोद्धार मन्त्र :—ॐ नमो भगवति ! हिडिम्बवासिनि ! अल्लल्लमांसप्पिये नहयलमंडल पइट्ठिए तुह रणमत्ते पहरणदुट्ठे आयासमंडि ! पायालमंडि सिद्धमंडि जोइणिमंडि सव्वमुहमंडि कज्जलं पडु[१] स्वाहा ।। प्राकृत मन्त्रः ।। कज्जलपातनं देशाग्यमुखेन कर्तव्यम् ।।

[हिन्दी टीका]—इस महाघृत से कृष्णपक्ष की अष्टमी अथवा चतुर्दशी को अञ्जन बनावे, इस काजल को आंखो में भी डाले और मस्तक पर त्रिशूल बनावे । इसे जो कोई देखेगा, वह महा भयभीत होगा ।।२२।।

कज्जलोद्धार मंत्र :—ॐ नमो भगवति हिडिम्बवासिनि अल्लल्लमांस प्रिये नहयल मंडलपइट्ठिए तुह रणमत्ते पहरणादुट्ठे आयासमंडि, पायालमंडि सिद्धमंडि, जोयणि मंडि सव्वमुहमंडि कज्जलं पडउ स्वाहा ।।

अदृश्यगुटिका

चित वह्निदग्धभूतद्रुमय शाखामषीं समाहृत्य ।
अंकोल्लतैलसूतककृष्णबिडाली जरायुश्च ।।२३।।

[संस्कृत टीका]—'चितवह्निदग्धभूतद्रुमयशाखामषीं' चिताग्निज्वलितकलिद्रुमदक्षिणदिग्भवशाखा जनितमषीम् । 'समाहृत्य' सम्यगाहृत्य । 'अङ्कोल्लतैलं' अङ्कोल्लबीजोद्भवतैलं । 'सूतकम्' पारदरसम् । 'कृष्णबिडालीजरायुश्च' कृष्णमार्जारी जरायुमपि ।।२३।।

[हिन्दी टीका]—चिता की अग्नि से जले हुए बहेड़े के वृक्ष की दक्षिण दिशा

---

१. हुं फट् घे घे स्वाहा इति ख पाठः ।

की स्याही को लेकर, उसको अरंडी के तेल, पारा और काली बिल्ली की जरायु सहित ।।२३।।

धूकनयनाम्बुमर्दितगुलिकां कृत्वा त्रिलोह सम्मठिताम् ।
धृत्वा तामात्ममुखे पुरुषोऽदृश्यत्वमायाति ।।२४।।

[संस्कृत टीका]—'धूकनयनाम्बुमर्दित गुलिकां कृत्वा' उलूकनेत्राम्बुमर्दितभूतद्रुमोद्भवमण्यादि चतुर्द्रव्याणां गुटिकां कृत्वा । 'त्रिलोह सम्मठितां' ताम्रतारसुवर्णाख्यैः अर्कषोडश वह्निभिरिति भागकृत त्रिलोहेने सम्यग्मठितां कृत्वा । 'धृत्वा तामात्ममुखे' तां त्रिलोहमठितां गुलिकां स्वमुखे धारयित्वा । 'पुरुषः' पुमान् । 'अदृश्यत्वम्' अदृश्यभावम् । 'आयाति' आगच्छति ।।२४।।

[हिन्दी टीका]—उल्लू के आंखों के पानी में गोली बनाकर, फिर उसको त्रिलोह के साथ सोलह अग्नि देकर अपने मुख में रक्खे तो अदृश्य हो जावे ।।२४।।

सितशरपुंखामूलं धृत्वा सितकोकिलाक्ष बीजं च ।
वनवसलारसपिष्टं वीर्यस्तम्भं मुखे संस्थम् ।।२५।।

[संस्कृत टीका]—'सितशरपुंखामूलं' श्वेतबाणपुङ्खामूलम् । धृत्वा' गृहीत्वा । 'सतकोकिलाक्षबीजं च' श्वेतकोकिलाक्षबीजानि च । 'वनवसलारसपिष्टम्' अरण्योद्भव (उ) पोदकीरसेन पेषितं वनवला इति, कर्णाटभाषायां कासलि । 'वीर्यस्तम्भं' शुक्रस्तम्भम् । 'मुखे संस्थम्' पुरुष मुखे संस्थम् ।।२५।।

[हिन्दी टीका]—सफेद सरफोंके की जड़ और सफेद कोकिलाक्ष के बीजों को जंगली पोदीने के रस में पीस कर गोली बनावे, उस गोली को मुख में रखे तो वीर्य स्तम्भन होता है ।।२५।।

वीर्यस्तंभक अस्थि

कृष्णवृषदंशदक्षिणजङ्घायाः शल्यखण्डमादाय ।
बद्धं कटिप्रदेशे वीर्यस्तम्भंनृणां कुरुते ।।२६।।

[संस्कृत टीका]—'कृष्ण वृष दंशदक्षिण जंघायाः' कृष्णबिडालदक्षिण जङ्घायाः । 'शल्य खण्डं' तदस्थिखण्डम् । 'आदाय' गृहीत्वा । 'बध्दं कटि प्रदेशे' पुंसः कटि प्रदेशे बध्दम् । 'नृणां' मनुष्याणाम् । वीर्यस्तम्भं 'कुरुते' करोति ।।२६।।

[हिन्दी टीका]—काले बिलाव के सीधे पांव की हड्डी को कमर में बांधने से वीर्य स्तंभन होता है ।।२६।।

वीर्यस्तंभक दीपक

कपिलाघृतेन बोधितदीपः सुरगोपचूर्णसम्मिलितः ।
स्तम्भयति पुरुषवीर्यं रत्यारम्भे निशासमये ।।२७।।

[संस्कृत टीका]--'कपिलाघृतेन' कपिलाज्येन । 'बोधितदीपः' प्रज्वालित दीपः । कथम्भूतः? 'सुरगोपचूर्ण सम्मिलितः' इन्द्रगोपचूर्णगर्भकृतवर्त्यान्वितः । स दीपः किं करोतीत्याह 'स्तम्भयति' स्तम्भं करोति । किम्? 'पुरुषवीर्यम्' नृवीर्यम् । कस्मिन्? 'रत्यारम्भे' सुरतप्रारम्भे । क्व? 'निशासमये' रात्रिसमये ।।२७।।

[हिन्दी टीका]—कपिला गाय के घी से दिपक जलाकर और इन्द्रगोप (मखमली कीड़े) का चूर्ण पास में रखे तो पुरुष के वीर्य का स्तंभन होता है ।।२७।।

द्रावणलेप

टङ्कणपिप्पलिका म सूरणकर्पूरमातुलिङ्गरसैः ।
कृत्वात्माङ्गुलिलेपं कुरुते स्त्रीणां भगद्रावम् ।।२८।।

[संस्कृत टीका]—'टङ्कणं' मालतीतट सम्भवम् । 'पिप्पलिकामा' महाराष्ट्री । 'सूरण' अरण्यश्वेत सूरणकन्दः । 'कर्पूरः' चन्द्रः । 'मातुलिङ्ग' बीजपूरम् । तेषां रसैः । 'कृत्वा' । कम्? 'आत्माङ्गुलिलेपं' स्वाङ्गुलिलेपम्। 'स्त्रीणां' वनितानाम्। 'भगद्रावं' भगनिर्झरणं कुरुते ।।२८।।

[हिन्दी टीका]—सुहागा, पीपल, जमीकन्द, कपूर और बीजौरा के रस से स्वयं अंगुलि से, लिंग पर लेप करने से स्त्री द्रवित होती है ।।२८।।

द्यूत तथा वादविजयमूल

मूलं श्वेतापमार्गस्य कुबेरदिशि संस्थितम् ।
उत्तरात्रितयं ग्राह्यं शीर्षस्थं द्यूतवादजित् ।।२९।।

[संस्कृत टीका]—'मूलं श्वेतापमार्गस्य' श्वेतखरमञ्जर्या मूलम् । कथम्भूतम् ? 'कुबेर दिशी संस्थितम्' । 'उत्तरात्रितये' उत्तराफाल्गुनी--उत्तराषाढा--उत्तराभाद्रपदेतिऋक्षत्रये । 'ग्राह्यं' गृहीतव्यम् । 'शीर्षस्थं' मस्तके स्थितम् । 'द्यूत वाद जित्' द्यूते विवादे विजयं करोति ।।२९।।

[हिन्दी टीका]—उत्तर दिशा में रहने वाला सफेद आंधीझाड़ा की जड़ को उत्तरा फल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपद इन तीनों नक्षत्र के भीतर लेकर शिर पर रखने से सदा, जुआँ, वादविवाद में जय होती है ॥२६॥

रतिदायक लेप

अग्न्यावर्तितनागे हरवीर्यं निक्षिपेत् ततो द्विगुणम् ।

मुनिकनकनागसर्पज्योतिष्मत्यतसिभिश्च तन्मर्द्यम् ॥३०॥

[संस्कृत टीका]—'अग्न्यावर्तित नागे' अग्निना वर्तिते नागे । 'हरवीर्यं' पारदरसम् । 'निक्षिपेत् ततो द्विगुणं' ततः नागैक भागाद्रसं द्विभागं निक्षिपेत् । 'मुनिः' रक्तागस्तिः । 'कनकं' कृष्णा धत्तूरं । 'नागसर्पः' नागदमनकं । 'ज्योतिष्मत्यसिभिश्च' कंगुण्यतसीभ्यां च 'तन्मर्द्यम्' तत्पूर्वोक्तनागमेतेषां रसैर्मर्दनीयम् ॥३०॥

[हिन्दी टीका]—अग्नि में तपाये हुए शीशा के एक भाग में, दो भाग पारा, डालकर उसको अगस्त्य, कालाधतूरा, नागदमन और मालकांगनी का मर्दन करना चाहिये ॥३०॥

डीकेन मर्दयित्वा गणियार्याः मदनवलयकं कृत्वा ।

रतिसमये वनितानां रतिदर्प विनाशनं कुर्यात् ॥३१॥

[संस्कृत टीका]—'डिकेन' निर्यासेन । 'मर्दयित्वा' पुनरपि मर्दनं कृत्वा । कस्याः डीकेन? 'गणियार्याः' कणिकारवृक्षस्य । 'मदनवलयकं कृत्वा' स्मरवलयं लिङ्गे कृत्वा । 'रति समये' सुरतकाले । 'वनितानां' स्त्रीणाम् । 'रतिदर्प विनाशनं' सुरतगर्व विनाशनम् । 'कुर्यात्' करोति ॥३१॥

[हिन्दी टीका]--उसको कनेर के रस में मर्दन करके फिर, गोंद में मर्दन कर अपने लिंग पर लेप करने से रति काल में स्त्री का मद नष्ट हो जाता है ।

द्रावणलेपद्वितीय

व्याघ्रीवृहतीफलरससूरणकण्डूतिचणक पत्राम्बु ।

कपिकच्छुवज्रवल्लीपिप्पलिकाम्लिका चूर्णम् ॥

[संस्कृत टीक]—'व्याघ्रीवृहतीफलरसं' वृहतीद्वयफलरसं। 'सूरणं' श्वेतसूरणं। 'कण्डूति' अग्निकः । 'चणकपत्राम्बु' आर्द्र चणकपत्राम्बु । 'कपिकच्छुः' पिशाचिका । 'वज्रवल्ली' काण्डवल्ली । 'पिप्पलिकामा' महाराष्ट्री । 'अम्लिका' चाङ्गेरी । 'चूर्णं' केषांचिद्रसः ॥३२॥

[हिन्दी टीका]--व्याघ्री (भोयरीगरण) और उसके फल का रस, सफेद सूरण, लाल चितरों, हरेचनों के पत्तों का रस, (अथवा खार) कौंच वज्रबेल, पीपल, और मल्लिका के चूर्ण को लेकर ।।३२।।

अग्न्यावर्तित नागं नववारं भावयेदिमैर्द्रव्यैः ।

स्मरबलयं कृत्वैवं वनितानां द्रावणं कुरुते ।।३३।।

[संस्कृत टीका]—'अग्न्यावर्तित नागं'। 'नववारं' नवसंख्यावारैः। 'भावयेद्' भावनां कुर्यात्। कैः? 'इमैर्द्रव्यैः' एतत्कथित द्रव्यैः। 'स्मरबलयं कृत्वैवं' अनेन प्रकारेण मदनबलयं कृत्वा। 'वनितानां' स्त्रीणाम्। 'द्रावणं' भगनिर्झरणं। 'कुरुते' करोति ।।३३।।

[हिन्दी टीका]—इन द्रव्यों में अग्नि से जलाये हुये शीशा को नौ बार भावना देकर स्वलिंग पर लेप करने से स्त्रियां द्रवित होती है ।।३३।।

द्रावण जल का

भानुस्वर जिन संख्याप्रमाणसूतक गृहीत दीनारान् ।

अङ्कोल्लराजवृक्ष कुमारी रसशोधनं कुर्यात् ।।३४।।

[संस्कृत टीका]—'भानुस्वर जिनसङ्ख्याया' द्वादश सङ्ख्या, षोडशसङ्ख्या, चतुर्विंशतिसङ्ख्या। 'प्रमाणसूतक गृहीतदीनारान्' एवं त्रिसङ्ख्याकथित प्रमाणपारदरस गृहीतगद्याणकान्। 'अङ्कोल्लराज वृक्षकुमारीरसशोधनं कुर्यात्? 'अङ्कोल्लरसः' सम्पाक रसः। 'राजवृक्षरसः'। 'कुमारीरसः' गृहकन्यारसः। एतैः रसैः पारदसंशोधनं कुर्यात् ।।३४।।

[हिन्दी टीका]--बारह, सोलह और चौबीस दीनार अर्थात् (आधा तोला) ६ तोला, ८ तोला और १२ तोला प्रमाण पारे के रस को पृथक पृथक लेकर उसे आंकड़े के रस, राजवृक्ष (अमलतास) के रस तथा घी, कुवार के रस में शोधन करे ।।३४।।

शशिरेखाखरकर्णीकोकिलनयनापमार्गकनकानाम् ।

चूर्णैः सहैकविंशतिदिनानि परिमर्दयेत् सूतम्[१] ।।३५।।

[संस्कृत टीका]—'शशिरेखा' बाकुचीबीजं। 'खरकर्णी' गर्दभकर्णी, कर्णाट-भाषया कत्तेगिरी। 'कोकिलानयनं' कोकिलाक्षि बीजं च। 'अपमार्गः' प्रत्येकपुष्पी-बीजम्। 'कनकं' कृष्णधत्तूरकम्। 'चूर्णैः सहैकविंशति दिनानि' एभिः चूर्णैः सह प्रत्येकं एकविंशतिदिनानि। 'परिमर्दयेत् सूतं' शोधितपारदरसं मर्दयेत् ।।३५।।

---

१. सम्यक् इति ख पाठः ।

[हिन्दी टीका]—फिर उस शोधे हुये, पारद रस को शशिरेखा (गिलोय) स्वकर्णी, कोकिलाक्षबीज, चिरचिटे के बीज और काले धतूरे के बीजों के चूर्ण के साथ २१ दिन तक खरल करे ॥३५॥

निशायां काञ्जिकाधूपं दत्वा योनौ प्रवेशयेत् ।
बालां मध्यां गतप्रायां योषां विज्ञाय तत्क्रमात् ॥३६॥

[संस्कृत टीका] :—'निशायां' रात्रौ । 'काञ्जिकाधूपं दत्वा' आरनलिन-धूपं दत्वा । 'योनौ प्रवेशयेत्' तद्ध्रु पितरसं स्त्रीयोनौ प्रवेशयेत् । 'बालां मध्यां गतप्रायां योषां विज्ञाय तत्क्रमात्' बालस्त्रीणां द्वादशगद्याण प्रमाणरसकृतजलूका मध्यप्रमाण स्त्रीणां षोडशगद्याणप्रमाणरसकृतजलूका गतप्रायस्त्रीणां चतुर्विंशतिगद्याणप्रमाण रसकृतजलूका इति क्रमं ज्ञात्वा प्रवेशयेत् ॥३६॥

[हिन्दी टीका]—उसको रात्रि में कांजी की धूप देकर योनि में डाल दे, बाला के लिये बारह गद्याण प्रमाण, मध्यमा के लिये सोलह गद्याण प्रमाण और प्रौढ़ा के लिये २४ गद्याण प्रमाण वाली लेवे ॥३६॥

नीरसतां बिभ्राणां योषां रतिसंगरे मदोन्मत्तां ।
द्रावयति तादृशीमप्येष जलूका प्रयोगस्तु ॥३७॥

[संस्कृत टीका]—'नीरसतां बिभ्राणां' निर्द्रवभावं धारयन्ती । 'योषां' स्त्रियम् । 'रतिसङ्गरे' सुरतरणरङ्गे । 'मदोन्मत्तां' यौवनमदोन्मत्ताम् । 'द्रावयति तादृशीमपि' एवं विधां मदोन्मत्तामपि क्षरयति । 'एष जलूका प्रयोगस्तु' तु पुनः एषः कथित प्रकारेण कृतजलूका प्रयोगः ॥३७॥ इति जलूका प्रयोगविधानम् ।

[हिन्दी टीका]—यह जलूका का प्रयोग रतिकाल में सदा नीरस रहने वाली और महान उन्मत्त स्त्री को भी द्रावित कर देता है ॥३७॥

शाकिनीहरण तिलक

सोमाशाश्रितमूलं कपिकच्छोर्गोजलेन परिपिष्टम् ।
निजतिलक प्रतिबिम्बं संपश्यति शाकिनीशीर्षे ॥३८॥

[संस्कृत टीका]—'सोमाशाश्रितमूलं' उत्तरादिग्गतमूलम् । कस्याः ? 'कपिकच्छोः' पिशाच्याः । कथम्भूतं मूलम् ? 'गो जलेन परिपिष्टं' गोमूत्रेण वर्तितम् । 'निजतिलक प्रतिबिम्बं' स्वकीय विशेषकं प्रतिरूपम् । 'सम्पश्यति शाकिनी शीर्षे' स्वकीय तिलकं शाकिनी ललाटे तदेव पश्यति ॥३८॥

[हिन्दी टीका]—उत्तर दिशा में रहा हुआ कौंच की जड़ को गोमूत्र में पीसकर उसका मस्तक पर तिलक करने शाकिनी उसमें अपना प्रतिबिंब देखती है ॥३८॥

दिव्यस्तम्भक चूर्ण

आदित्याक्षतदिव्यस्तम्भविधौ मरिच पिप्पलीकामाम् ।
दिव्यस्तम्भे सुण्ठी चूर्णं च भक्षयेद् धीमान् ॥३९॥

[संस्कृत टीका]—'आदित्याक्षतदिव्यस्तम्भविधौ' आदित्यतन्दुलदिव्य स्तम्भने। 'मरिचपिप्पली कामाम्' उषणमहाराष्ट्रीचूर्णं भक्षयेत्। कर्पूरदिव्य स्तम्भने तु कपालिकादि कर्पूरादि। 'दिव्यस्तम्भे' दिव्यस्तम्भविधाने। 'सुण्ठीचूर्णं च भक्षयेत्' महौषधी चूर्णं भक्षयेत्। कः 'धीमान्' बुद्धिमान् ॥३९॥

[हिन्दी टीका]—बुद्धिमान मंत्रवादी दिव्यस्तंभन कार्य में आंक और सफेद चांवल, कालीमिर्च, पीपल (मुलेठी) काम (उषण) का सेवन करे कर्पूर दिव्य-स्तंभन के लिये सोंठ के चूर्ण का भक्षण करे ॥३९॥

अग्नि तथा तुला स्तंभन

लज्जरिका भेकवसा करलिप्तं स्तम्भनं करोत्यग्नेः ।
श्वासनिरोधेन तुलादिव्यस्तम्भो भवत्येव ॥४०॥

[संस्कृत टीका]—'लज्जरिका' लज्जरिका समंगा। 'भेकवसा' हरिवसा। 'करलिप्तं' तच्चूर्णानि तद्वसया हस्तलिप्तम्। 'स्तम्भनं करोत्यग्नेः' अग्नि स्तम्भो भवत्येव। 'श्वास निरोधेन तुलादि व्यस्तम्भो भवत्येव' श्वासनिरोधेन घटे तुलादिव्यस्तम्भोऽवश्यं भवत्येव ॥४०॥

[हिन्दी टीका]—लाजवंती (छुईमुई) और मेंढ़क की चर्बी को हाथ पर लगा लेने से अग्नि का स्तम्भन और श्वास निरोध से तुला स्तंभन होता है ॥४०॥

अच्छा रोजगार चलाना

निर्गुण्डिका च सिद्धार्था गृहद्वारेऽथवापणे ।
बद्धं पुष्यार्क योगेन जायते क्रयविक्रयम् ॥४१॥

[संस्कृत टीका]—'निर्गुण्डिका' सित भूतकेशी। 'सिद्धार्थाः' श्वेतसर्षपाः। 'गृहद्वारे' स्ववेश्मद्वारे। 'अथवा आपणे' विपणी। 'बद्धं पुष्यार्क योगेन' पुष्यनक्षत्रे रविवारेण योगे बद्धं चेत्। 'जायते क्रयविक्रयं वस्तुक्रयविक्रयं भवत्येव ॥४१॥

[हिन्दी टीका]—निर्गुण्डि और सफेद सरसों को पुष्य नक्षत्र में लेकर घर के द्वार पर बांधने से अथवा दुकान के दरवाजे पर बांधने से अच्छा माल बिकता है ।।४१।।

गर्भनिवारण

पिबति प्रसूनसमये जपाप्रसूनं विमर्द्य कञ्जिकया ।
न बिभर्ति सा प्रसूनं धृतेऽपि तस्याः न गर्भः स्यात् ।।४२।।

[संस्कृत टीका]—'पिबति' पानं करोति । 'प्रसून समये' दिनत्रयपुष्पकाले । किम् ? 'जपाप्रसूनं' जपाकुसुमम् । किं कृत्वा ? 'विमर्द्य' विशेषेण मर्दयित्वा । कया ? 'कञ्जिकया' सौवीरेण । 'सा' नारी । 'प्रसूनं' पुष्पं । 'न बिभर्ति' न धारयति । 'धृतेऽपि' यदि कथमपि पुष्पं धरति तथापि 'तस्या न गर्भः स्यात्' तस्या वनितायाः गर्भ सम्भवो न भवत्येव ।।४२।।

[हिन्दी टीका]—लाल जसौंधि के फूल को कांजी (सौवीर) के साथ मर्दन करके रजस्वला स्त्री तीन दिन पीये तो स्त्री को गर्भ नहीं रहता है और रजस्वला भी नहीं होती है । एकबार रजस्वला भी हो जाय तो भी गर्भ तो रहता ही नहीं ।।४२।।

इत्युभय भाषा कवि शेखर श्री मल्लिषेण सूरि विरचिते
भैरव पद्मावतीकल्पे वश्यतन्त्राधिकारो नाम नवमः परिच्छेदः ।।६।।

इति श्री उभय भाषा कवि श्री मल्लिषेणाचार्य विरचित भैरव पद्मावती कल्प के वश्यतंत्राधिकार की हिन्दी भाषा नामक विजया टीका समाप्ता ।

(नवम अध्याय समाप्त)

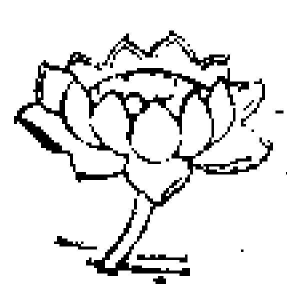

दशमः गारुडतन्त्राधिकार परिच्छेदः

गारुड विद्या के आठ अंग

संङ्ग्रहम ङ्गन्यासं रक्षां स्तोभं च वक्ष्यहं स्तम्भम् ।
विषनाशनं सचोद्यं खटिकाफणिदशनदशं च ॥१॥

[संस्कृत टीका]–'संग्रहं' दष्टस्य संग्रहम् । 'अङ्गन्यासं' दष्ट पुरुषस्य शरीराक्षर विन्यासम् । 'रक्षां' दष्टस्य रक्षाकरणम् । 'स्तोभं च' दष्टावेशकरणं, चः समुच्चये । 'वक्ष्यहं' मल्लिषेणाचार्यः कथयामि । 'स्तम्भं' दष्टस्य शरीरे विष प्रसरण निरोधः स्तम्भम् । 'विषनाशनं' निर्विषीकरणम् । 'सचोद्यं' चोद्येन सह वर्तत इति सचोद्यं, दष्टपटाच्छादनादि कौतुकम् । 'खटिकाफणिदशनदंशं च' खटिकालिखित सर्पदन्तदंशमित्यष्टाङ्ग गारुडमहं वक्ष्मीति सम्बन्धः ॥१॥

[हिन्दी टीका]–मैं मल्लिषेणाचार्य सांप ने डस लिया हो उसकी परीक्षा के लिये, ऊपर मंत्र के अक्षरों को लिखने के लिये, रक्षा करने के लिये, दंश के आवेश को रोकने के लिये, शरीर में जहर का चढ़ना रोकने के लिये, जहर उतारने के लिये कपड़े से ढकने के कौतुक तथा लेखनी से लिखे हुये सर्प के दांत से दंश देने रूप गारूड अधिकार के आठ अंगों का वर्णन करता हूँ ॥१॥

प्रथमस्तावत्संग्राहोऽभिधीयते—

समविषमाक्षर भाषिणि दूते शशि दिनकरौ च वहमानौ ।
दष्टस्य जीवितव्यं तद्विपरीते मृतिं विन्द्यात् ॥२॥

[संस्कृत टीका]–'समविषमाक्षर भाषिणि दूते शशि दिनकरौ च वहमानौ' चन्द्रदिवाकरौ स्वरौ प्रवर्तमानौ । 'दष्टस्य जीवितव्यं' समाक्षरभाषिणि दूते चन्द्रे वहमाने, विषमाक्षरभाषिणी दूते सूर्ये वहमाने दष्टपुरुषस्य संग्रहोऽस्तीति विन्द्यात् । 'दृष्टस्य जीवितव्यं तद्विपरीते मृतिं विन्द्यात्' समाक्षर भाषिणि दूते सूर्ये वहमाने, विषमाक्षर-भाषिणी दूते चन्द्रे वहमाने इति स्वरवर्णवैपरीत्ये दष्टपुरुषस्य संग्रहो न विद्यते इति विन्द्यात् ॥२॥

[हिन्दी टीका]–यदि दूत चन्द्रस्वर में सम अक्षर कहे तो समझना चाहिये कि जिसको सांप ने काटा है वह व्यक्ति बच जावेगा और प्रश्नकर्त्ता यदि सूर्यस्वर में विषमाक्षर कहे तो उसकी मृत्यु समझना चाहिये ॥२॥

दूतमुखोत्थित वर्णान् द्विगुणीकृत्य त्रिभिर्हरेद्भागम् ।
शून्येनोद्धरितेन च मृति जीवितमादिशेत् प्राज्ञः ॥३॥

[संस्कृत टीका]–'दूत मुखोत्थित वर्णान् द्विगुणीकृत्य' तानि प्रश्नाक्षराणि सर्वाणि द्विगुणीकृत्य । 'त्रिभिर्हरेद्भागं' तद्द्विगुणित राशि त्रिभिर्भागे हरेत् । 'शून्येनोद्धरितेन च' तद्भागावशेष शून्येन शून्य समच्छेदेन एकद्विरवशिष्टेन च । 'मृत जीवितमादिशेत्' शून्येन दष्टस्य संग्रहाभावमादिशेत्, एकद्विरुद्धरितेन दष्टस्य संग्रहोऽस्तीत्यादिशेत् ॥३॥

[हिन्दी टीका]–प्रश्नकर्त्ता के मुख से निकले हुये प्रश्नाक्षरों को द्विगुणित करके तीन का भाग देने से यदि शेष शून्य बचे तो मृत्यु होगी और अन्य संख्या शेष रहे तो, बच जावेगा ॥३॥

हूं वं क्षं मन्त्र मन्त्रिततोयेनोद्धुषति यस्य गात्रं चेत् ।
स च जीवत्यथवाक्षिस्पन्दनतो नान्यथा दष्टः ॥४॥

[संस्कृत टीका]–'हूं वं क्षं मन्त्रः' हूं वं क्षं इति मन्त्रः । 'मन्त्रिततोयेन' अनेन मन्त्रेणाभिमन्त्रितोदकेनाच्छोटितेन । 'उद्धषति यस्य गात्रं चेत्' यस्य दष्टस्य शरीरं कम्पवच्चेत् । 'स च जीवति' स उद्धुषितगात्र पुरुषो जीवति । 'अथवाक्षिस्पन्दनतः' अन्येन प्रकारेणाक्ष्णोरुन्मीलनेन संदष्टो जीवति । 'नान्यथा दष्टः' यस्य दष्टस्य तदुदकसिञ्चनेन गात्रोद्धुषणं तदक्षिस्पन्दनं च न विद्यते तस्य दष्टस्य जीवितं न स्यादिति ज्ञातव्यम् ॥४॥

[हिन्दी टीका]–हूं, वं, क्षं इस मंत्र से पानी मंत्रित करके सर्प दंष्टा के ऊपर डालने से यदि हाथ-पांव हिलाता है, आंखों को फिराता है, कांपता है, तो बुद्धिमान मंत्री उसको जीवित समझे अन्यथा मर गया है ॥४॥

इति संग्रहपरिच्छेदः ।

अतः परमङ्गन्यासोऽभिधीयते —

क्षिप मुँ स्वाहा बीजानि विन्यसेत् पादनाभिहृन्मुखशीर्षे ।
पीतसित काञ्चनासितसुरचापनिभानि परिपाट्या ॥५॥

[संस्कृत टीका]–'क्षिप उँ स्वाहा बीजानि' क्षिप उँ स्वाहेति पञ्च बीजानि । 'विन्यसेत्' विशेषेण स्थापयेत् । केषु ? 'पादनाभिहृन्मुख शीर्षे' पादद्वये, नाभौ, हृदये, आस्ये, मस्तके इत्येतेषु पञ्चसु स्थानेषु । कथम्भूतानि बीजानि । 'पीत-

सितकाञ्चनासित सुरचाप निभानि' पीत-हरिद्रनिभं, श्वेते-श्वेतवर्णं, काञ्चनं-सुवर्णवर्णं, असितं-कृष्णवर्णं, सुरचापं-इन्द्रधनुर्वर्णं, निभानि-सदृशानि । एवं पञ्चवर्णबीजानि 'परिपाट्यां' 'क्षि' बीजं पीतवर्णं पादद्वये, 'प' बीजं श्वेतवर्णं नाभौ, ॐ बीजं काञ्चनवर्णं हृदि, स्वा इति बीजं कृष्णवर्णं आस्ये, 'हा' इति बीजं इन्द्रचापवर्णं मूर्ध्नि एवं क्रमेण पञ्चसु स्थानेषु विन्यसेत् ।।५।। इत्यङ्ग न्यासक्रमः ।।

[हिन्दी टीका]–क्षिप ॐ स्वाहा इन पाँच बीजों को पीला, सफेद, सुवर्ण, काला और इन्द्र धनुष जैसे नीलवर्ण इन पाँचों वर्णों को दोनों पांव, नाभि, हृदय, मुख तथा मस्तक इन पांच अंगों के अन्दर अनुक्रमशः स्थापना करना ।।५।।

मंत्र स्थापन करने का क्रमः–

क्षि, बीज को पीलेरंग से दोनों पाँवों में स्थापन करे ।

प, बीज को सफेद रंग से नाभि में स्थापन करे ।

ॐ, बीज को सुवर्ण रंग से हृदय में स्थापन करे ।

स्वा, बीज को काले रंग से मुख में स्थापन करे ।

हा, बीज को नीलेरंग से मस्तक पर स्थापन करे ।

अतः परं रक्षाविधानं कथ्यते—

पद्मं अतुर्दलोपेतं भूतान्तं नामसंयुतम् ।
दलेषु शेष भूतानि मायया परिवेष्टितम्[1] ।।६।।

(संस्कृत टीका)–'पद्मं' कमलम् । 'चतुर्दलोपेतं' चतुः पत्रयुक्तम् । 'भूतान्तं' भूतानिपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशसंज्ञानि तेषामन्त आकाशो हकारः, तं हकारं कर्णिकामध्ये । कथम्भूतम् ? 'नामसंयुतं' दष्टनामगर्भीकृतम् । 'दलेषु' बहिः स्थित चतुर्दलेषु । 'शेष भूतानि' क्षिप ॐ स्वाहेति चतुर्बीजानि लिखेत् । 'मायया परिवेष्टितं' तत्पद्मोपरि ह्रीँकारेण त्रिधा परिवेष्टितं लिखित्वा दष्टस्य गले बध्नीयात् । अथवा चन्दनेन दष्टवक्षः स्थले एतद्यन्त्रं लिखेत् ।।६।। इति रक्षा विधानम् ।।

[हिन्दी टीका]–एक चार दल का कमल बनावे, उसकी कर्णिकाओं में नाम सहित हकार को लिखे, उसके बाद चारों दलों में क्षिप ॐ स्वाहा लिखकर ह्रींकार से तीन बार वेष्टित करे, फिर क्रों कार से निरोध करे, इस यंत्र को चंदन से लिखकर दष्ट पुरुष के गले में बाँधे ।।६।। सर्प जहर नष्ट करने का यंत्र चित्र नं० ४२ ।

---

१. **त्रिमाया परिवेष्टितं इति ख पाठः । 'त्रिमायावेष्टितं शुभम्' इत्यपि पाठः ।।**

सर्पजहर नष्ट करने का यंत्र चित्र नं॰ ४२

इदानीं स्तोभकरणमारभ्यते—

वह्निजलभूमि पवन व्योमाग्रे दहपचद्वयं योज्यम् ।
स्तोभय युगलं स्तोभं मध्यमिका चालनाद्भवति ।।७।।

(संस्कृत टीका)—'वह्निः' ॐकारः । 'जलं' पकारः । 'भूमिः' क्षिकारः । 'पवनः' स्वाकारः । 'व्योम' हकारः । 'अग्रे' एतेषां पञ्चबीजाक्षराणामग्रे । 'दहपचद्वयं योज्यम्' दह दहेति पदद्वयं योज्यं, तदग्रे पच पचेति पदद्वयं योजनीयम् । 'स्तोभययुगलं' स्तोभय स्तोभयेति पदद्वयम् । 'स्तोभं' अनेन मन्त्रोच्चारणोच्चाटनेन ? दष्टावेशः । कथम् ? 'मध्यमिका चालनात्' मध्यमाङ्गुल्याश्चालनाद् । 'भवति' जायते ।।७।।
मन्त्रोद्धार :—ॐ पक्षि स्वाहा दह दह पच पच स्तोभय स्तोभय ।

।। इति स्तोभन मन्त्रः ।। ।। इति स्तोभनविधानम् ।।

[हिन्दी टीका]—"ॐ पक्षि स्वाहा" इन पाँच बीजाक्षरों के आगे दह दह इन दो पदों की योजना करे, उसके आगे पच पच इन दो पदों की, फिर स्तोभय स्तोभय ये पद लिखे, इस मंत्र को मध्यमा अंगुलि को चलाते हुये उच्चारण करने से सर्पदंश का आवेग रुकता है ।।७।।

मंत्रोद्धार :—"ॐ पक्षि स्वाहा दह दह पच पच स्तोभय ।।"

इदानीं विषस्तम्भनमुदीर्यते—

आद्यन्ते भूबीजं मध्ये जलवह्निमारुतं योज्यम् ।
स्तम्भययुगलं स्तम्भो वामकराङ्गुष्ठ चालनतः ।।८।।

(संस्कृत टीका)—'आद्यन्ते भूबीजं' मन्त्रादौ मन्त्रान्ते पृथ्वीबीजम्-क्षि इति । 'मध्ये जलवह्निमारुतं योज्यं' मन्त्रमध्ये प ॐ स्वेति बीजत्रयं योजनीयम् । 'स्तम्भययुगलं' तदग्रे स्तम्भयेति पदद्वयम् । स्तम्भः' अनेन कथित मन्त्रोच्चारणेन विष प्रसर स्तम्भो भवति । कथम् ? 'वामकराङ्गुष्ठ-चालनतः' स्वरामकराङ्गुष्ठचालनेन ।।८।।
मन्त्रोद्धार :—क्षिप ॐ स्वाक्षि स्तम्भय स्तम्भय ।। विषस्तम्भनमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]—मंत्र के प्रारम्भ में और अंत में पृथ्वीबीज क्षि, मध्यमां, प, ॐ, स्वा, इन तीन बीज की योजना करके उसके आगे स्तम्भय २ ये दो पद लिखकर तैयार किया हुए मंत्र को बांए हाथ के अंगूठे पर जप करने से विष का स्तम्भन होता है ।।८।।

मंत्रोद्धार :—"क्षिप ॐ स्वाक्षि स्तम्भय ।।"

इदानीं निर्विषीकरणमभिधीयते :—

जलभूमिवह्निमारुतगगनैः संप्लावयद्वयोपेतैः ।

भवति च विषापहारस्तर्जन्याश्चालनादचिरात् ॥९॥

[संस्कृत टीका]—'जलं' पकारः। 'भूमिः' क्षिकारः। 'वन्हिः' उँकारः। 'पवनः' स्वाकारः। 'गगनं' हाकारः। इति पञ्चबीजाक्षरैः। कथम्भूतैः ? संप्लावयद्वयोपेतैः' संप्लावयेति पदद्वयान्वितैः। 'भवति' स्यादेव। कः ? विषापहारः' विषनिर्विषीकरणम्। कस्मात् ? 'तर्जन्याश्चालनात्' स्ववामकरतर्जन्यश्चालनात्। कथम् ? 'अचिरात्' शीघ्रतः।

अतः मन्त्रोद्धार :—पक्षि[1] उँ स्वाहा संप्लावय संप्लावय। इति विषापहारः ॥९॥

[हिन्दी टीका]—जल बीज प कार। भूमि बीज क्षि कार। अग्नि बीज ॐ कार। पवन बीज स्वाकार। गगन बीज हा कार। इस प्रकार पांच बीजाक्षरों को और आगे संप्लावय-२ ये दो पद सहित बांये हाथ की तर्जनी अंगुली से जल्दी-२ चलाकर मंत्र का जाप करने से जहर उतर जाता है ॥९॥

मंत्रोद्धारः—"पक्षि ॐ स्वाहा संप्लावय-संप्लावय।"

इदानीमन्यत्रविषसंक्रमणकौतुकमभिधीयते—

मरुदग्निवारिधामव्योमपदं संक्रमव्रजद्वितयम्।

चालनयाऽनामिकया नितरां विषसंक्रमो भवति ॥१०॥

[संस्कृत टीका—]'मरुत्' स्वाकारः। 'अग्निः' उँकारः। 'वारि' पकारः। 'धाम' क्षिकारः। 'व्योम' हाकारः। 'संक्रमव्रज द्वितयं' संक्रम संक्रम व्रज व्रजेति पदद्वयम्। 'चालनयानामिकया' स्ववामकरानामिकायाश्चालनेन। 'नितरां' अतिशयेन। 'विषसंक्रमो भवति' परं प्रति विषसंक्रमो भवति ॥१०॥

मन्त्रोद्धारः—स्वा उँ प क्षि हा संक्रम संक्रम व्रज व्रजेति विष संक्रामण मन्त्रः।

[हिन्दी टीका]—इस मंत्र का बांए हाथ की अनामिका अंगुलि से जाप्य करे तो विष संक्रमण होता है ॥१०॥

---

१. क्षि उँ स्वाहा स्तंभय स्तंभय निर्विषकरणं पक्षि उँ स्वाहा संप्लावय संप्लावय। अयं विषापहार मन्त्रः इति ख पाठः।

मंत्र :—स्वा ॐ पक्षि हा संक्रम संक्रम व्रज व्रज ।

नागावेशन मंत्र

नागावेश :—

व्योमजलवह्निपवनक्षितियुतमन्त्राद्भवत्यथावेशः ।

सं क्षि प हः प क्षि प हः पठनेन कनिष्ठि चालनतः ॥११॥

[संस्कृत टीका]—'व्योम' हाकारः । 'जलं' पकारः । 'वन्हिः' उँकारः । 'पवनः' स्वाकारः । 'क्षितिः' क्षिकारः । 'युतमन्त्रात्' युक्तमन्त्रात् । 'भवति' एतत्कथित-मन्त्राज्जायते । 'अथ' पश्चात् । 'आवेशः' पुरुषशरीरे नागावेशः । 'सं क्षि प हः प क्षि प हः इति । 'पठनेन' एतन्मन्त्रपठनेन । कस्मात् ? 'कनिष्ठिचालनतः' वामकरकनिष्ठि-काचालनात् ॥११॥

मन्त्रोद्धार :—हा प उँ स्वाक्षि सं क्षि प हः प क्षि प हः । इति पदे नागा-वेशमन्त्रः ।

[हिन्दी टीका]—इस मंत्र को बाए हाथ की कनिष्ठिका अंगुलि से जाप करे तो पुरुष के शरीर में नाग प्रवेश करता है ॥११॥

दंश पुरुष के शरीर में नागा प्रवेश मंत्र कराने का मंत्र—"हा प ॐ स्वा क्षि सं प हः प क्षि प हः ।"

विषनाश मंत्र (प्रथम)

कर्णजाप्येन भेरुण्डा निर्विषं कुरुते नरम् ।

विद्या सुवर्णरेखापि दष्टं तोयाभिषेकतः ॥१२॥

[संस्कृत टीका]—'कर्ण जाप्येन' दष्ट पुरुषस्य कर्ण जाप्येन । 'भेरुण्डा' भेरुण्डदेव्या विद्या । 'निर्विषं कुरुते' निर्विषीकरणं कुरुते । 'नरं' दष्टं पुरुषम् । 'विद्या सुवर्णरेखापि' अपिपश्चात् सुवर्णरेखा विद्या । 'दष्टं' पुरुषं । 'तोयाभिषेकतः' सुवर्ण-रेखनागविद्याऽभिमन्त्रितोदकाभिषेकेण निर्विषं करोति ॥१२॥

भेरुण्ड विद्या मन्त्रोद्धार :— उँ एकहि एकमाने भेरुण्डा विज्जाभविकज-कुरंडे लेतु भंतु आमोसइ हुंकारविष नासइ थावर जंगम किसिम अंगज[1] उँ फट् ॥

इयं कर्ण जाप्या भेरुण्ड विद्या । प्राकृतमन्त्रः ॥

---

१ ह्रीं देवदत्तस्य विषं हर हुं फट् इति च पाठः ।

अतः सुवर्ण रेखा मन्त्रोद्धार :–ॐ सुवर्ण रेखे कुक्कुट विग्रह रूपिणि स्वाहा ।। इयं तोयाभिषेककरण सुवर्णरेखा विद्या ।।

[हिन्दी टीका]–जिस को सांप ने काट लिया है उस पुरुष के कान में भेरुण्ड विद्या मंत्र का और सुवर्ण रेखा से मंत्रित पाणी से अभिषेक करे तो सांप के जहर से मुक्ति मिलती है ।।१२।।

भेरूण्ड मंत्रोद्धार :–ॐ एकहि एकमाते भेरूण्डा विज्जा भविकज करंडे तंतु मंतु आमोसइ हुंकार विष नासइ थावर जंगम कित्तिम अंगज ॐ फट् । यह मंत्र पद्मावती उपासना ग्रंथ में है किन्तु बहुत ही अशुद्ध मंत्र है ।

ॐ एहि माये भेरूण्डे विज्जाभरिय करंडे तंतु मंतु आघेसइ हुंकारेण विसणासइ थावर जंगम कित्तिम अंगउज ह्रीँ देवदत्तस्य विषं हर-२ ॐ हूं फट् । यह मंत्र तीनों प्रतियों में मिलान करके पूर्ण शुद्ध किया है ।

सुवर्णरेखा मंत्रोद्धार :–ॐ सुवर्ण रेखे कुक्कुट विग्रह रूपिणि स्वाहा ।

विषनाशन मंत्र (द्वितीय)

भूजल मरुन्नभोऽक्षर मन्त्रेण घटाम्बु मन्त्रितं कृत्वा ।
पादादिविहितधारा निपातनाद्भवति विषनाशः ।।१३।।

[संस्कृत टीका]–'भू' क्षि । 'जलं' प । 'मरुत' स्वा । 'नभोऽक्षरं' हा । 'मन्त्रेण' क्षि प स्वा हेत्यक्षर चतुष्टय मन्त्रेण । घटाम्बु मन्त्रितं कृत्वा' कलशोद कमनेन मन्त्रेणाभिमन्त्रितं कृत्वा । 'पादादिविहितधारानिपातनात्' आपादमस्तकाविकृतजल-धारानिपातनात् । 'भवति' स्यात् । 'विषनाशः' दष्टस्य विषनाशः ।।१३।।

मन्त्रोद्धार :–क्षिप स्वाहा ।। इति निर्विषीकरण मन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]–क्षि प, स्वा, हा, इन चार मंत्राक्षरों से घड़े में भरे हुए पानी को मंत्रित करके सर्प दंशीत मनुष्य के सिर से पैर तक लगाने से जहर (विष) मुक्त हो जाता है ।।१३।।

मंत्र :—"क्षिपस्वाहा ।"

अष्ट प्रकार नागों का वर्णन

इदानीमष्टविधनागाभिधनमभिधीयते—

नन्तो वासुकिस्तक्षः कर्कोटः पद्मसंज्ञकः ।
महासरोजनामा च शङ्खपालस्तथा कुलिः ।।१४।।

[संस्कृत टीका]—'अनन्तो वासुकिस्तक्षः' अनन्तनाम नागः, वासुकिर्नाम नागः तक्षको नाम नागः । 'कर्कोटः' कर्कोटको नाम नागः । 'पद्मसंज्ञकः पद्मनाम नागः । 'महासरोजनाम च' महा पद्मनामनागः। 'शङ्खपालः' शङ्खपालो नाम नागः। 'तथा कुलिः' तेन प्रकारेण कुलिको नाम नागः । इत्यष्टविधनागानां नामनि निरूपितानि ।।१४।।

[हिन्दी टीका]—अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोट, पद्म, महापद्म, शंखपाल और कुलिक इस प्रकार ये आठ प्रकार के नागों के नाम हैं ।।१४।।

अतः परं तेषां नागानां कुल जाति वर्ण-विष-व्यक्तयः पृथक्पृथगभिधीयन्ते—

क्षत्रिय कुलसम्भूतौ वासुकिशङ्खौ धराविषौ रक्तौ ।
कर्कोटक पद्मावपि शूद्रौ कृष्णौ च वारुणीयगरौ ।।१५।।

[संस्कृत टीका]—'क्षत्रिय कुलसम्भूतौ' क्षत्रियकुल सम्भवौ । कौ ? वासुकिशङ्खौ' वासुकिशङ्खपालनागौ । 'धराविषौ' तौ द्वौ पृथ्वीविषान्वितौ । 'रक्तौ' रक्तवर्णौ । 'कर्कोटक पद्मावपि' अपि-पश्चात् कर्कोटपद्मौ । शूद्रौ' शूद्रकूलोद्भूतौ । 'कृष्णौ' तौ द्वौ कृष्णवर्णौ । चः समुच्चये । 'वारुणीयगरौ' तौ द्वौ अब्धिविषान्वितौ ।।१५।।

[हिन्दी टीका]—वासुकि और शंखपाल नाग क्षत्रिय कुलोत्पन्न, रक्तवर्ण और पृथ्वी विष वाले हैं । करकोटक और पद्म नाग शूद्र कुलोत्पन्न काले रंग के और समुद्र जल के हलके विष वाले होते हैं ।।१५।।

विप्रावनन्त कुलिकौ वह्निगरौ चन्द्रकान्तसङ्काशौ ।
तक्षक महासरोजौ वैश्यौ पीतौ मरुद्गरलौ ।।१६।।

[संस्कृत टीका]—'अनन्तकुलिकौ' अनन्तकुलिक नाम नागौ । 'विप्रौ' विप्रकुलसम्भूतौ । 'वह्निगरौ' अग्नि विषान्वितौ । 'वैश्यौ' वैश्यकुलोद्भवौ । 'पीतौ' पीतवर्णौ । 'मरुद्गरलौ' वायुविषान्वितौ । इत्यष्टविधनागानां कुल वर्ण विषव्यक्तयः प्रतिपादिताः । जय विजय नागौ देवकुलोद्भूतौ आशीविषौ पृथिव्यां न प्रवर्तते इत्येतस्मिन्ग्रन्थे न प्रतिपादितौ ।।१६।।

[हिन्दी टीका]—अनन्त और कुलिक जाति के नाग ब्राह्मण कुल वाल, स्फटिक के समान रंग वाले और आग्निविष वाले हैं । तक्षक और महापद्म वैश्य कुलोत्पन्न पीले वर्ण के और वायु के विष वाले हैं। जय विजय जाति के नाग देवकुल के आशी विष वाले हैं, इनका पृथ्वी पर संचार न होने से इस ग्रंथ में वर्णन नहीं किया है ।।१६।।

विषों के लक्षण

इदानीं चतुर्विधं चिह्नमभिधीयते—

पार्थिवविषेण गुरुता जडता देहस्य सन्निपातत्वम् ।

लालाकण्ठनिरोधो गलनं दंशस्य तोयविषात् ॥१७॥

[संस्कृत टीका]—'पार्थिवविषेण' पृथ्वी विष नाग दष्टस्य । 'गुरुता' गुरुत्वम् । 'जडता देहस्य' शरीरस्य जाड्यम् । 'सन्निपातत्वं' सन्निपातस्वरूपमिति पार्थिवविषचिह्नं स्यात् । 'लालाकण्ठनिरोधः' मुखे लालास्रवः । 'गलनं दंशस्य' सर्पदष्ट दंशे रक्तक्षरणम् । कस्मात् ? 'तोय विषात्' अम्बुविषात् अम्बुविषदष्टस्यैवंविधं चिह्नं स्यात् ॥१७॥

[हिन्दी टीका]—पृथ्वी विष वाले नाग के काटने पर शरीर जडवत् भारी होता है, सन्निपात की जैसी अवस्था हो जाती है । समुद्र जल की जाति के नाग के काटने पर मुख से लार गिरती है और दांत गलने लगते हैं ॥१७॥

गण्डोद्गता दृष्टेरपाटवं भवति वह्निविषदोषात् ।

विच्छायतास्यशोषणमपि मारुत गरलदोषेण ॥१८॥

[संस्कृत टिका]—'गण्डोद्गमता' दष्टशरीरे गण्डोद्गत्वम् । 'दृष्टेरपाटवं' नेत्रयोरपटुत्वम् । 'भवति' स्यात् । कस्मात् ? 'वन्हि विष दोषात्' वन्हिविषनागदष्टस्य पुरुषस्यैवंविधचिह्नं स्यात् । 'विच्छायता' शरीरे दुश्छवित्वं, 'आस्यशोषणमपि' वदने निर्दवत्वमपि । केन ? 'मारुतगरलदोषेण' वायुविषनागदष्ट पुरुषस्यैवं चिह्नं स्यात् ॥१८॥

[हिन्दी टीका]—अग्नि के समान विष वाले नाग के काटने पर गण्ड स्थल फूलने लगते हैं । और नेत्र ज्योति बंद हो जाती है । वायु के समान विष वाले नाग के काटने पर शरीर में चंचलता होती है और नींद उड़ जाती है, मुँह सूखने लगता है ॥१८॥

विषहरण मंत्र

इत्यष्टविधनागानां कुलवर्णविष चिह्न व्यक्तयः प्रतिपादिताः ॥

ॐ नमो भगवत्याविमन्त्रमष्टोत्तरं शतम् ।

पठित्वा क्रोशपटहं ताडयेद्दष्ट सन्निधौ ॥१९॥

[संस्कृत टीका]–'ॐ नमो भगवत्यादिमन्त्रं' ॐ नमो भगवति इत्यादि वक्ष्यमाणमन्त्रं । 'अष्टोत्तरं शतं' अष्टाधिकं शतम् । 'पठित्वा' पठनं कृत्वा । 'क्रोश पटहं क्रोशडमरुम् । 'ताडयेत्' ताडनं कुर्यात् । 'दष्टसन्निधौ' दष्टस्य पार्श्वे ॥१९॥

मन्त्रोद्धार :–ॐ नमो भगवति ! वृद्धगरुडाय सर्व विष विनाशिनि ! छिन्द छिन्द भिन्द भिन्द । गृल्ल गृल्ल एहि एहि भगवति ! विद्ये हर हर हुं फट् स्वाहा ॥ दष्टश्रुतौ क्रोशपटहताडन मन्त्रः ॥

[हिन्दी टीका]–इस मंत्र को १०८ बार जप कर दष्ट पुरुष के सामने खूब बाजे बजने से विष दूर हो जाता है ॥१९॥

मंत्रोद्धार :–ॐ नमो भगवति वृद्ध गरुडाय सर्व विष नाशिनि छिन्द-२ भिद-२ गृल्ल-२ एहि-२ भगवति विद्ये हर-२ हुं फट् स्वाहा ।

धृत्वार्धचन्द्र मुद्रां दक्षिण भागेऽहिर्दशिनः स्थित्वा ।
वदतु तव गौरिदानीं तस्करलोकेन नीतेति ॥२०॥

[संस्कृत टीका]–'धृत्वार्धचन्द्रमुद्राम्' अर्धचन्द्राकारां-वामकराङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां धृत्वा मुद्राम् । क्व ? 'दक्षिण भागे' दक्षिणदिग्भागे । कस्य ? 'अहिर्दशिनः' सर्पदष्ट पुरुषस्य । 'स्थित्वा' उषित्वा । 'वदतु' भाषताम् । किं वदतु ? 'तव गौः' त्वदीया गौः । 'इदानीं' साम्प्रतं । 'तस्करलोकेन' दस्युजनेन । 'नीतेति' गृहीत्वा नीतेति वदति ॥२०॥

[हिन्दी टीका]–उसके बाद सर्प दष्ट पुरुष के दाहिनी ओर बैठ कर बांये हाथ ने अर्द्धचंद्राकार मुद्रा बनाकर जोर से कहे कि तुम्हारी गाय को अभी-अभी चोर ले गये हैं ॥२०॥

तं समाहन्य पादेन याहीत्युक्ते स धावति ।
उत्थापयति तं शीघ्रं मन्त्र सामर्थ्यमीदृशम् ॥२१॥

[संस्कृत टीका]–'तं समाहन्य पादेन' तं दष्टपुरुषं मन्त्रिणा स्वपादेन आहन्य । 'याहीत्युक्ते' गच्छेत्युक्ते । 'स धावति' स दष्ट पुरुषो धावनं करोति । 'उत्थापयति तं शीघ्रं' तं दष्टपुरुषं झटित्युत्थापयति । 'मन्त्रसामर्थ्यमीदृशं' भगवत्या मन्त्र माहात्म्यमीदृशं एवं विधम् ॥२१॥

क्रोशपटहताडनेन दष्टोत्थापनविधानम् ॥

[हिन्दी टीका]—फिर मंत्रवादी तू जा, ऐसा कह कर जोर से एक लाथ सर्प दष्ट पुरुष को मारे, तो वह पुरुष एकदम खड़ा होकर भागने लगता है। इस प्रकार इस मंत्र का सामर्थ्य है, यह भगवती मंत्र है ॥२१॥

नाग कर्षणमंत्र

इदानीं नागाकर्षण मन्त्रविधानमभिधीयते—

नियुतजपात् संसिध्यति दशांश होमेन फणिसमाकृष्टिः ।

प्रणवादिः[1] स्वाहान्तः चिरिचिरि शब्दादिको मन्त्रः ॥२२॥

[संस्कृत टीका]—'नियुतजपात्' लक्षजपात् । 'संसिध्यति' सम्यक् सिद्धिं प्राप्नोति । केन ? 'दशांशहोमेन' दश सहस्त्रजपेन । 'फणिसमाकृष्टिः' नागाकर्षणम् । 'प्रणवादिः स्वाहान्तः' ॐकारादिः स्वाहाशब्दान्तः । 'चिरिचिरिशब्दादिको मन्त्रः'[2] चिरिचिरि[2] इति शब्दाद्यो मन्त्रः ॥२२॥

मन्त्रोद्धार :—ॐ चिरि[2] चिरि इन्द्रवारुणि ! एहि एहि कड कड स्वाहा ।

[हिन्दी टीका]—यह मंत्र एक लक्ष जाप करने से और दशांश होम करने से (दश हजार मंत्राहुति देने से) सिद्ध होता है ॥२२॥

मंत्रोद्धार :—ॐ चिरि-२ इण्द्रवारुणि एहि-२ कड-२ स्वाहा ।

नाग प्रेषणमन्त्रोऽशीति सहस्त्रैर्दशांश होमेन ।

सिध्यति जाप्येन पुनः शोणित करवीर पुष्पाणाम् ॥२३॥

[संस्कृत टीका]—'नाग प्रेषण मन्त्रः' नागानां क्षुद्रकर्मकरणप्रस्थापन-मन्त्रः । 'अशीति सहस्त्रैः' अशीति सहस्त्र प्रमाणैः जाप्येन कथम्भूतेन? 'दशांश होमेन' अष्ट सहस्त्र हवनेन । 'सिध्यति' सिद्धिं प्राप्नोति । 'पुनः' पश्चात् । केषां ? 'शोणित कर वीर पुष्पाणाम्' रक्तकरवीर पुष्पाणाम् ॥२३॥

नाग सम्प्रेषण मंन्त्रोद्धार :—ॐ नमो नागपिशाचि ! रक्ताक्षिभ्रुकुटि-मुखि ! उच्छिष्टदीप्ततेजसे ! एहि एहि भगवति ! हुं फट् स्वाहा ॥ नाग प्रेषण मन्त्रः ॥

[हिन्दी टीका]—नाग प्रेषण मंत्र का अस्सी हजार बार जप करने से और दशांश होम करने से सिद्ध होता है किन्तु लाल कनेर के पुष्पों से होम करे ॥२३॥

---

१. प्रणवादि स्वाहान्तश्चिरिचिरि शब्दादिको मन्त्रः इति ग पुस्तके पाठः ।

२. चिरि चिरि इति ग पाठः ।

मंत्रोद्धार :—ॐ नमो नाग पिशाचि रक्ताक्षि भृकुटी मुखी उच्छिष्ट दीप्त तेजसे एहि-२ भगवति गृह्ण-२ हुं फट् स्वाहा ।

यंत्र चित्र नं. ४३ देखे ।

वल्मीकनिकटे होमं कुर्यात् त्रिमधुरान्वितम् ।
मन्त्र सिद्धौ तमाज्ञाप्य प्रेषयेदुरगेश्वरम् ।।२४।।

[संस्कृत टीका]—'वल्मीकनिकटे' वामलूरसमीपे । 'होमं' हवनम् । 'कुर्यात्' करोतु । 'त्रिमधुरान्वितं' क्षीराज्य शर्करामिश्रित प्राग्भारीकृतप्रसूनान्वितम् । 'मन्त्रसिद्धौ' एतद्विधानेन कृत मंत्र सिद्धौ प्राप्तायां । 'तमाज्ञाप्य' तं नागेश्वरमाज्ञां कृत्वा । प्रेषयेदुरगेश्वरं' नागेश्वरं क्षुद्र कर्म करणे प्रस्थापयेत् ।। नामप्रेषण-कर्मकरण-जप-होमविधानमभिहितम् ।।२४।।

[हिन्दी टीका]—इस अनुष्ठान को बामी के पास घृत, दूध, और मधु (शर्करा) सहित होम करे तो मंत्र सिद्ध होता है जब सर्प आवे तो उसे इच्छित स्थान पर भेजे ।।२४।।

प्रेषितोऽहमनेनेति मा कस्यापि पुरो वदेः ।
अन्यमन्त्रेण मा गच्छ मानवं भक्षया मुकम् ।।२५।।

[संस्कृत टीका]'प्रेषितः' प्रस्थापितः । कः? 'अहं' नागः । केन? 'अनेन' मन्त्रवादिना । 'इति' एवम् । 'कस्यापि पुरो मा वदेः' कस्यापि पुरुषस्याग्रतः मा भाषस्व । 'अन्यमन्त्रेण मा गच्छ' एतन्मन्त्रं विहाय अन्यमन्त्रेण त्वं मा गच्छ । 'मानवं भक्षयामुकम्' अमुकं दुष्ट पुरुषं भक्षय ।। इति नाम प्रेषण विधानम् ।।२५।।

[हिन्दी टीका]—और उस नाग को कहेकि तू यह वार्ता दूसरे को नहीं कहना और अमुक का भक्षण कर और दूसरे के मंत्र से यह कार्य कभी मत करे ।।२५।।

यंत्र चित्र नं. ४४ देखे ।

दूत को गिराकर रोगी को अच्छा करना

इदानीं दूतपातनविधानमभिधीयते—

फणिदष्टस्य शरीरादौं स्वाहा मन्त्रतो विषं हृत्वा ।
सोमं धवलललाटाद् दूतं मन्त्रेण पातयेत् ।।२६।।

नागप्रेषण यंत्र नं. ४३ ,

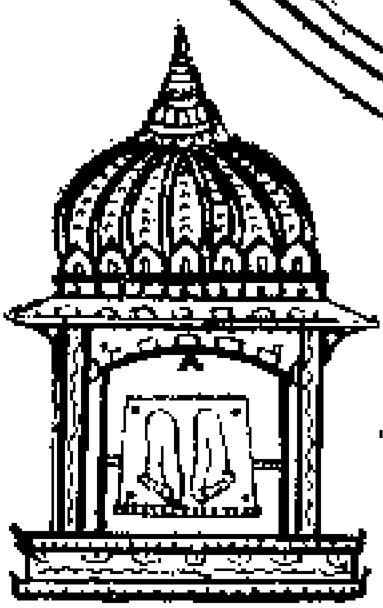

गरूडबन्ध यंत्र चित्र नं॰ ४४

[संस्कृत टीका]–'फणिदष्टस्य शरीरात्' सर्पदष्टस्य पुरुषस्य शरीरात् । 'उं स्वाहा मन्त्रतः' उँ स्वाहेति वक्ष्यमाणमन्त्रात् । 'विषम्' दष्ट पुरुषदेहस्थं विषम् । 'हृत्वा' अपहृत्य । कथम् ? 'सोमं श्रवत्' अमृतं श्रवमाणम् । कस्मात् ? 'ललाटात्' भालस्थलात् । 'दूतं' प्रेषकम् । 'मन्त्रेण पातयेत्' पातयितव्यः ।।२६।।

एतन्मन्त्रोद्धार :–उँ स्वाहा इत्यनेन मन्त्रेणविषमाह्रियते ।

उँ नमो भगवते वज्रतुण्डाय स्वाहा रक्ताक्षि कुनखि दूतं पातय पातय मर मर धर धर ठ ठ ठ हुँ फट् घे घे ।। इति दूतपातनमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]–ॐ स्वाहा मंत्र से सर्प दंशित पुरुष के शरीर में रहने वाले विष को, दूत पातन मंत्र से दूत को कपाल से झरते हुए अमृत से हरण करे ।।२६।।

दूत पातन मंत्रोद्धार :—ॐ नमो भगवते वज्र तुण्डाय स्वाहा रक्ताक्षि कुनखि दूतं पातय-पातय मर-मर धर-धर ठ ठ ठ हुं फट् घे घे ।

उँ लामों फड् मन्त्रोच्चारणतः पतति भोगिना दष्टः ।

उँ ह्रोमादिफडन्तो दष्ट पटच्छादनो मन्त्रः ।।

[संस्कृत टीका]–'उँ लामों फड् मन्त्रोच्चारणतः' । इत्यनेन मन्त्रोच्चारणेन भूमौ पतति । कः ? 'भोगिना दष्टः' सर्पेण दष्टपुरुषः । 'उँ ह्रोमादिफडन्तः' उँ स्वाहा शब्दमादिं कृत्वा फट्शब्दान्तः वक्ष्यमाणमन्त्रः । 'दष्ट पटच्छादनो मन्त्रः' पतित दष्ट पुरुषस्य शरीरोपरिवस्त्रच्छादनमन्त्रः ।।२७।।

मन्त्रोद्धार :–उँ लाँ उँ फड् इति दष्टपातन मन्त्रः ।

उँ स्वाहा रु रु रु रु ह्रौ प्लं सर्वं हारय संहारय उँ यूँ उँ उँ गरुडाक्षि उँ फट् ।। इति दष्टपटच्छादनमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]–ॐ (ई) लाँ ॐ फट् (ड्) इस मंत्र के उच्चारण से सर्प दष्ट पुरुष भूमि पर गिरता है ।।२७।।

दष्ट पातन मंत्र :–ॐ ई लाँ ॐ फड् (फट्)

दष्ट के उपर वस्त्र आच्छादन मंत्र :–ॐ स्वाहा रु रु रु रु रु रु ह्रौ प्लें हं सर्वं संहारय-२ ॐ यूं ॐ ॐ गरुडाक्षि ॐ फट् स्वाहा । इस मंत्र से दष्ट पुरुष को वस्त्र ओढाना चाहिए ।

मंत्र :–"ॐ ई लाँ ॐ फट् ।" वस्त्राच्छादन मंत्र (कपड़े से सांप काटे

मनुष्य ढकने का मंत्र) ॐ स्वाहा रु रु रु रु रु हो प्ले हुं सर्वं संहारय संहारय ॐ यूं ॐ गरुड़ाक्षि ॐ फट् स्वाहा ।।

पवननभोऽक्षर[1] मन्त्रेणाकृष्य च धावते ततो वस्त्रम् ।
अनुधावति तत्पृष्ठे यत्र पटः पतति तत्रासौ ।।२८।।

[संस्कृत टीका]–'पवननभोऽक्षर मन्त्रेण स्वाहेत्यक्षर मन्त्रेण । 'आकृष्य' दष्टाच्छादन परमाकृष्य । 'धावते' धावनं करोति । 'ततः' तस्मात् । वस्त्रं आच्छादनपटम् । 'अनुधावति तत्पृष्ठम्' तद्वस्त्रमाकृष्य यः पुरुषो धावति तत्पृष्ठं स दष्टः अनुधावति । 'यत्र पटः पतसि तत्रासौ' यस्मिन् स्थले तद् गृहीत पटः पतति तत्रैवासौ दष्टः पतति । स्वाहेति दष्टाच्छादित पटाकर्षण मन्त्रः ।।२८।।

[हिन्दी टीका]–फिर यह सर्प दष्ट पुरुष स्वाहा, इस मंत्र से वस्त्र उठाकर भागने वाले पुरुष के पीछे भागता है और जहां कहीं वस्त्र गिरता है वहीं वह दष्ट पुरुष भी गिर जाता है ।।२८।।

मंत्र :—स्वाहा ।

मन्त्रेणानेन फणी विषमुक्तो भवति जल्पितेन शनैः ।
अपहरति निजस्थानादशितेऽपि विषं न सङ्क्रमते ।।२९।।

[संस्कृत टीका]–'मन्त्रेणानेन' अनेन कथित मन्त्रेण । 'फणी विषमुक्तो भवति' सर्पो विषमुक्तो भवति । केन ? जल्पिते ।' वक्ष्यमाण मन्त्र पठनेन । 'शनैः' शनैरपि । 'अपहरित निजस्थानात्' स्वकीयस्थानात् दष्टस्य विषापहारो भवति । 'अशितेऽपि विषं न सङ्क्रमते' सर्पेण भक्षितेऽपि सति तस्य पुरुषस्यापि विषसङ्क्रमो न भवतीति निर्विषीकरणम् ।।२९।।

मन्त्रोद्धार :–ॐ नमो भगवते पार्श्वतीर्थङ्कराय हंसः महाहंसः पद्महंसः, शिवहंसः, कोपहंसः उरगेशहंसः पक्षि महाविषभक्षि हुँ फट्[1] ।। इति निर्विषीकरण मन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]–इस मंत्र का धीरे-धीरे जाप करने से सर्प का विष अपने स्थान से शीघ्र दूर हो जाता है फिर उसको कभी विष चढ़ता नहीं है ।।२९।।

निर्विषीकरण मंत्र :—"ॐ नमो भगवते पार्श्वतीर्थंकराय हंसः महाहंसः पद्महंसः शिवहंसः कोपहंस उरगेशहंसः पक्षिमहाविष भक्षि हुं फट् ।"

---

१. फट् स्वाहा इति ख पाठः ।

नाग को साथ चलाने का मंत्र

तेजो नमः सहस्त्रादि मंत्र प्रपठतः फणी ।
अनुयाति ततः पृष्ठं याहीत्युक्ते निवर्तते ।।३०।।

[संस्कृत टीका]—'तेजो नमः सहस्त्रादि मन्त्रं प्रपठतः' ॐ नमः सहस्त्र-जिह्वे ! इत्यादि मन्त्रं प्रपठतः पुरुषस्य । 'फणी' सर्पः । 'अनुयाति ततः पृष्ठं' तन्मन्त्रपठित पुरुषस्य पृष्ठमनुगच्छति । 'याहीत्युक्ते निवर्तते' स एवं सर्पः पुनरपि याहीत्युक्ते व्याघुटय गच्छति ।।३०।।

तन्मन्त्रोद्धार :—ॐ नमो सहस्त्रजिह्वे ! कुमुद भोजिनि! दीर्घकेशिनि! उच्छिष्ठभक्षिणी ! स्वाहा ।। इति नाग सहागमन मंत्रः ।।

[हिन्दी टीका]—ॐ नमो सहस्त्र जिह्वे कुमुद भोजिनि दीर्घ केशिनि उच्छिष्ठ भक्षिणि स्वाहा ।

इस मंत्र को पढ़ने वाले मंत्र वादी के साथ-साथ में सर्प चलने लगता है और चले जाओ कहने पर सर्प चला जाता है ।।३०।।

सर्प मुख किलन मंत्र, गति किलन मंत्र, दृष्टि किलन मंत्र

ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हुँ क्षूँ टान्तद्वितयेन फणिमुखस्तम्भः ।
हुँ क्षूँ ठठेति गमने दृष्टिं ह्रां क्षां ठठेति बन्धाति ।।३१।।

[संस्कृत टीका]—'ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हुँ क्षूँ । 'टान्तद्वितयेन' ठठेति मन्त्रेण । 'फणिमुखस्तम्भः' अनेन मन्त्रेण सर्पमुखस्तम्भो भवति । 'हुँ क्षूँ ठठेति गमने' हुँ क्षूँ ठ ठ इत्यनेन सर्पस्य गतिस्तम्भो भवति । 'दृष्टिं ह्रां ठ ठेति बध्नाति' सर्पस्य दृष्टिं ह्रां क्षां ठ ठ इति मन्त्रेण बध्नाति । इति फणिमुखगति दृष्टि स्तम्भन विधिः ।।३१।।

[हिन्दी टीका]—ॐ ह्रीं श्रीं ग्लौं हूं क्षूं ठः ठः, इस मंत्र के जाप से सर्प का मुख कीलित होता है ।

मंत्र :—हुँ क्षूँ ठः ठः, इस मंत्र से सर्प की गति का स्तंभन होता है ।
ह्राँ क्षाँ ठः ठः, इस मंत्र से सर्प की दृष्टि का स्तंभन होता है ।

सर्प को कुण्डलाकार बनाने का मंत्र

यामं सुवर्ण रेखाया गरुडाज्ञापयत्यतः ।
स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य कुण्डलीकरणं कुरु ।।३२।।

[संस्कृत टीका]–'वामं सुवर्ण रेखायाः' उँ सुवर्ण रेखाया इति पदम् । 'गरुडाज्ञापयतीति पदम् । 'स्वाहान्तं मन्त्रमुच्चार्य' स्वाहाशब्दमन्तेकृत्वा तन्मन्त्रं पठित्वा । 'कुण्डली करणं कुरु' ।।३२।।

मन्त्रोद्धार :– उँ सुवर्ण रेखाया गरुडाज्ञापयति कुण्डलीकरणं कुरु कुरु स्वाहा ।

[संस्कृत टीका]–इस मंत्र का जाप करने से सर्प कुण्डलाकार होता है।

मंत्र :—ॐ सुवर्ण रेखाया गरुडा ज्ञापयति कुण्डली करणं कुरु कुरु स्वाहा ।।३२।।

सर्प घट प्रवेश मंत्र

सप्रणवः स्वाहान्तो ललललललसंयुतः करोत्येषः ।
मन्त्रो घटप्रवेशं क्षणेन नागेश्वरस्यापि ।।३३।।

[संस्कृत टीका]–'सप्रणवः स्वाहान्तः' उँकारादिः स्वाहाशब्दान्तः । 'ललललललसंयुतः' लललललल इत्यक्षरैः षड्भिर्युक्तः । 'करोति' कुरुते । 'एषः मन्त्रः । एतत्कथितमन्त्रः किं करोति ? 'घटप्रवेशं' कुम्भप्रवेशं । 'क्षणेन' क्षणमात्रेण । कस्य ? 'नागेश्वरस्यापि' नागाधिपस्यापि क्षणेन घटप्रवेशं करोति ।।३३।।

मन्त्रोद्धार :– उँ लललललल स्वाहा ।। फणिकुम्भप्रवेशनमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]–इस मंत्र का जाप्य करने से नागों का ईश्वर भी क्यों न हो उसको भी एक ही क्षण में घट में प्रवेश करना पड़ता है ।।३३।।

मंत्रोद्धार :—"ॐ ल ल ल ल ला ला स्वाहा ।"

नाग स्तम्भक रेखा मंत्र

उँ ह्रां ह्रीं गरुडाज्ञा ठठेति तन्मुद्रया कृतां रेखाम् ।
भुजगो मरणावस्थां न लङ्घते तां कदाचिदपि ।।३४।।

[संस्कृत टीका]–उँ ह्रां ह्रीं गरुडाय ठठेति' उँ ह्रां ह्रीं गरुडाज्ञा ठ ठ इत्यनेन मन्त्रेण । 'तन्मुद्रया' गुरुडमुद्रया । 'कृतां रेखाम्' मन्त्रिणा भूमौ कृतां रेखां । 'भुजगो 'मरणावस्थः सर्पो मरणावस्थां प्राप्तः। 'न लङ्घते' लङ्घयं कर्तुं न शक्नोति । 'कदाचिदपि' कस्मिश्चित्कालेऽपि ।।३४।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ ह्रां ह्रीं गरुडाय ठ ठ ।। इति रेखा मन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]—गरुडमुद्रा से इस मंत्र का जाप्य करके रेखा खींचे तो उस रेखा का किसी भी काल में, उल्लघन सर्प नहीं कर सकता और वह मरण तुल्य हो जाता है ।।३४।।

रेखा मंत्र :—"ॐ ह्रां ह्रीं गरुडाय ठः ठः ।"

खटिका फणिदर्शन विधान

कपिकच्छूरसभावितखटिका प्रणवादिनील परिजप्त्वा ।
लेख्यस्तयोपदेशात् खटिकासर्पः शनेर्वारे ।।३५।।

[संस्कृत टीका]—'कपिकच्छूरसभावित खटिका' कण्डुकरीरसेन सप्तवारं भाविता खटिका । 'प्रणवादिनील परिजप्त्वा' सा खटिका प्रणवादि-नील मन्त्रेण समं जप्त्वा । 'लेख्यस्तया' खटिकया लेखनीयः । कथम् ? 'उपदेशात्' उपदेशपूर्वेण । कः ? 'खटिकासर्पः' तत्खटिकालिखितसर्पः । कस्मिन् ? 'शनेर्वारे' शनिदिने ।।३५।।

मन्त्रोद्धार :—ॐ नील विष महाविष सर्प संक्रामणि ? स्वाहा । इति विष संक्रामणमन्त्रः ।।

[हिन्दी टीका]—खडिया (खटिका) को कौंच के रस में सात बार भावना देकर उस पर निम्नोक्त मंत्र से शनिवार को एक सर्प का चित्र बनावे ।।३५।।

मंत्रोद्धार :—ॐ नील विष महाविष सर्प संक्रामणि स्वाहा ।

यो हन्यात् तद्वक्त्रं खटिकासर्पो दशति नात्र सन्देहः ।
दृष्ट्वा करतलदशनं मूर्च्छति विषवेदनाकुलितः ।।३६।।

[संस्कृत टीका]—'यो हन्यात् तद्वक्त्रं खटिकासर्पो दशति नात्र संदेहः' अत्र खटिका सर्प विधाने सन्देहो न कार्यः । 'दृष्ट्वा करतल दशनं' तत्सर्पदशनदंशं करतले दृष्ट्वा । 'मूर्च्छति' पुरुषो मूर्च्छां प्राप्नोति । कथम्भूतः ? 'विषवेदनाकुलितः' विषजनितवेदनाकुलितः । इति खटिकासर्पकौतुकविधानम् ।।३६।।

ॐ क्रों प्रों त्रों ठः मन्त्रेण विषं हूंकारमध्यगं जप्त्वा

[हिन्दी टीका]—जो कोई उस चित्र सर्प के मुख पर मारता है, उसको वह चित्रसर्प काट लेता है । और उस सर्प दंश को देख कर विषवेदना से वह व्यक्ति

मूर्च्छित हो जाता है । इस खटिका सर्प विधान में संदेह नहीं करना चाहिये ।।३६।।

*फिर मंत्रवादी उस चित्रसर्प दंशित पुरुष के हृदय, कण्ठ, मुख, मस्तक और शिर को क्रमशः देखे कि स्तम्भन ही है या आखों को धोंखा है ।

स्तंभन का निश्चय हो जाने पर खटिका पर लिखे हुए चित्र सर्प पर "ॐ क्षां क्षीं" इस मंत्र के पढ़ने से वह दष्ट पुरुष विषको छोड़कर भोजन कर सकता है अर्थात् निर्विषहो जाता है ।

नोट :—पुष्प का चिन्ह जहां से है वह वर्णन अन्य प्रतियों में नहीं है मात्र कापड़ियाजी के ग्रंथ में है ।

विषभक्षण मंत्र

ॐ क्रौं प्रों श्रीं ठः मंत्रेण विषं हूँकारमध्यगं जप्त्वा ।
सूर्यं दशावलोक्य भक्षयेत् पूरकात् ततः ।।३७।।

अतः परं मूलविषविधानमभिधीयते—

[संस्कृत टीका]—'ॐ क्रौं प्रों श्रीं ठः मन्त्रेण' अनेन मन्त्रेण । 'विषं' स्थावरविषम् । कथम्भूतम् ? 'हूँकारमध्यगम्' करतल हूँकार मध्ये स्थितं विषं कथित मन्त्रेण । 'जप्त्वा' अभिमन्त्र्य । 'सूर्यं' रविं । 'दशावलोक्य' दृष्टया निरीक्ष्य । 'भक्षयेत्' विषभक्षणं कुर्यात् । कथम् ? 'पुरकात् ततः' पूरकयोगात् ।।३७।।

मंत्रोद्धार :--ॐ क्रौं प्रों श्रीं ठः । इति विषभक्षण मन्त्रः ।

[हिन्दी टीका]—हाथ की हथेली में हूँकार के मध्य में स्थावर विष को रखकर पूरक योग में सूर्य की दशा देखकर (अथवा सूर्य के सामने देखते हुए) इस मंत्र से मंत्रित करके भक्षण कर जावे ।।३७।।

मंत्रोद्धार :—"ॐ क्रौं प्रों त्रीं ठः ।"

विष से शत्रुनाशन

प्रतिपक्षाय दातव्यं ध्यात्वा नीलनिभं विषम् ।
ग्लौं ह्लौं मन्त्रयित्वा तु ततो घे घेति मन्त्रिणा ।।३८।।

[संस्कृत टीका]—'प्रतिपक्षाय' शत्रुलोकाय । 'दातव्यं' देयम् । 'ध्यात्वा' ध्यानं कृत्वा । कथम्भूतम्! 'नीलनिभम्' निलवर्णस्वरूपम् । किम् ? विषं' मूलविषम् । किं कृत्वा ? 'ग्लौं ह्लौं मन्त्रयित्वा' इति मन्त्रेणाभिमन्त्र्य । 'तु' पुनः । 'ततः' ग्लौं

ह्रौं इति बीजद्वयात् । 'घेघेति' घे घे इति पदं जपित्वा । केन ? 'मन्त्रिणा' मन्त्रवादिना ॥३८॥

मन्त्रोद्धार :— ग्लौं ह्रौं घे घे । इति प्रतिपक्षाय नीलध्यानेन युक्तविषदानमन्त्र ॥

[हिन्दी टीका]—शत्रु को विष देते समय ग्लौं क्रौं घे घे, मंत्र से मंत्रित करता हुआ नीले वर्ण का ध्यान करे, और भक्षण करा देवे ॥३८॥

विषनाशन मंत्र

मुनिहयगन्धाघोषा वन्ध्या कटुतुम्बिका कुमारी च ।
त्रिकटुककुष्ठेन्द्रयवा घ्नन्ति विषं नस्यपानेन ॥३९॥

[संस्कृत टीका]—'मुनिः' अगस्तिः । 'हयगन्धा' अश्वगन्धा । 'घेष' देवदालो (देवदारू) । 'वन्ध्या' कर्कोटी । 'कटुतुम्बिका' कटुकालाबुका । 'कुमारी' गृह कन्या । 'त्रिकटुकं' चूषणम् । 'कुष्टम्' त्वक । 'इन्द्रयवा' कुटजबीजम् । 'घ्नन्ति' नाशयन्ति । 'विषं' स्थावरजङ्गमविषम् । 'नस्यपानेन' एतदौषधानां नश्नेन पानेन सर्वं विषं नश्यति ॥३९॥

[हिन्दी टीका]—अगस्त्य, असगंध, घोषा (तोरई) बन्ध्या (कर्कोटी) कड़वी तुम्बी घृतकुमारी, त्रिकटु (सोंठ, पीपल, कालीमिरच) कूठ और इन्द्र जौ को सुंघाने और पिलाने से स्थावर जंगम सभी प्रकार के विष का नाश हो जाता है ॥३९॥

द्विपमलभूतच्छत्रं रविदुग्धं श्लेष्मतरुफलोपेतम् ।
वृश्चिकविषसङ्क्रामं बदरीतरुदण्डसंयोगात् ॥४०॥

[संस्कृत टीका]—'द्विपमलभूतच्छत्रं' द्विरदमलोद्भूतच्छत्रम् । 'रविदुग्धं' मार्तण्डक्षीरम् । 'श्लेष्मतरुफलोपेतम्' श्लेष्मातकफलचिक्कणान्वितम्। 'वृश्चिक विषोत्सारणं अन्येषां विष संक्रामम् । 'बदरीतरुदण्ड संयोगत् । पुष्यार्के ऊर्ध्वाधोगत कण्टकद्वयान्वित बदरी शलाकां गृहीत्वा तदौषधत्रयलेपं कृत्वा ऊर्ध्वकण्टकेनोत्तार्य अधोगतकण्टकेन अन्योऽन्यं संक्रामति ॥४०॥

[हिन्दी टीका]—हाथी के मल (लीद) से उत्पन्न होने वाले छत्र वनस्पति को, आकडे का दूध और बड़गुंद के अन्दर से निकलने वाला चिकरणा पदार्थ इन तीनों औषधियों का लेप करके, पुष्यनक्षत्र में ग्रहण किया हुआ जिसके ऊपर नीचे

कांटे हैं ऐसी बेर की लकड़ी से बिच्छु का जहर उतर जाता है और संक्रमण होता है। वह इस प्रकार है—ऊपर के कांटे से जहर उतर जाता है और नीचे के कांटे से जहर का संक्रमण होता है ॥४०॥

घर से सर्प भगाने का मंत्र

षट्कोणभवन मध्ये कुरुकुल्लां यो लिखेद् गृहे विद्याम् ।
तत्र न तिष्ठति नागो लिखिते नागारिबन्धेन ॥४१॥

[संस्कृत टीका]--'षट्कोण भवनमध्ये' षट्कोण चक्रमध्ये । 'कुरुकुल्लां' कुरुकुल्लानामदेव्या मन्त्रः । 'यो लिखेद्' यः कोऽपि मन्त्रवादी लिखेत् । क्व ? 'गृहे' गृहदेहल्याम्' स्ववासोत्तराङ्गे । काम् ? 'विद्याम्' कुरुकुल्लादेव्या विद्याम् । 'तत्र' तस्मिन् गृहे । 'न तिष्ठति' न स्थाति । कः ? 'नागः' सर्पः । कस्मिन् कृते सति ? 'लिखिते' सति । केन ? 'नागारिबन्धेन' गरुडबन्धेन ॥४१॥

मन्त्र :—ऊँ कुरु कुल्ले ! हूँ फट् ॥

[हिन्दी टीका]—घर में प्रवेश करने के द्वार के ऊपर की ओर गरूड (षट्कोण) यंत्र बनाकर उसमें गरूड बंध मंत्र लिखे तो उस सर्प घर से भाग जाता है ॥४१॥

मंत्र :—ॐ कुरू कुल्ले हूँ फट् । देखे यंत्र चित्र नं. ८४ ।

शिष्य को विद्या देने का विधान

इदानीं मण्डलोद्धारणमभिधीयते—

चतुरस्रं मन्डलमतिरमणीयं पञ्चवर्णचूर्णेन ।
प्रविलिख्य चतुःकोणे तोयभृतान् स्थापयेत् कलशान् ॥४२॥

[संस्कृत टीका]—'चतुरस्त्रं' समचतुरस्त्रम् । 'मण्डलं' वक्ष्यमाणमण्डलम् । 'अतिरमणीयं' अत्यन्तशोभमानम् । 'पञ्चवर्ण चूर्णेन' श्वेतरक्तपीतहरितकृष्णमिति पञ्चवर्णचूर्णेन । 'प्रविलिख्य' प्रकर्षेण लिखित्वा । 'चतुःकोणे' तन्मण्डल चतुःकोणे । 'तोयभृतान्' जलपरिपूर्णान् । स्थापयेत् । कान् ? 'कलशान्' कुम्भान् ॥४२॥

[हिन्दी टीका]—चार कोने से सहित मणिय पंचवर्ण चूर्ण से एक मंडल बनावे और मंडल के चारों कोनों में पानी से भरे हुए कलशों की स्थापना करे ॥४२॥

→ कुरुकुल्ला विद्या का यंत्र नं॰ ४४ ←

तस्योपरि विपुलतरं मण्डपमतिसुरभिपुष्पमालिकाकीर्णम् ।
चन्द्रोपकध्वजतोरण घण्टारवदर्पणोपेतम् ।।४३।।

[संस्कृत टीका]—'तस्योपरि' तन्मण्डलोपरि । 'विपुलतरं' अतिविस्तीर्णम्। 'मण्डपं' । कथम्भूतम् ? 'अतिसुरभिपुष्पमालिकाकीर्णं' । पुनः कथम्भूतम् ? 'चन्द्रोपकध्वजतोरण घण्टारवदर्पणोपेतम्' वितानध्वजवन्दनमालाक्षुद्र घण्टिका विशिष्ट-दर्पणान्वितम् ।।४३।।

[हिन्दी टीका]—फिर उस मंडल को नाना प्रकार की पुष्पमालाओं से और दर्पण, ध्वजा, घंटी चंद्रोपक आदि से सज्जित कर देवे ।।४३।।

पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रं प्रत्येकं प्रवणपूर्वहोमान्तम् ।
अष्टदलकमलमध्ये हिमकुङ्कुममलयजैर्विलिखेत् ।।४४।।

[संस्कृत टीका]—'पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रं' अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधूनां मंत्रम अमुं च कथम्भूतम् ? 'प्रत्येकं' पृथक्पृथक् । 'प्रणवपूर्व होमान्तम्' उँकारादिस्वाहाशब्दान्तम् । 'अष्टदलकमल मध्ये' अष्टदलाम्बुजमध्ये-अष्टदलकर्णिकामध्ये । हिमकुङ्कुममलयजैः' कर्पूरकाश्मीर श्री गन्धैः । 'विलिखेत्' विशेषेण लिखेत् ।।४४।।

मन्त्रोद्धार :—उँ अर्हद्भ्यः स्वाहा, उँ सिद्धेभ्यः स्वाहा, उँ सूरिभ्यः स्वाहा, उँ पाठकेभ्यः स्वाहा, उँ सवसाधुभ्यः स्वाहा । इति पञ्च परमोष्ठिनां मन्त्रं कर्णिकामध्ये लिखेत् ।।

[हिन्दी टीका]—फिर केशर, कर्पूरादि पदार्थों से अष्टदल कमल बनावे और कर्णिका में निम्नोक्त मंत्र लिखे ।।४४।।

मंत्रोद्धार :—ॐ अर्हद्भ्यः स्वाहा, ॐ सिद्धेभ्यः स्वाहा ॐ सूरिभ्यः स्वाहा, ॐ पाठकेभ्यः स्वाहा, ॐ सर्वसाधुभ्यः स्वाहा । इस मंत्र को कर्णिका में लिखें ।

पूर्वाग्न्यादिषु दद्याज्जयाविजम्भादि देवता ह्येताः ।
तद्दक्षिणदिग्भागे हेममयीं पादुकां देव्याः ।।४५।।

[संस्कृत टीका]—'पूर्वाग्न्यादिषु' पूर्वादिचतुर्दिशासु आग्नेय्यादि चतुर्विदिशासु च । 'हि' स्फुटम् । 'एताः' कथितदेवताः । 'तद्दक्षिणदिग्भागे' तन्मण्डलदक्षिणदिक्प्रदेशे । 'हेममयीं' स्वर्ण विनिर्मिताम् । 'पादुकां देव्याः' पादुकाद्वयं दद्याद् देव्याः ।।

स्थापनक्रम :—जये स्वाहेति प्राच्यां दिशि, उँ विजये स्वाहेति

दक्षिणायां दिशि, ॐ अजिते स्वाहेति प्रतीच्यां दिशि, ॐ अपराजिते स्वाहेति उत्तरस्यां दिशि, ॐ जम्भे स्वाहेत्याग्नेय्यां दिशि, ॐ मोहे स्वाहेति नैऋत्यां दिशि, ॐ स्तम्भे स्वाहेति वायव्यायां दिशि, ॐ स्तम्भिनि स्वाहेतीशान्यां दिशि, इत्यष्टदलेषु जयादि जम्भादि देवता विलिखेत् ।।४५।।

[हिन्दी टीका]—इस अष्टदल कमल के पूर्वादि दिशाओं के दलों में जयादि देवियों के नाम लिखे और विदिशाओं अग्निकोणादिओं में जम्भादि देवियों के नाम लिखे और दक्षिण दिशा के भाग में देवी की स्वर्णमयी पादुका बनावे ।।४५।।

दलों में नाम लिखने का क्रम:—पूर्व में ॐ जयायै स्वाहा ।
आग्नेय में ॐ जम्भायै स्वाहा ।
दक्षिण में ॐ विजयायै स्वाहा ।
नैऋत्य में ॐ मोहयै स्वाहा ।
पश्चिम में ॐ अजितायै स्वाहा ।
वायव्य में ॐ स्तंभायै स्वाहा ।
उत्तर में ॐ अपराजितायै स्वाहा ।
इशान्य में ॐ स्तंभिन्यै स्वाहा ।

अभ्यर्च्य गन्धतन्दुलकुसुमनिवेद्य प्रदीप धूप फलैः ।
परमेष्ठिनं च मन्त्रं भैरव पद्मावतीपादौ ।।४६।।

[संस्कृत टीका]—'अभ्यर्च्य' अभिपूज्य । कैः ? 'गन्धतन्दुलकुसुम निवेद्य प्रदीप धूप फलैः' श्री गन्धाक्षतपुष्पचरुनैवेद्यदीप धूप फलाद्यष्टविधार्चना द्रव्यैः । 'परमेष्ठिनंच मन्त्रम्' पञ्चपरमेष्ठिमन्त्रम् । 'अभ्यर्च्य' पूजयित्वा । 'पूजयेत् भैरव पद्मावती पादौ' भैरव पद्मावती देव्याः पादौ--स्वर्ण पादुके अपि पूजयेत् ।।४६।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद परमेष्ठी यंत्र मंत्र और पद्मावती देवी के चरणों की जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप और फलों से अर्चन करे ।।४६।।

नोट :—देवीपूजा यंत्र चित्र नं ४८, पेज नं. १८१ पर देखें ।

परसमयजन विरक्तं शिष्यं जिनसमयदेवगुरुभक्तम् ।
कृतवस्त्रालङ्कारं संस्नातं मण्डलाभिमुखम् ।।४७।।

[संस्कृत टीका]—'परसमयजन विरक्तम्' मिथ्याशासन लोक विरक्त'। 'शिष्यं' विनेयं पुन कथम्भूतम् ? 'जिनसमयदेवगुरुभक्तम्' जिनशासनदेवतासद्गुरुभक्तम्। कृतवस्त्रालङ्कारो येनासौ कृतवस्त्रालङ्कारः तम् कृतवस्त्रालङ्कारम्। पुनः कथम्भूतम् ? 'संस्नातम्' सम्यक्स्नातम्। 'मण्डलाभिमुखम्' उद्धारित मण्डलस्याभिमुखम् ।।४७।।

[हिन्दी टीका]—उसके बाद कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरू से विरक्त रहने वाले विनयी शिष्य को स्नान कराकर वस्त्रालकारों से सजाकर मंडल के सामने लावे ।।४७।।

संस्नाप्य चतुःकलशैः सहिरण्यैस्तं ततोऽन्यवस्त्रादीन् ।
दत्त्वा तस्मै मन्त्रं निवेदयेत् गुरुकुलायातम् ।।४८।।

[संस्कृत टीका]—'संस्नाप्य' तं शिष्यं सम्यक्स्नापयित्वा। कैः ? 'चतुःकलशैः' प्राग्मण्डलकोणस्थ चतुः पूर्णकलशैः। कथम्भूतैः ? 'सहिरण्यैः' स्वर्णयुक्तैः 'तं' शिष्यम्। 'ततः' स्नानानन्तरम्। 'अन्यवस्त्रादीन्दत्त्वा' पूर्वं वस्त्रादीनपहायान्य नूतन नववस्त्रादीन् दत्त्वा। 'तस्मै' एवं विधशिष्याय। 'मन्त्रं निवेदयेत्'। कथम्भूतं मन्त्रम् ? 'गुरुकुलायातम्' 'गुरुपारम्पर्येणागतम्[१] ।।४८।।

[हिन्दी टीका]—मंडल पर रखे हुए कलशों से स्नान कराकर अन्य वस्त्र आदि देकर गुरू परंपरा से चला आया मंत्र देवे ।।४८।।

भवतेऽस्मभिर्दत्तो[२] मन्त्रोऽयं गुरुपरम्परायातः ।
साक्षीकृत्य हुताशनरविशशितारांम्बराद्रिगणान् ।।४९।।

[संस्कृत टीका]—'भवते' तुभ्यं शिष्याय। 'अस्माभिर्दत्तः'। 'मन्त्रोऽयं' प्राक्कथित मन्त्रः। कथम्भूतः ? 'गुरुपरम्परायातः' गुरुपारम्पर्येणागतः। किं कृत्वा ? 'साक्षीकृत्य' साक्षिकं कृत्वा। कान् ? 'हुताशनरविशशितारांम्बराद्रिगणान्' अग्न्यर्कचन्द्रनक्षत्राकाद्रि समूहान् ।।४९

[हिन्दी टीका]—अग्नि, सूर्य, चंद्र, नक्षत्र और आकाश की साक्षीपूर्वक गुरू परंपरा से चला आया हुआ मंत्र तुम को देता हूं, इस प्रकार शिष्य को कहे ।।४९।।

भवतापि न दातव्यः सम्यक्त्व विवर्जिताय पुरुषाय ।
किन्तु गुरुदेव समयिषु भक्तिमते गुणसमेताय ।।५०।।

---

१. क्रमायातम् ख पाठः।
२. माया क पाठः।

[संस्कृत टीका]–'भवतापि' त्वयापि। 'न दातव्यः' न देयः। कस्मै ? 'सम्यक्त्वविवर्जिताय' सम्यक्त्व विहीनाय। 'पुरुषाय' नराय। 'किंतु' अथवा। 'गुरुदेव समयेषु भक्तिमते' गुरुदेव समये भक्तियुक्ताय। 'गुणसमेताय' सकल गुण संयुक्ताय एवं गुण विशिष्टाय पुरुषाय दातव्यः ॥५०॥

[हिन्दी टीका]–यह मंत्र तुमको मैंने दिया है, तुम इस मंत्र को मिथ्या दृष्टि लोग हैं उनको कभी नहीं देना, जो सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के भक्त हैं सुपात्र हैं ऐसे गुणवान पुरुषों को ही देना ॥५०॥

लोभादथवा स्नेहाद्दास्यसि चेदन्यसमयभक्ताय।
बालस्त्रीगोमुनिवधपापं यत्तद्भविष्यति ते ॥५१॥

[संस्कृत टीका]–'लोभात्' अर्थाभिलाषात्। अथवा 'स्नेहात्' व्यामोहात्। 'दास्यसि चेत्' यदि इमां विद्यां दास्यसि। कस्मै ? 'अन्यसमयभक्ताय' पर समयभक्ति-युक्ताय। तदा 'बालस्त्रीगोमुनिवधपापं यत्' बालक स्त्रीजन गोमुनिजन हननेन यत् पापम्। 'तद्भविष्यति ते' तत् पापं तव भविष्यति ॥५१॥

[हिन्दी टीका]–इस मंत्र विद्या को यदि लोभ से, स्नेह से अथवा अन्य स्वार्थ से मिथ्यादृष्टियों को दिया तो तुमको बाल हत्या, स्त्री हत्या, गोवध, मुनिवध का पाप लगेगा ॥५१॥

इत्येवं श्रावयित्वा तं सन्निधौ गुरुदेवयोः।
मन्त्री समर्पयेन्मन्त्रं साधनयोगतः ॥५२॥

[संस्कृत टीका]–'तं' मन्त्रग्राहकम्। 'इत्येवं श्रावयित्वा' इत्यनेन प्रकारेण शपथं कारयित्वा। कथम्? 'सन्निधौ गुरु देवयोः' गुरुदेवयोः सन्निधाने। 'मन्त्री' मन्त्र-वादी। 'समर्पयेत्' नियोजयेत्। कम् ? 'मन्त्रम्' गुरुपरम्परयागतं मन्त्रम्। कथम् ? 'मन्त्रसाधनयोगतः' मन्त्राराधनविधानयोगात् ॥५२॥

[हिन्दी टीका]–फिर मंत्रवादी शिष्य को देव गुरु की साक्षी देकर मंत्र साधन के विधानानुसार मंत्र देवे–ऐसी गुरु परंपरा है ॥५२॥

ग्रन्थकार की गुरु परम्परा

सकलनृपमुकुटघटित चरणयुगः श्रीमदजितसेनगणी ।
जयतु दुरितापहारी भव्यौघ भवार्ण वोत्तार ॥५३॥

[संस्कृत टीका]–'सकलनृपमुकुटघटित चरण युगः' सकल भूपालमुकुट-घटितपादारबिन्दद्वयः । 'श्रीमदजितसेनगणी' श्रीमदजितसेनाचार्यः। 'जयतु' सर्वोत्कर्षेण वर्तताम् । 'दुरितापहारी' पापापहारी । पुनः कथम्भूतः ? 'भव्यौघ भवार्णवोत्तारी' भव्यजन समूहस्य संसार समुद्रोत्तारकः ॥५३॥

[हिन्दी टीका]–जिनके चरण युगल राजाओं के सिर पर शोभित मुकुट मणियों से वंदित हैं जो पाप के नाशक हैं भव्यजनों को संसार समुद्र से पार उतारने वाले हैं ऐसे श्री अजितसेनगणि मुनि सदा काल जयवंत हों ॥५३॥

जिन समयागमवेदी गुरुतर संसार कान नोच्छेदी ।
कर्मेन्धनदहनपटुस्तच्छिष्यः कनकसेनगणिः ॥५४॥

[संस्कृत टीका]–'जिनसमयागमवेदी' जिनेश्वर समयसकलागमज्ञाता । 'गुरुतरसंसारकाननोच्छेदी' दुर्धरसंसृति कान्तारोन्मूलनसमर्थः । 'कर्मेन्धनदहनपटुः' सकल कर्मेन्धनदहनक्रियायां अतीव दक्षः । 'तच्छिष्यः' श्रीमदजितसेनाचार्यस्य शिष्यः । कः ? 'कनकसेनगणिः' कनकसेनाचार्यः ॥५४॥

[हिन्दी टीका]–आगम वेदी, संसार रूपी वन को छेदने वाले कर्म रूपी ईन्धन को जलाने में चतुर श्री कनकसेनगणि उनके शिष्य थे ॥५४॥

चारित्रभूषिताङ्गो निःसङ्गो मथितदुर्जयानङ्गः ।
तच्छिष्यो जिनसेनो बभूव भव्याब्जधर्मांशुः ॥५५॥

[संस्कृत टीका]–'चारित्रभूषिताङ्गः' सकल चारित्रभूषित शरीरः । 'निःसङ्गः' बाह्याभ्यन्तर परिग्रहरहितः । 'मथितदुर्जयानङ्गः' दुर्जयश्चासौ अनङ्गश्च दुर्जयानङ्गः मथितो दुर्जयानङ्गो येन स मथितदुर्जयानङ्गः निर्जितमदनः । 'तच्छिष्यः' कनकसेनाचार्यस्य शिष्यः । कः ? जिनसेनाचार्यः । 'बभूव' संजातः । कथम्भूतः ? 'भव्याब्जधर्मांशुः' भव्यकमलप्रबोधन दिवाकरः ॥५५॥

[हिन्दी टीका]–चरित्र ही जिनका शरीर-भूषण है। बाह्याभ्यंतर परिग्रह के त्यागी हैं और जो दुर्जय कामदेव को नष्ट करने वाले हैं, भव्य रूपी कमलों लिये सूर्य के समान हैं, ऐसे श्री जिनसेन स्वामी उनके कनकसेन मुनि के शिष्य थे ।।५५।।

तदीयशिष्योऽजनि मल्लिषेणः सरस्वतीलब्धवर प्रसादः ।
तेनोदितो भैरवदेवताया कल्पः समासेन चतुःशतेन ।।५६।।

[संस्कृत टीका]–'तदीयशिष्यः' जिनसेनाचार्यस्य शिष्यः। 'अजनि' जातः। कः ? 'मल्लिषेण' मल्लिषेणाचार्यः । कथम्भूतः ? 'सरस्वतीलब्धवर प्रसादः' सरस्वती देव्याः सकाशात् प्राप्तवरप्रसादः । 'तेन' मल्लिषेणाचार्येण । 'उदितः' कथितः । 'भैरव देवतायाः' भैरव पद्मावती देव्याः । 'कल्पः' मन्त्रवाद समूहः । 'समासेन' संक्षेपेण । 'चतुशतेन' चतुः शत सङ्ख्या ग्रन्थ प्रमाणेन ।।५६।।

[हिन्दी टीका]–श्री आचार्य जिनसेन के सुयोग्य शिष्य श्री मल्लिसेन मुनि थे, जिन पर सरस्वती देवी की कृपा थी, उन आचार्य मल्लिसेन ने यह भैरव पद्मावती कल्प मंत्र—स्तोत्रादि सहित चार सौ श्लोकों में बनाया है ।।५६।।

यावद्वार्धिमहीधरतारागणगगनचन्द्र दिनपतयः ।
तिष्ठन्ति तावदास्तां भैरव पद्मावती कल्पः ।।५७।।

[संस्कृत टीका]–'यावत्' यावत्कालपर्यन्तम् । 'वार्धिः' समुद्रः । 'महीधरः' कुल शैलः । 'तारागणः' नक्षत्र समूहः । 'गगनं' आकाशः । 'चन्द्र' मृगाङ्कः । 'दिनपतिः' मार्तण्डः । एते वार्ध्यादयो यावत्कालपर्यंतं 'तिष्ठन्ति' स्थास्यन्ति । 'तावत्' तावत्कालपर्यन्तम् । 'आस्ताम्' तिष्ठतु । 'भैरव पद्मावती कल्पः' 'भैरव पद्मावतीनाम-देव्याः मन्त्रकल्पः ।।

[हिन्दी टीका]–जबतक समुद्र, पर्वत, तारागण, आकाश, चन्द्र और सूर्य रहेंगे तब तक यह भैरव पद्मावती कल्प भी बना रहे ।।५७।।

इत्युभय भाषाकविशेखर श्री मल्लिषेण सूरिविरचितो भैरव पद्मावती कल्पः समाप्तः ।।

श्री उभय भाषा कवि श्री मल्लिषेणाचार्य विरचित भैरव पद्मावती कल्प के गरुडाधिकार की हिन्दी विजया टीका समाप्ता ।

(दशम अध्याय समाप्त)

टीकाकर्त्ता की प्रशस्ति

स्वस्ति श्री वीरनिर्वाण २५१२ मासानां मासे आश्विनीमासे शुक्लपक्षे विजयादशम्यां रविवासरे, श्रवण नक्षत्रे अभिजितशुभमुहुर्ते वृश्चिक नामा स्थिर लग्ने कर्नाटक राज्ये शेडवाल नगरस्य रत्नत्रयपुर्यां श्री ऋषभादि चतुर्विंश तीर्थंकर जिनबिंब समीपे टीकाकर्त्ता श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कार गणे कुन्द कुन्दाचार्य परंपरायां श्री आचार्य आदिसागर अंकली, तत्शिष्य समाधि सम्राट, आध्यात्म योगी तीर्थ क्षेत्र भक्ति वंदना शिरोमणि, चतुर्नुयोगज्ञाता, महामंत्र वादी आचार्य महावीर कीर्ति तत् शिष्य, सर्वागमज्ञ, यंत्र मंत्र तंत्र शास्त्र विशेषज्ञ गणधराचार्य कुन्थुसागरेण भैरव पद्मावती कल्पस्य राष्ट्र भाषायां मया सर्व जनहितार्थं विजया टीका कृता। इति।

मंत्र :—"क्षिप स्वाहा।"

क्षि प, स्वा, हा, इन चार मंत्राक्षरों से घड़े में भरे हुए पानी को मंत्रित करके सर्प दंशीत मनुष्य के सिर से पैर तक लगाने से जहर (विष) मुक्त हो जाता है।

ग्रंथमाला समिति को प्रकाशन खर्चों में आर्थिक सहयोग प्रदान करने वाले महानुभावों की सूची निम्न प्रकार है

१०,०००)	श्री ज्ञानचन्दजी जैन एवं परिवारजन	[बम्बई]
५,०००)	,, प्रकाशचन्दजी छाबड़ा	,,
३,०००)	,, कुंदकुंदकुमारजी मोहिनीचन्द्रजी जवेरी	,,
३,०००)	,, महावीरकुमारजी राजेन्द्रकुमारजी सेठ	,,
३,०००)	,, कीर्तिकुमारजी ज्ञानचन्दजी भिण्डा	,,
३,०००)	,, अशोककुमारजी धर्मचन्दजी भिण्डा	,,
३,०००)	,, राजेन्द्रकुमारजी चान्दमलजी दोशी	,,
३,०००)	,, अशोककुमारजी बसंतलालजी गांधी	,,
३,०००)	,, अजितकुमारजी मोतीलालजी भिण्ड़ा	,,
३,०००)	,, हेमन्तकुमारजी सुरजमलजी सेठ	,,
३,०००)	,, राजकुमारजी सेठी	[डीमापुर]
३,०००)	,, सुरेशकुमारजी संघवी	[बांसवाड़ा]
२,१००)	,, पवनकुमारजी जैन	[बम्बई]
१,५००)	श्रीमती सीताबाई सरावगी	,,
१,१००)	श्री धनपालजी कन्हैयालालजी डोटिया	[बम्बई]
१,१००)	,, निर्भयकुमारजी माणेकलालजी दावड़ा	,,
१,१००)	डॉ. सुरेन्द्रकुमारजी सुजानमलजी कोटड़िया	,,
१,०००)	श्रीमती राधाबाई मेवालालजी	,,

श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति जयपुर (राजस्थान) उपरोक्त सभी महानुभावों का आभार प्रकट कर बहुत-बहुत धन्यवाद देती है और आशा करती है कि समिति द्वारा भविष्य में जब-जब भी इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण अद्भुत अलभ्य ग्रंथों का प्रकाशन होगा तब आप सभी का सहयोग प्राप्त होता रहेगा ।

यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र
शास्त्रानुकूल ही है

बाल ब्र० श्री १०८ मुनि
दया सागर जी महाराज

आज हम एक ऐसा प्रसंग रखते है—जिसकी विशेष चर्चा है। प्रसंग है मंत्र, यंत्र, तंत्र का बहुत से व्यक्तियों की जिज्ञासा है कि मंत्र, यंत्र, तंत्र जैन धर्मानुकुल है या नहीं। हमारी मान्यता है कि जैन शास्त्रों के अनुकूल ही है।

मंत्रों की शक्ति द्वारा ही हम पत्थर से बनी प्रतिमा को भगवान मानते है। प्रतिमा की पूजा अर्चना करके लाभ मानते है। प्रतिमा कुछ समय पहले एक साधारण सा पत्थर था मगर आज हम उस पत्थर को पत्थर नहीं कहते, उसको भगवान कहते है। मगर पत्थर से भगवान कैसे बने किसके माध्यम से बने ? कारीगर की कला से पत्थर को मूर्ति के रूप में निर्माण तो हो गया एवं पंचकल्याण के माध्यम से भाव मूर्ति व अन्तरंग मूर्ति का निर्माण हुआ। यहाँ ध्यान देने की बात है कि पंचकल्याण में क्या-क्या क्रिया होती है।

मंत्रों के द्वारा गर्भ क्रिया मंत्रों के द्वारा ही जन्म क्रिया एवं इसी प्रकार दीक्षा मनाई जाती है २४ मूल गुणों को मंत्रों के द्वारा आरोपित किया जाता है। उस द्रव्य मूर्ति में मंत्रों के द्वारा ही ज्ञान रूपी बिभूति गुणों को आरोपित किये जाते है। इसके उपरान्त में मोक्ष कल्याण के मंत्र दिये जाते है। मोक्ष कल्याण के मंत्रों के लिए नग्न दिगम्बर की आवश्यकता होती है कहीं-कहीं तो मुनिराज सुलभ हो जाते है—यदि मुनिराज नहीं मिलते है तो फिर पंडित द्वारा (अपने कपड़े उतार कर) ही उस मूर्ति को द्रव्य भगवान से भाव भगवान बनाने के लिए कानों में फूंक देकर मंत्रों का उच्चारण किया जाता है। इन मंत्रों के बाद ही वह पत्थर भगवान के रूप में बदल जाता है। उसे भगवान कहा जाता है। यह शक्ति किस की है ? यह मंत्रों की ही शक्ति है कि पत्थर को भगवान बना देते है। फिर अन्य जगह मंत्र क्यों नहीं काम करेंगे। मंत्र अर्थात—मन माने मन त्र माने त्रियोग। मन वचन काय की शुद्धि से मंत्रों का उच्चारण किया जाए तो समस्त कार्यों की सिद्धि होती है। बिजाअक्षरों को ही मंत्र कहते है। अपने शास्त्रों में अनादि अनन्त मूल महामंत्र पंचणवकार है। उसी माध्यम से सभी मंत्रों की उत्पत्ति हुई है।

यंत्र क्या है ? यंत्र भी जैन शासन के मूल शास्त्रों से है। विनायक यंत्र, विजयपता का यंत्र, पंच परमेष्ठी यन्त्र-आदि यंत्र ही होते है। यंत्र भी एक धर्म का ही रूप है। यन्त्र के बिना पंचकल्याण पूजा विधान भी अपूर्ण माने जाते है।

तंत्र विद्या भी एक जैन आगम का ही अंग है। किसी प्रकार का रोग आदि हो जाने पर नजर लग जाने पर मन्त्र विद्या का प्रयोग किया जाता है। रोगी के सामने मिर्च नमक लेकर या भगवान का अभिषेक किया हुआ जल लगाते हैं-- यह तन्त्र विद्या का ही अंग है। अभिषेक का गधोदक लेने का व लगाने का विधान जैन आगम में कुछ शास्त्रों में पाया जाता है। औषिध शास्त्र भी तंत्र विद्या में आता है। यदि आप इसका विरोध करते है तो फिर दवा आदि बन्द करनी होगी। दवा आदि बन्द करने से हमारे अन्दर रोग आदि की व्याधियाँ बढ़ती जावेगी। रोग की व्याधियाँ बढ़ जाने से धर्म ध्यान नहीं हो सकेगा। धर्म ध्यान नहीं होने का परिणाम दुर्गति की ओर है। एक जगह कहा है। कि—

धर्म करत संसार सुख,
धर्म करत निर्बाण।
धर्म पंथ साधे बिना,
नर त्रियंच समान।

धर्म ध्यान के अनेक उपाय है— मंत्र, यंत्र, तंत्र जाप पाठ ध्यान स्वाध्याय संयम तप त्याग दान आदि अनेक प्रकार से धर्म ध्यान किया जा सकता है। लेकिन धर्म ध्यान केवल आत्म कल्याण के लिये ही होना चाहिये न कि ख्याति पूजा लाभ आदि के लिये।

मंत्र, यंत्र, तंत्र को जो नहीं मानते वह हमारे ख्याल से जैन शास्त्रो को नहीं मानते। जो यंत्र इत्यादि करने वाले का विरोध करते है वे जैन आगम का ही विरोध करते है। जो जेन आगम का विरोध करता है वह जैन नहीं हो सकता। जो जैन शास्त्रों को नहीं मानता उसने अभी सम्यग्दर्शन को नहीं प्राप्त किया। ऐसे व्यक्ति का कल्याण अभी दूर है। विरोध करने वाले इस घोर संसार में ही गोते लगाने का पुरुषार्थ कर रहा है। हमारा भाव है कि ऐसे व्यक्ति को ऐसी बुद्धि प्राप्त हो कि वह किसी भी प्रकार से जैन शासन के मूल आगम शास्त्र पर अपनी आस्था जमा कर अपना कल्याण करे।

जो इसका विरोध कर रहे है उनके लिये ऐसा लगता है कि वे जिस डाल पर बैठे है -उसी को काट रहे है। जो यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र का विरोध करते है वे भी जिस डाल पर बैठे है—उसी डाल को काटने जैसा लगता है। ऐसे व्यक्तियों से हमारा यही कहना है कि अपने लिए शास्त्रों का अध्ययन करके संत समागम से पक्षपात रहित तत्व चर्चा करके जैन आगम के रहस्यों पर ध्यान दे एवं उन पर अपनी आस्था को मजबूत बना कर सम्यग्दर्शन प्राप्त करे, ताकि अनन्त संसार सागर को पार कर सके।

——०——